मीणा-इतिहास

[राजस्थान में मीणा, मेर, मेव आदि नामो से ज्ञात
मीणा जाति का ऐतिहासिक इतिवृत्त]

लेखक
रावत सारस्वत

प्रकाशक
भूथालाल नाढला
बस्सी (जिला जयपुर-राजस्थान)

प्रथम सस्करण
संवत् २०२५

मूल्य
बारह रुपए पचास पैसे
१२ ५०

मुद्रक
अजन्ता प्रिण्टर्स, जयपुर

प्राप्ति स्थान
१. भू थालाल नांढ़ला, प्रकाशक, वस्सी (जिला जयपुर)
२. चपालाल रांका एण्ड कम्पनी, धामाणी मार्केट, चौड़ा रास्ता, जयपुर
३. राजस्थान भासा प्रचार-सभा, डी २८२, मीरा मार्ग, बनीपार्क, जयपुर

विषय-क्रम

चित्र-सूची

एक सम्मति

मीणा जाति राजस्थान की आदिम जातियो मे से एक रही है। इनके हजारो वर्ष प्राचीन ऐतिहासिक चिन्हो के अवशेष समस्त प्रदेश मे यत्र-तत्र प्राप्त है। इसी तथ्य को स्वीकार करते हुए भारत सरकार ने इसे राजस्थान की अनुसूचित जनजातियो मे महत्वपूर्ण स्थान दिया है। यह प्रसन्नता का विषय है कि सैकडो वर्षों से उपेक्षित और शोषित मीणा जाति स्वातन्त्र्योत्तर जागरण वेला मे नवचेतन प्राप्त कर प्रगति-पथ पर अग्रसर हो रही है। इस जाति के प्रबुद्ध लोग जनतान्त्रिक सगठनो के माध्यम से सामाजिक सुधार कार्यो के साथ ही सास्कृतिक अभ्युत्थान के लिए भी प्रयत्नशील हैं। प्रस्तुत इतिहास इसी चेतना का सुफल है। मै आशा करता हू कि इस इतिहास के रूप मे विद्वान लेखक ने इस महान जाति की जिन गौरवपूर्ण परम्पराओ और भारतीय इतिहास-क्रम मे जोडी हुई जिन महत्वपूर्ण कडियो का उल्लेख किया है उन्हे पढकर इस जाति के प्रबुद्ध मानस को तो प्रेरणा और नवोत्साह प्राप्त होगा ही, अपितु भारतीय इतिहास के इस अधकारयुगीन काल की लोकमूलक ऐतिहासिक सामग्री की जानकारी प्राप्त कर इतिहास के प्रेमियो को भी आनद प्राप्त होगा।

मै चाहता हू कि मीणा जाति के ही नही देश के हर शिक्षित व्यक्ति को इस उपयोगी पुस्तक का स्वागत करना चाहिए और प्रदेश तथा देश की अभ्युन्नति मे इसे एक स्तुत्य योगदान के रूप मे स्वीकार करना चाहिए। इस सुन्दर साज-सज्जायुक्त प्रकाशन के लिए मैं पुस्तक के विद्वान लेखक श्री रावत सारस्वत तथा प्रकाशक श्री भूथालाल नाढला को बधाई देता हू।

नाथूराम मिरधा

१९-८-६८

अध्यक्ष

राजस्थान प्रदेश काग्रेस, जयपुर

दो शब्द

जयपुर

२०—८—६८

राजस्थान प्रदेश की महत्वपूर्ण अनुसूचित जन जाति के रूप मे मीणो को मान्यता देकर भारत सरकार ने इस जाति की महत्ता को स्वीकार किया है। फलत. राष्ट्रीय योजनाओ मे इस जाति के सर्वतोमुखी अभ्युत्थान के लिए भी पर्याप्त प्रावधान रखा गया है। मुझे प्रसन्नता है कि मीणा जाति के प्रस्तुत इतिहास के माध्यम से विद्वान लेखक ने मीणो के गौरवपूर्ण अतीत की एक सुन्दर झाकी प्रस्तुत की है। आशा है इस पुराख्यान को पढ कर मीणा जाति की वर्तमान और भावी पीढिया प्रेरणा प्राप्त करेंगी और राष्ट्रीय आयोजनो मे अधिकाधिक सहयोग देने के लिए आगे आयेंगी।

इतिहास-विद्या अनादिकाल से भारतीय समाज मे समादृत रही है। वडे—बूढो के मुख से पूर्वजो के वृत्तान्त तथा पुराण—कथाओ का श्रवण कर हमारी पीढिया इस ज्ञान को धरोहर के रूप मे अपनी सतानो को सौपती आई है। लोक-मुख से प्रवाहित इस ज्ञान—राशि का सार-सचय हमारी बहुमूल्य सास्कृतिक थाती है, अत आज के सास्कृतिक नवोन्मेष मे मीणा जाति के इस इतिहाससम्मत लौकिक इतिवृत्त का सकलन और प्रस्तुतीकरण सर्वथा अभिनदनीय है। मै इस ग्रथ के विद्वान लेखक श्री रावत सारस्वत तथा प्रकाशक श्री झूथालाल नाढला दोनो को ऐसे सग्रहणीय प्रकाशन के लिए साधुवाद देता हूँ।

मोहनलाल सुखाड़िया
मुख्य मत्री, राजस्थान राज्य

प्रकाशकीय

जिस जाति और समाज मे मनुष्य जन्म लेता है। उसकी भलाई के लिए प्रयत्न करना हर व्यक्ति का कर्तव्य है। मेरा ध्यान जब मेरी जाति और मेरे समाज की दुर्दशा की ओर गया तो मैंने भी जातीय उत्थान के कार्यों मे रुचि लेनी प्रारभ की । सन् १९३४ से ही मैं सामाजिक सभा-सम्मेलनो मे पूरी रुचि लेता रहा हूँ । अनेक महत्वपूर्ण सम्मेलन भी मैंने साथियो के सहयोग से आयोजित किए हैं। इन आयोजनो के प्रसग मे मुझे मीणा जाति के अनेक परम्परागत स्थानो को देखने और समाज के बडे-बूढो के मुख से पुरखाओ के यश–कार्यों की जानकारी प्राप्त करने का सौभाग्य मिला। इसलिए मेरे मन मे यह स्वाभाविक इच्छा हुई कि इस जाति को जागृत करने के लिए इसके अतीत गौरव का विवरण प्रस्तुत किया जाना चाहिए। मुनि मगनसागर ने इस दिशा मे जो प्रयत्न किए थे उनके सुपरिणाम मुझे समाज के शिक्षित वर्ग मे दिखाई दे रहे थे। इससे प्रेरित होकर कुछ साथियो का सहयोग प्राप्त कर सन् १९६२ मे राजस्थान मीणा इतिहास परिषद् की स्थापना को गई जिसकी अध्यक्षता का भार भी मुझे सौंपा गया।

मैंने व्यक्तिशः प्रदेश मे तथा उससे बाहर भी व्यापक दौरे किए तथा मीणो के इतिहास सबधी विस्तृत जानकारी एकत्रित की और प्रसिद्ध स्थानो तथा सम्मेलनो के चित्र भी लिए। मीणो के जागाओ से वश-वृक्ष प्राप्त किए गए जिसमे श्री धन्नालाल जागा से सराहनीय सहयोग मिला। इस बीच समय-समय पर सम्मेलनो द्वारा समस्त जाति को इन प्रयत्नो से अवगत करवाया गया। इस सारे कार्य मे बडा श्रम तथा साधन

व्यय किए गए। वर्षों के परिश्रम तथा हजारो के व्यय से सकलित इस ढेर सारी सामग्री की जाच-पडताल करके इतिहास मे उल्लेखनीय बातो को चुनने और अन्य प्रामाणिक सदर्भो का सहारा लेकर उसे एक वैज्ञानिक इतिहास के रूप मे प्रस्तुत करने का कार्य ऐसा कठिन प्रतीत हुआ जिसके लिए हमारे साथियो मे से कोई उपयुक्त नही था। कुछ विद्वान मित्रो से सपर्क साधने के प्रयत्न किए पर पूरी सफलता प्राप्त नही हुई। फिर भी उन मित्रो का आभार मानना मैं अपना कर्तव्य समझता हू।

ये प्रयत्न चल ही रहे थे कि कैप्टेन छुट्टनलाल के निवास पर उनके मित्र कुवर श्री चन्द्रसिंह से चर्चा हुई और उन्होने अपने मित्र श्री रावत सारस्वत से मेरा परिचय कराया। इसके आगे कुछ कहना आवश्यक नही है क्योकि इन्ही के द्वारा लिखा हुआ यह इतिहास आपके सम्मुख है।

इस कार्य मे मुझे जिन–जिन साथियो से विशिष्ट सहयोग मिला है उन्हे धन्यवाद देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। सर्वश्री चदालाल व्याडवाळ, भैरूलाल काळावादळ (भू० पू० एम० एल० ए०), मूळचन्द (भू० पू० एम० एल० ए०), लक्ष्मणप्रसाद पटेल, रामसहाय सीहरा (प्रधान), छाजूराम गोमलाड्, नन्दलाल कोढीवाळ, कैप्टेन छुट्टनलाल (एम० एल० ए०), किशनलाल वर्मा (एम० एल० ए०), लक्ष्मीनारायण झरवाळ, हरिकिशन (भू० पू० एम० एल० ए०), गगासिह पडिहार (भू० पू० एम० एल० ए०), देवनारायण सरपच, अरिमालसिंह छापोला, रामप्रताप सूसावत तथा सोहनलाल पटेल आदि ने समय–समय पर सहयोग देकर मुझे अनुग्रहीत किया है।

इन व्यक्तियो के अतिरिक्त सामूहिक सहयोग भी प्राप्त हुआ हैं। जिन लोगो ने इतिहास की पुस्तकें क्रय करने के लिए अग्रिम राशिया देकर सहयोग दिया है वे निम्न गोत्र हैं जो टूटाड मे

लाखो की सख्या मे बसते है—नाढला, सीहरा, ब्यावरणा, ब्याडवाळ, गोठवाळ, बारवाळ, जेफ, सीगल, माडचा, डोबवाळ, वेफळावत, सत्तावन, देवडवाळ, गुरणावुत, गोमलाड्, महर, छापोला, सूसावुत, खोडा, चादा, बैनाडा, चिरावडचा, मूगोरणा, बुमरणावत, ढूसर, मादड, सुदरडा, सेवरिया, सवाळ तथा बासखोग्रा।

भाई गुलाबचदजी गोठवाल के प्रति कृतज्ञता–ज्ञापन करना ही काफी नही होगा। उन्होने हर समय मुझे अपनी नेक सलाह देकर, यात्राओ मे साथ चल कर एव अपने जातीय प्रेम के कारण एकत्रित विविध प्रकार की सामग्री देकर मुझे पूरा सहयोग दिया है।

राजस्थान राज्य के मुख्य मत्री माननीय श्री मोहनलालजी सुखाडिया तथा राजस्थान प्रदेश काग्रेस के अध्यक्ष माननीय श्री नाथू-रामजी मिरधा ने पुस्तक के लिए 'दो शब्द' तथा 'सम्मति' लिखने की जो कृपा की है उसके लिए मै उक्त दोनो महानुभावो का हृदय से आभारी हूँ।

अत मे मैं जाति के उन सभी भाइयो को अपना हार्दिक धन्यवाद देता हू जिन्होने मुझे अनेक प्रकार का सहयोग दिया और जिनका नामोल्लेख स्थानाभाव के कारण मैं नही कर पा रहा हू। मैं आशा करता हू कि जाति के पढे–लिखे लोग इस इतिहास की पुस्तक का स्वागत करेंगे और इसमे जो त्रुटिया रह गई हो उनके प्रति हमारा ध्यान आकर्षित करेंगे तथा अन्य विशिष्ट जानकारिया भी देंगे ताकि आगे के सस्करणो मे उन्हे सम्मिलित किया जा सके।

—झूथालाल नाढ़ला
बस्सी (जिजा जयपुर)

आमुख

मीणो का प्रस्तुत इतिहास एक सयोग की ही वात है। मेरे आदरणीय मित्र कुवर चद्रसिंह ने एक दिन मीणो के ऐतिहासिक विवरण के सकलन मे जुटे हुए श्री भूथालाल नाढला से परिचय करवाया और इतिहास लिखाने की उनकी इच्छा का उल्लेख किया। मैं इतिहासकार नही हू, फिर भी मुझे इस कार्य मे अनायास रुचि प्रतीत हुई और मैंने हा भर ली। श्री भूथालाल ने मौखिक तथा लिखित रूप से प्राप्त होने वाली विविध प्रकार की सामग्री एकत्रित कर रखी थी और वही-भाटो से वश–वृक्षो की प्रतिलिपिया भी प्राप्त कर ली थी। उक्त सारी सामग्री लेकर वे मेरे पास आए। सामग्री को मोटे तौर पर देखने के वाद उसके आधार पर एक स्थूल जानकारी मात्र दे सकने की सभावना ही मुझे प्रतीत हुई। अत, मेरी कल्पना एक ऐतिहासिक कथानक प्रस्तुत करने भर की थी।

समय बीतता गया और श्री भूथालाल अपने अथक परिश्रम और लगन से इतिहास–लेखन का कार्य प्रारभ करने के लिए आवश्यक साधन जुटाने मे जुटे रहे। यह उनकी नि स्वार्थ भावना और दृढ लगन का ही परिणाम था कि वे साधनो को जुटा पाए। काम प्रारभ करते समग्र इतिहास की विषय–सूची तैयार करने पर प्रामाणिक सामग्री का नितान्त अभाव दृष्टिगोचर हुआ। राजस्थान के इतिहासकारो मे कर्नल टॉड को छोड कर सभी ने मीणो के इतिहास पर या तो कुछ लिखा ही नही और यदि कुछ लिखा भी तो वह अति नगण्य और सहानुभूति से रहित ही नही पूर्वाग्रहो से युक्त होकर लिखा है। मीणो को उन्होने जगली, चोर धाडी, शूद्र और अशिक्षित तथा असस्कृत जाति घोषित कर

अपने कर्तव्य को इतिश्री समझली है। ऐसी स्थिति मे उनके उज्ज्वल अतीत की पुष्टि किन आधारो पर की जा सकती थी ?

इसी उधेड-बुन मे मैंने कुछ विद्वान मित्रो तथा प्रसिद्ध इतिहास-प्रेमियो से चर्चा प्रारभ की । गजेटियर विभाग के विद्वान इतिहासज्ञ श्री सिह से बातचीत के दौरान उन्होने इण्डियन एण्टीक्वेरी मे प्रकाशित कुछ सामग्री की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया । एण्टीक्वेरी की कई जिल्दें उलटने पर श्री सैलेटोर का एक पर्याप्त लबा निबध मिला जिसमे उन्होने मीणो की विस्तारपूर्वक चर्चा की है। इसी लेख से मुझे प्रस्तुत इतिहास का मार्गदर्शन मिला और वह मूलसूत्र मेरे हस्तगत हुआ जिसके सहारे मैं आगे बढता गया। इस लेख से मेरे समूचे दृष्टिकोण मे एक नाटकीय परिवर्तन आ गया और मैंने मीणो का एक यथासभव वैज्ञानिक इतिहास प्रस्तुत करने का निश्चय किया। आर्क्योलोजिकल सर्वे आफ इण्डिया, एपीग्राफिया इण्डिका, कैम्ब्रिजहिस्ट्री, इलियट डाउसन आदि अनेक सुप्रसिद्ध ग्र थो के पृष्ठो मे मुझे विविध प्रकार की उपयोगी जानकारी मिली । श्री भूथालाल द्वारा सग्रहीत भण्डार का भी यथाशक्य उपयोग किया गया।

इसी बीच मीणो के प्राचीन ऐतिहासिक स्थलो को देखना आवश्यक समझ मैंने कुछ उत्साही समाज-सेवको के साथ खोह माची, आमेर, भाडारेज, नई, दौसा, राजोरगढ, नरैठ, बयारा, नाराणी, माचेडी आदि स्थानो का भ्रमण किया । इस यात्रा ने मुझे मीणो के बहुसख्यक थोको और उनकी परपरागत भूमि तथा उनके रहन-सहन आदि की जानकारी दी। इस यात्रा मे उन सुप्रसिद्ध स्थानो के चित्र भी लिए गए जो इस पुस्तक मे यथास्थान प्रकाशित किए गए है। इतिहास सबधी मौखिक इतिवृत्त की सत्यता जानने के लिए मेरे आग्रह पर श्री भूथालाल ने मीणो के जागाओं, डूमो तथा बडे-बूढो की कई गोष्ठिया भी आमन्त्रित

को जिनसे विस्तारपूर्वक चर्चा कर मैने परम्परागत इतिहास की वाते लिपिवद्धी की

व्यक्तिगत रूप से मैने जोधपुर, अजमेर, उदयपुर आदि स्थानो की यात्राओ मे भी मीणो से सबधित उपयोगी जानकारी का सकलन किया ।

मीणा–समाज के रत्न स्वर्गीय मुनि मगनसागर द्वारा लिखित 'मीनपुराण भूमिका' तथा 'मीनपुराण' नामक ग्रथो से भी मुझे मीणो के इतिहास की कई उपयोगी बातें ज्ञात हुई । मीणा समाज मे यही सर्वप्रथम विद्वान हुए हैं जिन्होने मीणो का इतिहास प्रस्तुत करने की चेष्टा की। मुनिश्री गोठवाल ज्ञाति के मीणा थे और उन्होंने जैन धर्म मे दीक्षित होकर सस्कृत, प्राकृत आदि के वाङ्मय का अध्ययन किया था जिससे भारतीय सस्कृत साहित्य का उनको विस्तृत ज्ञान था। 'मीनपुराण' नामक स्वतत्र पुराण की रचना उनके इस ज्ञान की ही परिचायक है । खेद है कि ऐसे विद्वान को इतिहास विद्या के आधुनिक ज्ञाता का सहयोग नही मिल पाया अन्यथा वे मीणा–समाज का वहुत वडा उपकार करने मे समर्थ होते ।

समय तथा साधनो के अभाव मे मीणो का यह ऐतिहासिक इतिवृत्त मात्र प्रस्तुत करके सतोष करना पड रहा है । इस महान जाति का विस्तृत और प्रामाणिक इतिहास तैयार करने के लिए इनके परम्परागत स्थानो का भ्रमण करके प्राचीन स्मारको को देखने तथा लोक-मुख पर चले आ रहे प्रवादो आदि के सग्रह करने की वडी आवश्यकता है। राजस्थान तथा वाहर के ऐसे सभी स्थानो को देखने के लिए पर्याप्त समय और साधन चाहिए। ऐसा होने पर ही इस जाति का वृहत इतिहास प्रस्तुत किया जा सकेगा। यह प्रसन्नता का विषय है कि मीणा–समाज के सुपठित लोग इस कार्य की ओर सचेत हैं और

विशषकर श्री भूथालाल की लगन और सामर्थ्य से यह कार्य सम्पन्न होगा, ऐसा मेरा विश्वास है ।

अत मे पुस्तक के प्रस्तुतीकरण मे जिन मित्रो तथा विद्वानो से मुझे सहयोग मिला है उन्हे धन्यवाद देना मैं अपना कर्तव्य समझता हू । सर्वश्री रामवल्लभ सोमाणी, सीताराम लाळस, सौभागसिंह शेखावत, कृष्णचन्द्र शास्त्री, वृजमोहन जावलिया, गिरीश शर्मा, कानसिंह रावत अमरीकसिंह तथा कु वर सग्रामसिंह शेखावत ने मुझे समय-समय पर उपयोगी सुझाव, जानकारी तथा सामग्री देकर अनुग्रहीत किया है । प्रिय मुरलीधर शर्मा ने अनेक कष्ट सह कर मेरे साथ यात्रायें की और सभी स्थानो के फोटो खीच कर मुझे अपना स्नेह दिया ।

जयपुर स्थित महाराजा पब्लिक लाइब्रेरी के विद्वान पुस्त-काध्यक्ष श्री दीपसिंह तथा श्री राव का सहयोग भी मेरे लिए बडा सहायक रहा है । मीणा-समाज के उत्साही और नि स्वार्थसेवी महानुभावो-सर्वश्री गुलाबचद गोठवाळ, रामसहाय सीहरा, अरिसालसिह छापोला, चदालाल ब्याड़वाळ, लक्ष्मीनारायण झरवाळ, किशनलाल वर्मा, आदि ने जो रुचि प्रदर्शित की उससे मुझे प्रेरणा मिली है । समाज के अन्य अनेक साथियो ने भी मुझसे मिल कर मेरे कार्य की सराहना की जिसके लिए मैं उन सबका आभारी हूँ । अत मे राजस्थान राज्य के मुख्य मत्री माननीय श्री मोहनलाल सुखाडिया तथा राजस्थान प्रदेश काग्रेस के अध्यक्ष माननीय श्री नाथूराम मिरधा के प्रति भी मै कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूँ जिन्होने पुस्तक के लिए 'दो शब्द' तथा 'सम्मति' लिखने की कृपा की ।

जयपुर
ऋषि पञ्चमी
स० २०२५ वि०

—रावत सारस्वत

समर्पण

सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर समस्त भारतीय इतिहास
मे अपना अस्तिव प्रमाणित करने वाली, सघ तथा
गणबद्ध प्रणाली द्वारा जनतान्त्रिक सिद्धातो मे
आस्था रखने वाली और सहस्राधिक वर्षो से
आक्रामक विदेशियो और राजपूतो के साथ
अपने अधिकारो के लिए अनवरत सघर्ष-
रत रहने वाली, निश्छल शौर्य,
उदारता और चारित्रिक दृढता
की धनी पर युगो तक शोषित
और पीडित मेर, मेव, मेद
आदि विविध नामो मे
विभक्त महान मीणा
जाति को समर्पित

—रावत सारस्वत

अध्याय १

मीणा जाति

मीना, मैना मीणा, मेणा, मैणा–आदि नामो से सुप्रसिद्ध मीणा जाति का पूर्वकालीन इतिहास उतने ही अंधकार मे है जितना अन्य आदिवासी जातियो का हैं। यह चर्चा करने से पहिले कि इस जाति के विषय मे विभिन्न इतिहासकारो तथा नृवैज्ञानिको की क्या धारणाये हैं, मीना (मीणा) शब्द की व्युत्पत्ति पर चर्चा करना समीचीन होगा।

जहा राजस्थान के विभिन्न भागो मे इसे मीणा, मेणा, मैणा नामो से पुकारा जाता है, वही राजस्थान के बाहर यह 'मीना' कह कर पुकारी जाती है। मीणा जाति के अनेक सुपठित व्यक्तियो की यह धारणा है कि इस जाति का सम्बन्ध भगवान के मत्स्यावतार से है। इन्ही व्यक्तियो मे सर्वाधिक उल्लेखनीय नाम है श्री मुनि मगनसागर का जिन्होने 'मीन पुराण' नामक एक स्वतत्र पुराण की रचना कर यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि मीणा जाति मत्स्यावतार से ही सम्बन्ध रखती है। मुनिजी ने 'मीन' क्षत्रियो की एक पौराणिक जाति की भी कल्पना की है।[1] मुनिजी ने 'अभिधान चिन्तामणि कोष', 'शब्दस्तोम-महानिधि' तथा 'सिद्धान्त कौमुदी' आदि कोष-व्याकरण के ग्रथो से 'मीन' शब्द की व्याख्या उद्धृत करते हुए मीन' को दुष्टो का सहार करने वाली जाति बताया है।[2] मुनिजी द्वारा प्रमाणित 'मीन' शब्द के दुष्टसहारक

---

१ मीन पुराण भूमिका पृ० ५.

२. वही पृ० ११.

अर्थों को मान भी लिया जाए तो उसका 'मीणा' जाति से क्या सम्बन्ध होता है, यह देखना होगा। 'मीन' का प्रचलित शाब्दिक अर्थ 'मछली' के रूप मे ही ग्रहण किया जाता है और भगवान के मत्स्यावतार से सबध जोडने वाले व्यक्ति भी इसे इसी ही अर्थ मे स्वीकार करते है। चू कि 'मीना' जाति राजस्थान मे 'मीणा' कह कर पुकारी जाती है, अत यह भी देखना होगा कि क्या 'मीन' का राजस्थानी रूपातर 'मीण' हो सकता हैं। नकार का णकार मे परिवर्तन राजस्थानी के ध्वनि-परिवर्तन की सीमा मे आता तो है, पर 'मीन' शब्द कही भी 'मीण' नही उच्चरित होता। 'जळ बिन मीन पियासी', 'मीन मेख' आदि लोकप्रचलित पद और मुहावरे यह सिद्ध करते हैं कि 'मीन' शब्द कभी भी 'मीण' कह कर नही उच्चारित किया गया। ऐसी स्थिति मे यदि 'मीना' का सवध 'मीन' से मान भी लिया जाय तो 'मीणा' की व्युत्पत्ति फिर भी पहेली ही बनी रहेगी। लेकिन अन्य किसी पुष्ट प्रमाण के अभाव मे इसी मान्यता पर आगे वढने के अतिरिक्त कोई उपाय नही है।

सवसे पहिले मत्स्यावतार से उद्गम मानने की धारणा की परीक्षा करेंगे। मत्स्यावतार की कथा का साराश इस प्रकार है, जो मत्स्यपुराण के आधार पर ही महाभारत मे भी वर्णित है महाभारत के वन पर्व मे मार्कण्डेय ऋषि ने राजा युधिष्ठिर को वैवस्वत मनु का उपाख्यान सुनाते समय इस कथा को कहा है—

वदरिकाश्रम मे घोर तप करते समय ववस्वत मनु को एक बार चीरिणी नदी मे स्नान करने के उपरात एक छोटी सी मछली ने आकर निवेदन किया—भगवन्, ये वडे-बडे मच्छ मुझे खा जायेंगे। कृपया इनसे मेरी रक्षा कीजिए। मै कभी आपके इस उपकार का वदला चुकाऊ गी। मछली के इस निवेदन पर मनु को दया आगई और उन्होने चन्द्रमा के समान सफेद रग वाले एक घडे मे उसे डाल दिया। मनु की देख-रेख मे मछली वडी होने लगी। वे उसे पुत्रवत् स्नेह से पालने लगे। वडी होने

पर मछली का घडे मे रहना कठिन हो गया। उसने मनु से फिर निवेदन किया कि वे उसे किसी बडी जगह मे रखने को कृपा करें। इस पर मनु ने उसे दो योजन लम्बे तथा एक योजन चौडे एक जलाशय मे रख दिया। समय पाकर मछली एक बडा भारी मच्छ बन गई। उसने फिर मनु से प्रार्थना की कि उसे जलाशय मे हिलने-डुलने मे भी कठिनाई होती है, अत समुद्र की पत्नी गगा मे छोड दें। मनु ने वैसा ही किया। पर कुछ ही दिनो बाद उसका गगा मे रहना भी कठिन हो गया। उसने फिर मनु से कहा कि नदी मे उसका स्वच्छदता से विचरण करना भी कठिन हो रहा है, अत उसे समुद्र मे डाल दिया जाए। मनु ने उसे गगा से निकाल कर समुद्र मे डाल दिया। मनु के हाथो मे वह मच्छ इतना हल्का हो गया कि मनु उसे आसानो से उठा सके। उसका स्पर्श और उसकी गध भी बडी सुखदायक प्रतीत हुई।

मनु ने ज्यो ही उस मच्छ को समुद्र मे छोडा, वह मुस्करा कर बोला कि आपने मेरा उपकार किया है। समय आने पर मै भी आपका उपकार करूगा। उसने बताया कि पृथ्वी और चराचर शीघ्र ही प्रलय होने से नष्ट होगे। सब पदार्थों के नाश होने का समय आगया है। आप एक दृढ नाव बनवालें तथा एक मजबूत रस्सा भी रखले। प्रलय के समय आप सप्त ऋषियो के साथ उस पर सवार हो जायें। पृथ्वी के सभी विभागो के बीज उस नाव मे रखकर उनकी रक्षा करें और मेरे आने की प्रतीक्षा करे। मेरे मस्तक पर एक सीग होगा, यही मेरी पहिचान होगी। याद रखिए, मेरी सहायता के बिना आप इस घोर विपत्ति से बच नही सकते। आप इसमे तनिक भी सदेह न करें। वैवस्वत मनु ने वैसा ही करने की हा भरी।

प्रलय होने पर मनु बीजसहित नाव लिए हुए मच्छ के आने को राह देखते रहे। पहाडो के समान लहरें उठ रही थी। मनु की चिता जानकर मच्छ आया। सीग वाले उस पर्वताकार मच्छ को आता देख कर

मनु वहुत प्रसन्न हुए। उन्होने अपनी नाव उसके सीग से बाध दी। मच्छ बडे वेगपूर्वक चलने लगा। वह दृश्य बडा भयानक था। पृथ्वी, आकाश तथा दिशायें कुछ भी नही दिखाई दे रहे थे। चारो ओर जल ही जल था। केवल मनु, सप्तर्षि, नाव और मच्छ–यही दीखते थे। इसके वाद पर्वतराज हिमाचल की सबसे ऊची चोटी दीख पडी। मच्छ बोला– आप झटपट नाव को इस शिखर से बाध दें। ऋषियो ने वैसा ही किया। आज भी उस शिखर को 'नौबधन' कहा जाता है।

इसके वाद मच्छ बोला—मै प्रजापति ब्रह्मा हूँ। तुम्हे बचाने के लिए ही मैंने मत्स्य रूप प्रकट किया है। मैं ब्रह्माण्ड मे सर्वश्रेष्ठ हूँ। मेरे सिवाय और कोई नही है। हे मनु, तुम देवता, मनुष्य, असुर आदि सब चराचर जीवो की सृष्टि करो। तुम्हे तपोबल से सृष्टि–रचना की प्रतिभा प्राप्त होगी। मेरी कृपा से तुम्हे न मोह होगा और न तुमसे भूल ही होगी। ऐसा कह कर मत्स्यरूपधारी भगवान ब्रह्मा अन्तर्धान होगए।[1]

उपर्युक्त कथा से स्पष्ट है कि भगवान के मत्स्यावतार का उद्देश्य वैवस्वत मनु तथा सप्तर्षियो की रक्षा करना ही था। मनुष्यतेर अवतारो से वशोत्पत्ति की वात समझ मे नही आ सकती। इसलिए यह मान्यता कि वराह, मत्स्य आदि अवतारो से कोई वश चला, सही नही कही जा सकती।

लोक-विश्वास के अनुसार मीणा जाति की उत्पत्ति की अन्य कई कल्पनायें भी मिलती हैं जिनमे से कुछ प्रमुख निम्न प्रकार हैं —

१ जव परशुराम ने क्षत्रियो का सहार करना प्रारम्भ किया तो अनेक क्षत्रिय-'मै ना'–मैं ना' (मैं नही) कहते हुए प्राणो की भिक्षा मागने लगे। वही लोग आज के मैणा–मीणा है।

---

१ हिन्दी महाभारत-इण्डियन प्रेस, (लल्लोप्रसाद पाण्डेय) पृ० १०७८-८१ (वन पर्व-१८७वा अध्याय)

२ मैणा—मयण शब्द का मूल मदन (कामदेव) है और शारीरिक सौन्दर्य के कारण ये 'मयणा' कहलाने लगे। इस मान्यता के अनुसार ये यादव प्रद्युम्न के वंशधर माने जाते हैं।

३ श्रीमद्भागवद् मे 'मीना एकादशैवतु' तथा 'मीना एकादशाक्षितिम्' [१] कह कर जिस वंश के राज्य करने का उल्लेख है वह आजकल की मीणा जाति का ही है।

४ अग्निपुराण मे कश्यपजी को ब्याही गई उषा की पाच कन्याओ मे से मीना, मैना नामक की संतान मीना—मैना कहलाई।

५. स्कंदपुराण मे भगवान शिव को मीन, मीननाथ आदि कहा है, अतः शिव के भक्त लोग मीना' कहलाये।

६ शिवपुराण मे दक्ष प्रजापति की ६७ कन्याओ मे से मैना, कन्या तथा कलावती का श्रापग्रस्त होकर मानवी रूप मे अवतरित होना वर्णित है। इनमे से 'मैना' राजा हिमालय की रानी बनी जिसके गर्भ से पार्वती तथा अन्य सौ पुत्र हुए, जो मैनाक कहलाये। इन्ही मैनाक राजकुमारो की संतति मैना—मीना कहलाई।

७. जैन मतावलम्बियो के अनुसार भगवान ऋषभदेव के एक सौ पुत्रो मे से एक का नाम मत्स्यदेव था। इसी के नाम से मत्स्यदेश और उसमे बसने वाली जाति 'मीना' कहलाई।

उपर्युक्त सभी तथा अन्य अनेक कल्पनाओ का उल्लेख मुनि मगनसागर लिखित 'मीनपुराण भूमिका' नामक पुस्तक मे किया गया है। ये धारणायें अधिकांशत परस्पर विरोधी होने के अतिरिक्त ऐतिहासिक अथवा अन्य संपुष्ट प्रमाणो से रहित होने के कारण निश्चयपूर्वक स्वीकार नही की जा सकती।

---

१. श्रीमद्भागवद् स्कंध १२—अध्याय—१

भारत के आदिवासियो का उल्लेख करते हुए इतिहासकारो ने आर्य और अनार्य दो प्रमुख समुदायो का ही वर्णन किया है। आर्यों के आदि ग्रथ 'ऋग्वेद' मे 'मत्स्य' नामक जाति का उल्लेख है। उक्त वर्णनो के अनुसार यह जाति आर्य समुदाय की ही जाति मानी गई है। ऋग्वेद मे कहा गया है कि मत्स्यो पर 'तुर्वस' नामक राजा ने आक्रमण किया था। भाष्यकार सायण ने भी वेदो मे मत्स्यो के पराक्रम की बात कही है। [1]

पर इसके विपरीत आर्यों से भी प्राचीन मानी जाने वाली सिंधु घाटी सभ्यता के सुप्रसिद्ध स्थान 'मोहे जो दडो' से प्राप्त चिन्हो से विद्वानो ने इस जाति का अस्तित्व प्रमाणित किया है। इसका अर्थ है कि यह जाति आर्येतर थी और आर्यों के आने से पहिले ही भारत मे बसती थी। 'मोहे जो दडो' से प्राप्त मीन–मछली–के चिन्ह से अकित अनेक मिट्टी की मुद्राओ से 'मीन' नामक जाति का पता लगाया गया है। 'मीनान' (मीनो मे से एक), 'मीनानिर' (मीना), 'मीनाल' (मीन का दिल), 'परव निल मीनार काल अूरिल' (देश मे मीनो का चतुर्थांश चन्द्रपरव है)–आदि उल्लेख फादर हेरास नामक प्राच्यविद्या-विशारद ने पढने के प्रयत्न किए हैं। फादर हेरास ने 'मोहे जो दडो' की लिपि मे से एक छद भी इस आशय का खोज निकाला है–

'सयुक्त देशो के लोगो के अनेक दृढ 'कुडग' जिनमे अत्यन्त कुशलतापूर्वक बनाए गए दुर्ग थे, 'कालोर' के 'मीनान' (लोगो) द्वारा अधिकृत किए गए'। [2] 'मोहे जो दडो' मे प्राप्त मीनाकित मुद्राओ का अध्ययन करने वाले एक अन्य विद्वान ने 'मीन' के निशान को एक जातीय निशान माना है। उनके अनुसार यह निशान पशुओ पर

---

१ ऋग्वेद–७–१८–६

२. न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी (१९३९–४०) जिल्द–२, पृ० ४५१

लगाया जाता था। आज भी सिंधी मे ऐसे निशानो को 'लख' कहते हैं। इसी विद्वान ने 'मीन' के निशान का अर्थ किसी मात्रा से सयुक्त 'म' अक्षर माना है। उनके कथनानुसार ब्राह्मी लिपि मे भी ठीक इससे उलटे निशान का अर्थ 'म' + मात्रा ही है। [1]

'तारीखे रेगिस्तान' नामक पुस्तक के लेखक रायचद हरिजन (पाकिस्तान) ने भी कौमो और जातियो के अपने-अपने दाग होने की बात लिखी है। (पृष्ठ ३२२)

स्व० डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने भी अपने प्रसिद्ध ग्रथ 'पाणिनीकालीन भारत' (पृष्ठ ४४५) मे लिखा है कि पाणिनी के समय (ई० पू० ४-५ शताब्दी) मे प्रत्येक सघ का अक और लक्षण होता था। लक्षण का तात्पर्य उस प्रतीक या चिन्ह से है जिसे सघ अपनी मुद्रा, सिक्के या ध्वज आदि के लिए चुन लेता था। पाणिनी ने स्वय उन लक्षणो का उल्लेख किया है जो पशुओ की पहिचान के लिए उनके कानो पर अकित किए जाते थे।

जातीय निशानो की पुष्टि 'फादर हेरास' द्वारा मोहे जो दडो' वासियो के धर्म की चर्चा करते हुए भी की गई है। विद्वान लेखक ने सुविख्यात पुरातत्वज्ञ 'मार्शल' कृत 'मोहे जो दडो एण्ड इण्डस सिविलिजेशन' नामक ग्रथ मे उल्लिखित एक तथ्य का वर्णन करते हुए लिखा है कि 'मोहे जो दडो' की मुद्राओ मे एक 'कोली' (मुर्गा) द्वारा एक हाथी को हराने का सकेत है। इस घटना के पीछे ऐतिहासिक तथ्य यही हो सकता है कि कोलियो की जाति ने हाथियो की जाति को हरा दिया। इससे सिद्ध होता है कि विभिन्न 'निशान' रखने वाली जातियाँ प्रायः आपस मे लडती रहती थी। इस प्रकार 'मीन' निशान धारण करने वाली

---

१ सिंधी बोली—सिराजुलहक-पृ० १२८

जाति जब एक बार हरा दी गई तो उनका चिन्ह 'मीन' मरा हुआ मान लिया गया और उसकी खाल चतुर्दिक् बिखरी हुई अकित को जाने लगी।[1]

इन उल्लेखो से यह धारणा बनाई जा सकती है कि जाति के प्रतीक रूप मे जिन्होने मीन' को प्रदर्शित किया वे 'मीना' कहलाये। धीरे-धीरे यही प्रथा शायद अधविश्वास मे बदल गई और लोग अपने आदि पुरुष की उत्पत्ति पेड-पौधो तथा जानवरो आदि से मानने लग गए। वेदो मे इस प्रकार के विश्वास का वर्णन आता है।[2]

अमेरिका मे रहने वाली आदिवासी अमेरिकन इण्डियन जाति भी इस प्रकार के गणचिन्हो (Totems) मे विश्वास रखती है।[3] प्रतीको को पवित्र मानने के जातीय विश्वास अमेरिकन इण्डियनो मे ही नही अपितु अन्य सभ्य कहलाने वाले देशो मे भी हैं–जैसे अमेरिकन बाज, ग्रेटब्रिटेन का सिह, इग्लैण्ड का गुलाब तथा सामन्ती परिवारो के शस्त्रास्त्र आदि। अफीका की जातिया ऐसे प्रतीको को अपने शरीर पर भी गुदवा लेती हैं।

पर, जहा तक 'मीन' को प्रतीक मानने वाली सभावित प्राचीन 'मत्स्य' तथा आधुनिक 'मीणा' जाति का प्रश्न है, इनमे मीन–मछली-कभी भी पवित्र या पूजा की वस्तु नही रही। विष्णु के मत्स्यावतार की बात भी मत्स्यो के प्रसग मे कही भी उल्लिखित नही मिलती। इसलिए यह सोचना कि मत्स्य, अज तथा वत्स आदि प्राचीन आर्य नामो का गणचिन्हो (Totems) से कोई सबध हो सकता है, भ्रातिपूर्ण

---

१ न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी (१९३९–४०) जि० १, पृ० ४७५

२ वेदिक माइथोलोजी–डा० मैकडोनैल–पृ० १५३

३. एनसाइक्लोपीडिया अमेरिका-जि० २६, पृ० ७१६

है।[1] केवल जानवरो आदि के नामो से ही यह प्रमाणित भी नही हो सकता कि प्राचीन आर्यों का विश्वास इस प्रकार की अलौकिक उत्पत्तियो मे था।[2]

विद्वानो के इन परस्पर विरोधी तर्कों के बावजूद 'मोंहे जो दडो' से प्राप्त मीनाकित मुद्राओ से यह धारणा बना लेना निरापद है कि 'मीन' प्रतीक को धारण करने वाली कोई जाति थी। यदि यह जाति अपने आपको 'मीना' कहती थी तो वैदिक साहित्य मे इसका उल्लेख न होना आश्चर्य उत्पन्न करता है। वैदिक साहित्य मे मत्स्यो का उल्लेख तो है पर मीनो का कोई उल्लेख नही है। यही नहो 'मीना' शब्द का लिखित प्रमाण हमे बहुत आगे जाकर परवर्ती राजपूत काल मे मिलता है। इससे पूर्व सभी जगह 'मत्स्य' शब्द का उल्लेख ही प्राप्त होता है। इसका कारण शायद यह हो सकता है कि सस्कृत मे 'मीन' शब्द की व्युत्पत्ति सदिग्ध मानी गई है,[3] जिसका आशय यह है कि सभवतः यह शब्द मूल रूप मे सस्कृत भाषा का न हो।[4] इसके विपरीत तमिल मे मछली को 'मीन' तथा कन्नड मे 'मीनु' कहा जाता है,।[5] सस्कृत मे 'मी' धातु से बने 'मीनाति' 'मीनीने' शब्दो का प्रयोग अवश्य हुआ है, जिनका अर्थ है-मारना, विध्वस करना, चोट पहुँचाना, घायल करना, आदि।[6]

---

१ एन्शेंट मिड इण्डियन क्षत्रिय ट्राइब्स-बी० सी० लॉ-पृ० ६५

२ ऐतरेय आरण्यक-पृ० २६-ए० बी० कीथ

√३ सस्कृत-इङ्गलिश डिक्शनेरी-मोनियर विलियम्स-पृ० ८१८

४ न्यू० इण्डियन एण्टीक्वेरी (१६३६-४०) जि० २, पृ० ३०६ (आर० एम० सेलेटोर)

५ वही ,, ,,

√६. सस्कृत-इङ्गलिश डिक्शनेरी-आप्टे पृ० ४३६, मो० विलियम्स-पृ० ८१८

तमिल से 'मीन' का सबध जुडने पर हम इस प्रसग को उस सिद्धात से जोड सकते हैं जिसके अनुसार सर्वप्रथम भारत मे बसने वाले लोग काले हब्शीनुमा थे, तत्पश्चात् उत्तर से आकर भारत मे सर्वत्र फैल जाने वाले प्रोटो-द्रविड (जो बाद मे तमिल· द्रविड–दमिल–तमिल कहलाये) तथा फिर आर्य आये।[१] 'मोहे जो दडो' की सस्कृति को आर्यों से पूर्व की तथा उसमे प्राप्त मीनाकित मुद्राओ के आधार पर 'मीना' जाति को भी तत्कालीन मान लेने पर 'मीन' शब्द की तमिल व्युत्पत्ति की बात समझ मे आ सकती है। यहा यह भी ध्यान देने योग्य है कि फादर हेरास ने 'मोहे जो दडो' को लिपि को प्रोटोद्रविड चित्रलिपि माना है। विशाल तमिल साम्राज्य मे बसने वाली अनेक जातियो मे प्राचीन कवियो द्वारा वर्णित विल्लवार (धनुर्धारी) तथा मीनवार (मछुए) जैसी आदिम जातिया भी थी। हम विल्लवार को आज के भील तथा मीनवार को आधुनिक मीणा मान सकते हैं।[२]

सिंधी विद्वान श्री मनु गिदवानी की भी यह धारणा है कि सिंध मे 'मुहाणो' कहकर पुकारे जाने वाले मछुए ही सभवतः मीणे कहलाए जाने लगे। सिंध के ऐतिहासिक स्थानो तथा वहा के आदिवासियो के जो उल्लेख प्राचीन मुस्लिम इतिहासकारो ने किए हैं उनकी व्याख्या करते हुए सी० रिट्टर नामक विद्वान ने 'मीनागर' (Minnagara) शब्द के प्रसग मे लिखा है कि 'मीन' शको का एक नाम है और इसके अनुसार राजपूताने की जगली मीणा जाति इन शको से ही निकली है, जो अब अपने पुराने वास-स्थान (सिन्ध) से तनिक पूर्व की ओर धकेल दी गई है।[3] इसी प्रकार 'वीना' नाम से

---

१ कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया-जि० ३-पृ० ५२१

२ ,, ,, जि० १-पृ० ५३६

३ हिस्ट्री ऑफ इण्डिया टोल्ड बाइ इट्स ओन हिस्टोरियन्स–इलियट एण्ड डाउसन-जि० १-पृ० ३६२

उल्लिखित आदिवासी जाति को भी 'मीना' ही माना गया है जो अब 'आडावळा' पर्वत श्रेणी के ऊपर की तरफ बसी हुई है।[१]

राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहासकार स्व० ओझा ने मीणो को क्षत्रपो के अनुयायियो मे मानने की सभावना प्रगट की है।[२] डा० मथुरालाल शर्मा ने मीणो को सीथियन या हूणो के वशज ही माना है।[३]

उपर्युक्त सभी तर्कों तथा प्रमाणो के होते हुए भी हम निश्चय-पूर्वक कहने की स्थिति मे नही है कि मीणो का वास्तविक उद्गम कहा से है और ये इस नाम से क्यो पुकारे जाने लगे। इतना ही नही यह एक अनोखा सादृश्य है कि इसी प्रकार की अन्य पहाडी, जगली या आदिवासी जातियो के नाम प्राय 'मकार' से प्रारम्भ होते हैं। राज-स्थान मे ही मेर, मेव, मेद आदि नाम इसी श्रेणी के हैं। इससे भी आगे बढ कर इन जातियो के बडे-बूढे अपने आपको मीणो से उत्पन्न बताते हैं। मीणो के प्राय गोत्र इन जातियो मे भी पाये जाते हैं।

भारत से बाहर भी 'मैना' 'मीना' नामक जातियो के उल्लेख विश्वकोषो मे पाये जाते है। ये जातिया भी प्रायः कबीलो के रूप मे जगलो मे रहने वाली हैं। 'स्पार्टा' से (sparta) 'मताहन' (Matahan) टापू तक फैली हुई टैगेटम (Taygetus) पहाडी की शृखला मे बसे हुए प्रदेश को 'मैना' (Maina) और वहा के निवासियो को 'मैनोत' (Mainotes) कहते हैं। आजकल इस प्रदेश का नाम 'मोरिया' (Morea) है। यह प्रदेश प्राकृतिक दुर्ग के समान है। ये लोग गरीबी के कारण लूटमार का धन्धा करने लग गए थे। नवी शताब्दी तक इन्होने ईसाई

---

१ हि० अि० ओ० हि-इलियट एण्ड डाउसन—जि० १—पृ० ५०३

२. उदयपुर राज्य का इतिहास-जि० २, पृष्ठ ५४३-डा० ओझा

३ कोटा राज्य का इसिहास-पृ० २१-डा० मथुरालाल

धर्म नही स्वीकार किया था और तुर्क लोगो से भी निरतर लडते रहे थे। ये अपने आपको प्राचीन स्पार्टा वालो के वशज मानते है।[१]

इसी प्रकार 'मैनान' (Mainan) नामक एक स्वतन्त्र भाषा-समुदाय दक्षिणी अमेरिका मे बसने वाले इण्डियन लोगो का है, जिसका नामकरण मैना (Mainas) नामक एक महत्वपूर्ण जाति के नाम पर हुआ है। उत्तर पश्चिम 'पेरू' (Peru) मे इस जाति के लोगो ने काफी बडा भूभाग घेर रक्खा है। ये लोग शातिप्रिय, कृषक तथा शिल्पी होते हुए भी शत्रु का सिर काटकर उसे विजय के उपलक्ष्य मे सभाल कर रखते हैं।[२]

दक्षिणी अरब मे भी 'मीनैन' (Minaean) नामक एक बोली है जो 'मैनी' (Maini) नामक प्रदेश मे प्रचलित है तथा जिसके बोलने वालो को यूनानी भूगोलवेत्ताओ ने मिनेई (Minaei) कहा है।

पुरातत्वज्ञ फादर हेरास ने सन् १९४७ मे अपने जयपुर-भ्रमण के समय स्थानीय मीणा समाज के कुछ शिक्षित व्यक्तियो के साथ मीणो के प्राचीन ऐतिहासिक स्थल देखते समय यह व्यक्त किया था कि 'मीन' (मछली) के चिन्ह से अकित जो मुद्रायें 'मोहे जो दडो' मे प्राप्त हुई हैं वैसा ही चिन्ह स्पेन के पास एक टापू मे भी खुदा हुआ देखा गया है। फादर हेरास इस बात मे पूरा विश्वास रखते थे कि आधुनिक मीणा उन्हो पूर्व आर्य काल के 'मीन' गणचिन्ह वाले लोगो के वशज हैं।

अतः जब तक अन्य पुष्ट प्रमाणो से यह धारणा खण्डित नही हो जाती तब तक यह मान लेने मे कोई हर्ज नही होना चाहिए कि—

---

१ एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका—जि० १४—पृ० ६८५
२. " " पृ० ६८२

मीणा लोग सिंधु सभ्यता के प्रोटो द्रविड लोग हैं जिनका गणचिन्ह मीन (मछली) था।

ये लोग आर्यों से पहिले ही भारत मे बसे हुए थे और इनकी संस्कृति–सभ्यता काफी वढी–चढी थी। रक्षा के लिए ये दुर्गों का उपयोग करते थे।

धीरे-धीरे आर्यों तथा वाद की अन्य जातियो से खदेडे जाने पर ये सिंधु घाटी से हटकर 'आडावळा' पर्वत-शृंखलाओ मे जा वसे, जहा इन के थोक आज भी है।

संस्कृत मे 'मीन' शब्द की व्युत्पत्ति संदिग्ध होने के कारण इन्हे 'मीन' के संस्कृत पर्याय 'मत्स्य' से सबोधित किया जाने लगा, जव कि ये स्वय अपने आपको 'मीना' ही कहते रहे।

आर्यों से भी प्राचीनतर समझी जाने वाली तमिल संस्कृति मे 'मीन' शब्द मछली के लिए ही प्रयुक्त हुआ है, जिससे इन लोगो का तमिल साम्राज्य के समय मे होना सिद्ध होता है।

सिंधु-घाटी सभ्यता के नाश तथा वेदो के संकलन के वीच का समय निश्चित नही होने के कारण ऐसा संभव हो सकता है कि पर्याप्त समय वीत जाने पर 'मीनो' को वैदिक साहित्य मे आर्य मान लिया गया हो, जहा आर्य राजा–सुदास–के शत्रुओ मे इनकी गिनती की गई है।

मत्स्यो का जो प्रदेश वेदो, ब्राह्मणो तथा अन्यान्य भारतीय ग्रंथो मे वताया गया है वही आज की मीणा जाति का प्रमुख स्थान होने के कारण आधुनिक मीणे ही प्राचीन मत्स्य रहे होंगे।

सीथियन, शक, क्षत्रप, हूण आदि के वंशज न होकर ये लोग आदि-वासी ही हैं, जो भले ही कभी वाहर से आकर वसे हो, ठीक उसी तरह जिस तरह आर्य वाहर से आकर वसे हुए वताये जाते है।

६) स्वभाव से ही युद्धप्रिय होने और दुर्गम स्थलो मे निवास करने के कारण यह जाति भूमि का स्वामित्व भोगने वाले शासक वर्ग मे ही रही है।

इन निष्कर्षों से केवल एक कडी जोडने का प्रयास भर किया गया है। इसका यह आशय नही है कि यह कोई तर्कसपुष्ट मान्यता है। पर जैसा कि पहिले लिखा जा चुका है जब तक और अकाट्य प्रमाण न उपस्थित हो तब तक अद्यावधि प्राप्त जानकारी के आधार पर ऐसी धारणा बना लेने मे कोई आपत्ति नही होनी चाहिए। इससे इस जाति का आगे का इतिवृत्त समझने-परखने मे सहायता मिलेगी।

अध्याय २

मीणा जाति का प्रसार

सन् १९६१ की भारतीय जनगणना के अनुसार राजस्थान मे जन जाति के रूप मे परिगणित मीणा जाति की कुल सख्या ११,५५,६२० (ग्यारह लाख पचपन हजार छैसौबीस) बताई गई है। इनमे ६,०७,२५१ पुरुष तथा ५,४८,३६९ स्त्रिया हैं। केवल २१,४१४ व्यक्तियो को छोडकर, जो शहरो मे बसते हैं, शेष सभी गावो मे रहने वाले है।[1] मीणे सर्वाधिक सख्या मे जयपुर, सवाई माधोपुर तथा उदयपुर जिलो मे बसते हैं। जनजातियो मे मीणो तथा भीलो का अनुपात क्रमश. ५० तथा ३९ प्रतिशत का है। राजस्थान की कुल जनसख्या का ५-६ प्रतिशत भाग मीणा जाति का है।[2]

मीणा जाति के बहीभाट, जिन्हे जागा कहते हैं, इस जाति को १२ पाल, बत्तीस तड तथा ५२०० गोत्र की बात कहते है। क्षत्रिय जातियो से मीणो की उत्पत्ति के सिद्धान्त का प्रचार करने की दृष्टि से मीणो के जागाओ ने इनकी १२ पालो को निम्नलिखित क्षत्रिय जातिया ही माना है—१ चौहान २ परमार ३ गहलोत ४ चन्देल ५ कछावा

---

१ सेंसस ऑफ इण्डिया (९६) जि १४ भाग V A पृ० ११६–१२८

२ मीणो की जिलेवार सख्या, उनका धर्म, भापा, व्यवसाय आदि विभिन्न तालिकाओ मे रुचि रखने वाले परिगिण्ट मे देखें

६ यादव ७. तवर ८ पडिहार ६ निर्वाण १० गौड ११ वडगूजर तथा १२ सोलकी। इस सिद्धान्त मे केवल यही चेष्टा की गई है कि मीणो को राजपूत जातियो के ही वशधर वताकर उनके ग्रह की तुष्टि की जाए, जव कि वास्तविकता कुछ और ही होनी चाहिए। राजस्थान मे किसी न किसी समय राज्य करने वाली प्राय प्रत्येक राजपूत जाति को पालो की इस गिनती मे सम्मिलित करने का प्रयत्न किया गया है। कालक्रम का कोई ध्यान नही रखते हुए ऐसी राजपूत जाति की गणना भी इनमे की गई है जिसने वाहर से आकर मीणो से ही उनका राज्य छीना है। उदाहरणत कछावा जाति के राजपूत स्वय ग्यारहवी शताब्दी मे ग्वालियर की तरफ से आए और ढूढाढ के मीणो से राज्य छीनकर यहा वसे। ऐसी स्थिति मे उन्ही मीणो के वशजो को कछावो से उत्पन्न मानना एक भ्रात धारणा को प्रश्रय देना है। जागाओ द्वारा गढी हुई इन किवदन्तियो मे कोई सार नही होना चाहिए क्योकि ये ऐतिहासिक दृष्टि से छानबीन करने के स्थान पर अन्यान्य स्वार्थो से प्रेरित होकर खडी की गई हैं।

एक अन्य जागा ने पालो की यह गणना भिन्न प्रकार से की है जो पहली से अधिक सगत प्रतीत होते हुए भी निरी मनगढत ही है। गणना निम्न प्रकार है :—

१. अजयनगर—अजमेर मे राज्य स्थापन कर चौहान अग्निवशी मेरुपाल कहलाये।

२. मरुदेश—मरुस्थल—भटनेर मे यदुवशी मरुपाल कहलाये।

३. मारदेश—मारवाड मे मरियाडपुर या माडूनगर मे मेहडा राजा मारपाल कहलाये।

४ मालदेश—मालवा—धारानगर—धारवै मैना मालपाल कहलाये।

५ मेवपाल—माहीरपुर—महीदेव राजा मेवपाल कहलाये।

६ हरीदेश—सोहननगर—राहडदेव हरीपाल कहलाये।

७ राठदेश—मे घाहाट नगर—वीरभट राजा—राठपाल कहलाये।

८ व्रजदेश—कामाकोसी—देवासुर मैना—व्रजपाल कहलाये।

९ सुवालक देश—सोलावती नगरी—सोहग राजा-सुवालकपाल कहलाये।

१० गध देश—गधार नगर — मोणदेवराजा — गधहपाल कहलाये।

११ हाडा देश—इन्दुण (हिन्दुण) नगर—बुधदेव—हाहडापाल कहलाये।

१२ वाढदेश—वाडमेर—मौंहडादेव राजा-बाढपाल कहलाये।

इमी आशय का छदवद्ध वर्णन जागाओ की पोथी मे लिखा मिलता है, जिसके आधार पर ही शायद उपर्युक्त वर्णन गद्य मे लिखा गया है। छदपाठ निम्न प्रकार है—

द्वादस देम पुरेस नृप, दीरघ दुर्ग विसाल।
नित्त नित्त सासन करें, मीन भूप प्रतिपाल॥
मरू, मेर, अरु मार पुनि, हाड, बाढ अरु माल।
मेव, हरी अरु राठ, व्रज, स्वालख, गॅध प्रतिपाल॥
मरू देस भटनेरपुर, यदुकुल राजै राज।
मेरुगिरी अजमेर मे, चाहुवान भुय राज॥
मार देम मरियाडपुर, मेहड नृपति किसोर।
माल देस धारानगर, धारि भूप वरजोर॥
सुवल देम पुरमोल भनु, सोहन नृपति भुयेन।

गध देस गधारपुर, सुवलपाल महि वैन ॥
मेत्र देस माहोरपुर, महीदेव महिराण ।
हरी देस सोहननगर, राहडदेव सुरनाण ॥
राठ देस पुर घाट वर, वीर भट्ट भूपाल ।
बिरज देस कमकौसपुर, राज देव वरवाल ॥
आहड देस हाडवनगर, वुद्धदेव नरपाल ।
बाड देस वडमेरपुर, मोहडदेव भूपाल ॥

प्रस्तुत वर्णन मे विभिन्न भूभागो से पालो का सम्बन्ध बताया गया है जो अधिक युक्तिसगत है, यद्यपि इसमे सत्य का अश न कुछ के बराबर ही है।

जब कल्पना से ही नामकरण होने लगे तो एक और जागा ने पालो के नामकरण मे एक और नई कल्पना की और निम्न प्रकार पालो की गिनती की—

१ देसपाल (देसवाळी) २ चौयतपाल (चौकायत) ३. खेतपाल (खेतडा) ४ प्राचीनपाल (पुराणावासी) ५ नवपाल (नवावासी) ६. पार पाल (पार मीणा) ७ मेरपाल (मेर मीणा) ८ मालापाल (माळी मीणा) ९ पडियार पाल (पडियार मीणा) १० मैलापाल (मैला मीणा) ११ चिमरपाल (चमरिया मीणा) १२ रावत पाल (रावत मीणा) १३ मेव पाल (मेव मीणा)।

१२ पालो की यह गिनती १३ तक ले जाते हुए काल्पनिक जागा ने लोकप्रचलित १२ पालो का उत्तर देने के लिए यह कल्पना गढी है। इसमे जमीदार—चौकीदार, पुराना वासी–नया वासी, ऊजळा–मैला, पडिहार–रावत आदि विभेदो को गणना कर बारह की गिनती पूरी करने की चेष्टा की है, पर यह भी पूरी नही हो पाई। इसके अतिरिक्त कई ऐसे प्रचलित विभेद इस गिनती मे सम्मिलित भी नहीं हो पाए हैं।

पालो की इन कल्पनाओ पर चर्चा करने से पूर्व 'पाल' के शाब्दिक अर्थ की बात भी कर लेनी चाहिए। 'पाल' शब्द का वश के रूप मे प्रयोग कही दृष्टिगाचर नही होता। पाल का उद्गम सम्भवत. सस्कृत के 'पल्ली' शब्द से हुआ है। दक्षिण के त्रिचनापल्ली, सर्वपल्ली तथा राजस्थान के पाली, पालडी आदि गावो के नामो की उत्पत्ति 'पल्ली' मे हुई होनी चाहिए। कर्नल टॉड ने अपने राजस्थान के इतिहास मे 'पाल' शब्द की व्याख्या करते हुए लिखा है कि यह शब्द पहाडी आदिवासियो की जाति के लिए प्रयुक्त होता है। इसका आशय वह घाटो है जो खेती तथा रक्षा के काम मे आती हो।[1]

स्व० ओझा ने भी 'पाल' को भीलो के ऐसे घरो का एक समुदाय बताया है जो प्राय पहाड़ियो पर एक दूसरे से वहुत दूर-दूर बसे होते है।[2]

एक अन्य स्थान पर वे लिखते हैं कि "पहाडियो पर एक दूसरे से दूर झोपडे बनाते हैं। बहुत से झोपड़े मिलकर पाल (पल्ली) कहलाती हैं और उसका मुखिया पालवी (पल्लीपति) या 'गमेती' कहलाता है जिसकी आज्ञा मे प्रत्येक 'पाल' के लोग रहते है।"[3]

सस्कृत के 'पल्ली' शब्द से अभिहित बस्ती का उल्लेख करते हुए इतिहासकारो ने उसे किले के चारो ओर बसे हुए छोटे-छोटे गावो मे से एक माना है, जिसे 'घोपाल' भी कहा जाता था। यही पल्लिया या घोपाल बढ कर नगर बन जाते थे।[4]

---

१ ऐनल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान—जि० २, पृ० ७८३—टॉड

२ उदयपुर राज्य का इतिहास—जि० २, पृ० ७१५—ओझा

३ „ „ „ „ पृ० १११३— „

४ कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया—जि० १, पृ० २३९

'पाल' के इसी अर्थ से मेल खाती हुई मीणो की वारह पालें कभी रही होगी जिनकी जानकारी आज उपलब्ध नही है। स्थान विशेष से पाल विशेष का नामकरण समझ मे आने वाली वात तो है, पर जागाओ ने जिस प्रकार इस प्रश्न को उलझाकर भ्रम मे डालने का यत्न किया है उससे पालो की कोई जानकारी नही मिल पाती। सम्भव है राठ, माल, मरु, सवालख, मेव, मेर, व्रज आदि भूभागो मे रहने वाले मीणा समुदाय उन्ही नामो से कही जाने वाली पालो के मान लिए गये हो।[2]

कर्नल टॉड ने भी पालो का जिक्र करते हुए उन्हे राजपूत वशो के नाम से ही गिना दिया है,[1] जवकि वे स्वय यह मानते है कि "राजपूत तो विजेता मात्र है और भारतवर्ष के गहन प्रदेशो पर जन्मसिद्ध अधिकार तो उन आदिवासी जातियो का है, जिनकी महानता के चिन्ह उनकी प्राचीन परकोटो से घिरी हुई वस्तियो मे प्रचुरता ने पाये जाते है।"

'पालो' से भी अधिक अज्ञात मीणो की ३२ तडे है। कर्नल टॉड ने भी इनका जिक्र न करते हुए केवल इतना ही लिख दिया है कि इनका विस्तार से वर्णन करने के लिए वहुत समय चाहिए।[3] मुनि मगनसागर ने भी ३२ तडे होने की वात तो कही है पर उनका वर्णन नही किया है।

५२०० गोत्रो की गणना करने वाली एक पुस्तक अवश्य छपी है,

---

१ अैनल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान—जि० २, पृ० २८३ (चौहान, तवर, जादूण, परिहार, कछावा, सोलकी, साखला, गहलोत श्त्यादि)

२ पश्चिमी भारत की यात्रा—टॉड (अनुवादक–वोहरा) पृ० ४०

३ अै०-एण्ड ए० ऑफ राज०—जि० २, पृ० ३४७–टॉड

पर उसमे भी उनके नाम निरे कल्पित ही हैं । 'बगडावत' नामक गोत्र को बागडावत, बाघरावत, बाघडावत, बगरावत, बघेरावत आदि अनेक नामो से लिखकर पूर्ति करने का प्रयत्न किया गया है ।[1] इन्ही गोत्रो की काट-छाट कर ५२०० गोत्रो को 'क्षत्रिय मीणा गोत्र सग्रह' नामक पुस्तक प्रकाशित की गई है ।[2] यदि यह मान भी लिया जाये कि ५२०० गोत्र कभी रहे होगे तो भी आज के मीणा समाज मे वह गिनती पूरी नही हो सकेगी । प्रयत्न करने से कुछ सौ गोत्रो के नाम ही अधिक से अधिक मिल सकते है ।

यह भी ध्यान देने की बात है कि मीणो के जागाओ ने ८० गोत्र होने की बात ही लिखी है । वैसे प्रचलित होने के कारण उपयुक्त किवदन्ती का उल्लेख भी उनकी पोथियो मे अवश्य है ।

> मारणपुर मोना बसे, असी गोत्र परिवार ।
> पृथ्वी नग्र विभाग के, कियो राज विस्तार ॥

भारतीय लोक विश्वास के अनुसार पाच, बारह, बावन, छप्पन, अस्सी, चौरासी, बहोत्तर आदि की सख्याओ को अनेक प्रसगो के साथ जोड देते हैं । बारह गाव, बारह कोस, बारह कोटडी आदि के वर्णन कई स्थानो पर आते है । इसी प्रकार ५२००, ५६०० आदि शब्दो का भी चलन है । इसलिए यह कहा नहीं जा सकता कि इन सख्याओ मे कहा तक सच्चाई है !

पालो, तडो तथा गोत्रो के अतिरिक्त मीणा जाति के अन्य कई सामाजिक विभाग भी लोकप्रचलित है । इनमे से कुछ बहुचर्चित

---

१ मीनपुराण—पृ० २१४—मगनसागर

२ क्षत्रिय मीणा गोत्र सग्रह—प्रकाशक ठा० रामसिह नोरावत—सवत् २००२

इस प्रकार है —

१. जमीदार-चौकीदार—जमीदार मीणे वे हैं जो प्राय· खेती, पशुपालन या अन्य कोई ऐसा ही व्यवसाय करते हे। ढू ढाड मे इन्हे 'बारागाव मीणा' भी कहते हैं। चौकीदार मीणे अपनी स्वच्छद प्रकृति तथा आर्थिक कारणो से विवश होकर प्राय चोरी तथा लूटमार आदि पर उतारू हो गये थे। पर आज वैसी स्थिति नही हैं। देश के आजाद होने के बाद सामती शासको के अत्याचारो मे कमी होने के साथ-साथ इनकी उच्छृङ्खलता का भी शमन हो गया है और ये कर्त्तव्यनिष्ठ नागरिक का महत्व समझने लगे है। ढू ढाड के जमीदार मीणे ही, जिनके लिए भू० पू० जयपुर राज्य मे 'बेडा मीणा बारा गाव' नाम से एक पृथक् विभाग था, गढो, महलो, कोषागार तथा स्वय महाराजा के अगरक्षक एव अत पुर तक के रक्षक बनाये जाते थे। इनकी स्वामिभक्ति की कई हृदयस्पर्शी घटनायें बनाई जाती हैं। चौकीदार मीणे, जो प्राय शेखावाटी क्षेत्र मे बसे हुए है, चौकीदार बनाये जाते और गाव मे चोरी आदि की घटनायें होती तो इन्हे जिम्मेदार ठहराया जाता। इनका कर्त्तव्य होता कि ये चोरी को बरामद करे। इसके बदले मे इन्हे गाव से एक प्रकार की लाग वसूल करने का अधिकार था जिसे कही 'चौथ' के नाम स भी पुकारा जाता था। इस कार्य से जीवन मे प्रगति करने की उनकी स्वतः स्फूर्त प्रेरणा का दमन हुआ और उनकी आर्थिक स्थिति भी बदतर बनी।[1] पर कर्नल 'पाउलेट' के अनुसार इन दोनो वर्गों मे भेद की कोई रेखा नही मिलती।[2]

उपर्युक्त विभाजन मे अब इतना पार्थक्य नही रह गया है। अनेक

---

१ शिड्यूल्ड ट्राइब्स ऑफ राजस्थान एण्ड देयर वेलफेयर— पृ० ३४

२ राजस्थान की जातिया—पृ० ३६—लोहिया

चौकीदार वर्ग के मीणे कृषि आदि का शातिप्रिय धन्धा करते हैं और 'चौकीदारी' के पेशे से उनका कोई ताल्लुक भी नही है। श्री जगदीशसिंह गहलोत ने लिखा है कि चौकीदार मीणे काश्तकारो को लडकी नही देते है।[1] यही लेखक एक अन्य स्थान पर लिखते हैं कि काश्तकार मीणे स्वय को चौकीदारो से वडे मानते है और उन्हे लडकी नही देते।[2] कुछ वर्षों पहिले तक जमीदार तथा चौकीदार मीणो मे परस्पर विवाह-सवध भी उचित नही माने जाते थे। पर आज जाति के सुधारको ने ये सव प्रतिबध समाप्त कर दिए है तथा ऐसे सवधो को हेय दृष्टि से नही देखा जा सकता।

मीणा जाति मे राजनैतिक और सामाजिक जागृति की ज्योति जगाने वाले एक प्रमुख कार्यकर्ता श्री राजेन्द्रकुमार 'अजेय' के अनुसार जमीदार और चौकीदार वर्गों का भेद निम्नलिखित आधारो पर हुआ—

"राज्यसत्ता हाथ से निकल जाने के पश्चात् भी मीणो ने हार नही मानी और गुरिल्ला प्रणाली के अनुमार निरतर छुटपुट आक्रमण करते रहे। गुरिल्ला युद्ध मे स्वभावत मीणागण दो भागो मे विभक्त हो गए, एक वे जो मोर्चे पर लडते रहते थे और दूसरे वे जो पीछे से अस्त्र-शस्त्र और रसद आदि पहुँचाते थे। कालान्तर मे रसद पहुँचाने वाले लोग केवल खेतिहर हो गए और उन्हे राज्यसत्ताओ ने भूमि देकर वसा दिया। गुरिल्ला युद्ध करने वालो से भी भिन्न समझौते हुए जिनके अनुसार मीणो को जनता से चौथ वसूल करने का अधिकार मिला और वदले मे उन्होने शाति एव सुरक्षा की जिम्मेदारी ले ली। × × × वाद मे इनमे कुछ मतभेद हो गए, कुछ लोग तो इस मत के हो गए

---

१ जयपुर व अलवर राज्यो का इतिहास—पृ० २२७-गहलोत

२ वही—पृ० १३

कि हम मरते मर जायेंगे मगर लडाई लडते रहेंगे। कुछ लोग इस विचार के हो गए कि लडाई कब तक लडते रहेंगे, दुबारा शक्ति तो हाथ आने से रही। इन विचारो वाले मीणो को राजपूतो ने भी फुसलाने की कोशिश की और जमीनें आदि देकर खेती करने को कहा। इस कारण से इस हतोत्साहित प्रकृति के मीणो ने, जो असुविधाओ से परेशान हो गए थे, जमीनें लेकर कृषक जीवन अपनाना पसद कर लिया। ये लोग जमीदार मीणे हो गए। किन्तु जो लोग लडते ही रहे उनसे अन्त मे राजपूत तग आ गए और उनके साथ सन्धि करने को मजबूर हो गए।"[1] ये ही दोनो वर्ग कालान्तर मे क्रमश. जमीदार और चौकीदार कहलाये।

२ पुराणा बासी–नया बासी—जैसा कि शाब्दिक अर्थ से स्पष्ट है 'पुराणाबासी' मीणे वे हैं जो पर्याप्त अवधि से बसे हुए हैं और 'नया बासी' वे जो बाद मे आकर बसे हैं। यह भी मान्यता है कि 'पुराणाबासी' मीणा जमीदार मीणो को कहते हैं तथा 'नया बासी' मीणा चौकीदारो को।[2] 'नीम का थाना' (सीकर जिला) के पास 'नया बास' नामक स्थान चौकीदार मीणो का प्रमुख स्थान है तथा यहा के चौकीदार मीणो के नाम देश मे दूर-दूर तक हुई चोरी की घटनाओ मे लिए जाते हैं। पर यह बात सामान्य तौर पर सब पर नही लागू की जा सकती। सामाजिक कारणो से जो प्रवृत्ति पहिले इस वर्ग के लोगो को विवश होकर अपनानी पडी थी वह अब समाप्त होती जा रही है। सभवत. 'नया बास' गाव के नाम से ही चौकीदार मीणो को 'नयाबासी' कहा जाने लगा हो। वैसे सामान्य बोलचाल मे तो पुराणा बासी तथा नया बासी का शाब्दिक अर्थ ही लिया जाता है।

---

१ चौकीदार मीणा एक अध्ययन–हस्तलिखित शोध प्रबन्ध (मनुष्य बनने के लिए मीणो का सघर्ष) पृ० १३–अमरीकसिह

२ शिड्यूल्ड ट्राइब्स ऑफ राजस्थान एण्ड देयर वेलफेयर–पृ० ३४

पड़िहार और चौकीदार मीणो मे भेद करते हुए एक विद्वान ने सन् १८७४ मे लिखा था कि "पड़िहार मीणे भी लूट मार करते हैं पर वे चौकीदार मीणो की बराबरी नही कर सकते। पड़िहार मीणा भोला और अंधविश्वासी होता है, पर चौकीदार मीणा चतुर होता है और वह आक्रमण अथवा लूटमार की साहसपूर्ण योजनाओ से तभी बाज आएगा जब कि उसको कोई बहुत अनिष्टसूचक अपशकुन हो जाए।"[1] पर आज ऐसा कोई भेद प्रतीत नही होता है। सभवत. ये सभी धारणायें सतही जानकारी के आधार पर ही बनाई गई थी और समूची जाति का सामाजिक सर्वेक्षण करने का प्रयत्न नही किया गया, जिसमे सही तथ्य प्रकाश मे आते। वस्तुस्थिति तो यह है कि एक ही वश (गोत्र) मे जमीदार–चौकीदार दोनो वर्ग मिलते हैं। छापोला तथा बागडी गोत्रो मे ये दोनो वर्ग आज भी देखे जा सकते हैं। इतना ही नहीं यहा तक भी दावा किया जाता है कि एक ही घर मे एक पुत्र जमीदार तथा दूसरा चौकीदार कहलाता है। इससे यह स्पष्ट है कि ये नामकरण मात्र व्यवसाय के आधार पर ही किए गए थे और लूटमार आदि का दोषारोपण वृथा है। राजपूत जाति मे अनेक सुप्रसिद्ध डाकू हो गए हैं, पर उनको कभी पृथक् जाति या वर्ग की सज्ञा नही दी गई। मीणा एक बहुसख्यक जाति है, अत उनके ऐसे किसी स्थान विशेष या वर्ग विशेष के कारण समूची जाति को कलकित करने की कुचेष्टा की गई है। उदाहरण के तौर पर जैसलमेर के भाटी तथा सेखावाटी के अनेक सेखावत राजपूत छोटी–छोटी जमीनो के मालिक होने के कारण अभावग्रस्त रहने तथा स्वभाव से स्वच्छद प्रकृति वाले होने से प्राय पुराने शासको के लिए सिरदर्द बने रहे हैं। स्वय अकबर सेखावतो से प्रसन्न नही था। वह उन्हे 'जटड़े' कह कर सबोधित

---

१ इण्डियन एण्टीक्वेरी, जि० ३ (१८७४) पृ० ८६–
(फ्रैण्ड आफ इण्डिया, सितम्बर, १८७२)

करता था।[1] पर इसका यह अर्थ थोडे ही लिया जा सकता है कि सारे सेखावत ऐसे थे। जिस प्रकार बादशाह और राजस्थान के अन्य शासक सेखावतो की स्वतत्र प्रकृति और सत्ता के लिए निरन्तर सघर्ष से तग आकर उन्हे 'जटडे' अथवा 'लुटेरे-डाकू' आदि कह कर वदनाम करना चाहते थे वैसी ही कुछ स्थिति मीणो के सबध मे मानी जा सकती है। अपने खोए हुए अधिकारो की प्राप्ति के लिए सघर्ष करने और उसी उद्देश्य से लूटखसोट आदि पर उत्तारू होने के कारण ही इस जाति को शासक राजपूतो ने बदनाम करने के प्रयत्न किए।

५ रावत मीणा—अजमेर-मेरवाडा मे इन लोगो का थोक है। वैसे मीणो के ५२०० गोतो मे भी 'रावत' गोत है, पर ये 'रावत मीणा' के नाम से विशेष रूप से क्यो पुकारे जाने लगे, कहा नही जा सकता। 'रावत शब्द जहा सामतो मे राव, रावळ, राजा आदि की श्रेणी मे एक प्रतिष्ठित पदवी मानी जाती थी, वही अनेक जातियो मे यह विशेष खाप के रूप मे भी व्यवहृत हुआ है। खण्डेलवाल वैश्यो मे 'रावत' गोत है तो ढोलियो मे भी 'रावत' गोत माना जाता है। अत 'रावत मीणा' के सामाजिक स्तर का वखान नही किया जा सकता। हा, ये सवर्ण हिन्दू है। ये लोग अपनी उत्पत्ति राजपूतो से मानते है।

६ चमरिया मीणा—आगरा (उ० प्र०) की ओर चमरिया मीणा पाये जाते बताए। सभवतः चमडे का काम करने के कारण उन्हे

---

१ दलपतविलास–पृ०-१०५–रावत सारस्वत–"तब बादशाह ने हिन्दुओ की तरफ देखकर कहा कि जो राठौड है वे तो राज के धनी हैं, राजा है और जो ये राजावत हैं वे भी इनके भानजे है सो अच्छे हैं। लेकिन ये सेखावत मरे जटडे है। जटडे २ कहकर पाच सात बार बके।"

ऐसा कहा जाने लगा हो। वैसे राजस्थान मे चमारो तथा मीणो का सामाजिक वैमनस्य अनेक स्थानो तथा समयो पर देखने मे आया है। निकट से अध्ययन करने वाले एक मामाजिक कार्यकर्ता का मत है कि चमारो और मीणो की अनेक सामाजिक मान्यताओ तथा रीति-रिवाजो मे आश्चर्यजनक साम्य है। पर इनकी शत्रुता भी वडा हिंसक रूप धारण कर लेती है। मीणो ने नुक्ते के अवसर पर चमारो द्वारा मिठाई वनाने तथा उनकी स्त्रियो द्वारा आभूषण धारण करने पर आपत्तिया की है और तनातनी बढने पर रक्तपात भी हुआ है। [1]

✓ ७ भील मीणा—ये लोग अधिकाशतः अजमेर-मेरवाडा, मेवाड तथा वागड (डूगरपुर-वासवाडा) क्षेत्रो मे पाये जाते हैं। भीलो तथा मीणो के निरतर साहचर्य के कारण यह एक नई जाति खडी हुई है जो दोनो का लाभ उठाती है।

मीणे तथा भील दो पृथक् जनजातिया मानी गई हैं। ओझाजी ने इनकी भिन्नता बताते हुए लिखा है कि "इन दोनो जातियो के रीति-रिवाज आदि मे वडा अ तर है और अिनमे परस्पर विवाह-सवध नही होता। आजकल के लेखक इन दोनो जातियो की भिन्नता के विपय मे अपरिचित होने के कारण मीणो को भील कहते है, जो भ्रम ही है। तमाम पुराने दस्तावेजो मे मीणो को मीणा ही लिखा है।"[2]

एक अन्य जगह वे फिर लिखते हैं—"मेवाड के सभी भील भील नही है, उनमे मीणे भी हैं। अहलकार तथा प्रजा उन्हे भील ही कहती है, पर ये दोनो जातिया भिन्न-भिन्न हैं। विशेप जाच करने से ही दोनो के वीच का भेद मालूम हो सकता है।" [3]

---

१ वून्दी गजेटियर-पृ० ६६

२. उदयपुर राज्य का इतिहास-जि० २-पृ० ५४३-ओझा

३. उदयपुर राज्य का इतिहास-जि० २-पृ० १११३-१४-ओझा

भीलमोरणा कहलाने वाले लोगो की सख्या १९६१ की जनगणना के अनुसार कुल २०६३ मानी गई है तथा इसका अधिकाश अजमेर जिले मे प्राप्त है ।[1]

८ असली या आदू मीणा—कर्नल टॉड ने 'ऊपाहरा' वश के मीणो को ठेठ, असली और अमिश्रित मीणा वश माना है तथा शप सभी को वर्णसकर । वे लिखते हैं-"इस जाति के नाम के उच्चारण तथा इसकी वर्तनी मे एक अतर स्पष्ट है । मैना या मैना से आशय है असल या अमिश्रित जाति का, जिसमे अब केवल एक 'ऊपाहरा' ही हे, जवकि मीना (मीणा) मिश्रित जाति के लिए प्रयुक्त होता है जिनकी १२ पाल या १२ जातिया चौहान, जादूण, पडिहार, कछवाहा, सोलकी, साखळा, गहलोत इत्यादि राजपूत जातियो से निकली है । इनका विभाजन ५२०० गोत्रो मे किया गया है तथा इनके जागा–ढोली–डूमो का कर्तव्य है कि वे इनका व्यौरा रखें । असली ऊपाहरा वश अब वहुत अधिक अलभ्य हो गया है, जब कि मिश्रित जातिया मध्य तथा पश्चिमी भारत के वीहड पहाडी प्रदेशो मे फैली हुई है और अपने वश–गौरव का अभिमान करती है, यद्यपि वे वर्णसकर ही है ।"[2]

जहा तक 'ऊपारा' वश की श्रेष्ठता का प्रश्न है, यह तथ्य एक लोकप्रचलित पद्य से भी प्रमाणित होता है—

काकश पखडी काबरा, डूमालों की दौड ।
पहला मीणा ऊपारा, पीछे मीणा और ।।[3]

---

१ सेंसस ऑफ इण्डिया (६१) जि० १४ भाग V ए–पृ० ११६-१२८
२ अॅनल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान–जि० २,
पृ० २८३- टॉड
३ मीनपुराण भूमिका–पृ० २५–मगनसागर

जागाओ ने भी इस तथ्य को इस प्रकार छदवद्ध किया है—

शिवगण गुण सूरत विदित, असुरहरण वलि नाहरो।
कीरत करण सजोर, आदू मीणो ऊषाहरो ॥

९ ढेढिया मीणा—गोडवाड़ तथा जालोर क्षेत्र के मीणा को 'ढेढिया मीणा' कहा जाता है। ये लोग गोमास भक्षण से भी घृणा नही करते।[1]

१० सूरेतवाळ मीणा—कहते हैं मीणा जाति का पुरुष जव मालिन या अन्य ऐसी जाति की स्त्री से कोई सतान उत्पन्न करता है तो वह सूरेतवाळ मीणा कहलाती है। ये लोग आपस मे ही विवाह-सवव कर लेते है। शुद्ध मीणो से इनका बेटी-व्योहार नही होता वताया।

११ चौथिया मीणा—मारवाड के कोई गावो मे मेणो, भीलो तथा बावरियो की चौथ लगती थी। कमजोर जागीरदारो या गाव वालो ने गाव की हिफाजत के लिए चौथ कायम करदी थी। कई गावो मे ऐसे मेणो तथा राजपूतो की भी चौथ मुकर्रर हुई जिनका थोक ज्यादा था। इसी कारण वे उस गाव के चौथिया कहलाये।[2]

११ अन्य जातियों के नाम से मीणा

'चमरिया' मीणा की ही भाति मीणो के ५२०० गोत्रो मे खाती मीणा, लुहार मीणा, तेली मीणा आदि गोत्र भी हैं।[3] शायद इसका आशय यह है कि मीणो मे से जो जिन २ व्यवसायो मे चले गए उन्हे उन-

---

१. राजस्थान की जातिया–पृ० ४०-लोहिया
२. मरदुमशुमारी राज मारवाड–तीसरा हिस्सा (मारवाड की कौमो का हाल) सन् १८९४–पृ० १२२
३. मीनपुराण–पृ० २१२-मगनसागर

उन व्यवसायो के नाम से ही पुकारा जाने लगा। खाती, नाई, माली आदि जातिया भी अपने आपको ब्राह्मणो तथा राजपूतो मे निकली हुई सिद्ध करने के लिए जागडा ब्राह्मण, न्यायी ब्राह्मण, सनिक क्षत्रिय आदि नामो से पुकारती है।

१२ दस्सा-बीसा—'मीणो मे दस्सा और बीसा नाम के दो भेद भी है, किन्तु इसके कारण इनमे कोई जाति भेद नही है। दस्सो और बीसो मे भी विवाह सबध होते है। यदि इनमे कोई भेद है तो बस इतना ही कि दस्सा नामधारी मुख्यतया पापाचारी होते है और बीसा अपनी मेहनत-मजूरी की कमाई पर निर्वाह करते है। दस्से शव का दाह-कर्म करते है और बीसे शव को गाडते है।

१३ मैणसल—जिस प्रकार भारतवर्ष के प्राचीन प्रदेशो के नाम ब्रह्मर्षि देश, आर्यावर्त्त आदि हैं उसी प्रकार मीणो द्वारा बसे हुए समूचे प्रदेश को 'मैणसल' के नाम से पुकारा जाता है। सपूर्ण मीणा जाति के सबोधन के रूप मे भी इसे ग्रहण किया जाता है।

मीणो के उपर्युक्त भेदोपभेदो के अतिरिक्त इन्हे मीनोत, मारण, रावत क्षत्रिय, देशवाळी, देशी, परदेशी, मेवासी, मीना ठाकुर आदि नामो से भी पुकारा जाता है।[२] ये नाम स्थान-भेद से पृथक्-पृथक् रूप मे कहे जाते हैं। मीनोत का आशय तो मीन-पुत्र अर्थात् मीन वंश वाले व्यक्ति से ही है, पर मारण और मेवासी शब्दो की विशेष व्याख्या की आवश्यकता है। रावत मीणो का उल्लेख ऊपर कर चुके है, जो अजमेर-मेरवाडा मे विशेष रूप से आबाद हैं।

---

१. राजस्थान की जातिया-पृ० ४२-लोहिया

२ मीनपुराण भूमिका पृ० १५४-मीणा क्षत्रिय गोत्र सग्रह पृ०-घ०

१४ "मारण' अथवा 'म्यारण' शब्द सारे मीणा-समाज के लिए प्रयुक्त होता है। जागाओ ने इसे 'महारण' का अपभ्रंश मानकर कवित्त-बद्ध किया है और उसकी टीका करते हुए लिखा है-"माहिष्मती का महोयर (?)-महारण करके राजाओ ने उस नगरी का नाम मारणपुर रखा, जब से मैंना जाति 'मारणवशी' कहलाई। इनके ८० गौत्र, अंत प्रवर, अथर्वणवेद, कोमथि शाखा हुई। शत देवी की पूजा की तथा राज्य का वटवारा करके १२ नगरो मे राज्य स्थापन किया जिनसे मोनो की १२ पाल हुई।"

मुनि मगनसागर ने भी दुष्टो को मारने के कारण इस जाति को मारण कहना लिखा है।[1] मीणा-समाज के सुपठित लोगो का कहना है कि समाज मे 'म्यारण' की दुहाई सबसे बडी दायित्व की बात समझी जाती है। यह एक सयोग की बात है कि दक्षिण के एक पाड्य राजा ने अपनी उत्पत्ति 'मारड' नामक जाति से मानकर अपने आपको 'मारण' नाम से पुकारा।[2]

१५ मेवासी—मुनि मगनसागर ने 'मेवासी' का आशय 'मेवास' प्रदेश के रहने वाले से लिया है। आजकल के मेवात (गुडगाव तथा अलवर जिलो का प्रदेश) को ही मुनिजी 'मेवास' मानते हैं और मेव जाति का वास-स्थान होने से ही इसका 'मेवास' कहलाना मानते हैं। मुनिजी के अनुसार मेव और मीणा एक ही जाति है।[3] एक अन्य स्थल पर वे लिखते हैं कि "मीना जाति मे आज तक सामतो को मेवासी कहते हैं।"[4]

---

१ मीनपुराण भूमिका—पृ० १२-मगनसागर

२ कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया-जि० १, पृ० ५४०

३ मी० पु० भू० पृ० १२

४ " " २०

मीणो के जागाओ ने निम्नलिखित १२ मेवासी गिनाए हैं—

१ हदमल चोतो—	चाग (चादसेण)
२ मुरकल्यो बारवाळ—	उमराडो (छारेडो)
३ वालो पोथो छाडवाळ—	छाण (वैंजवाडी)
४ हडपो डोववाळ—	डोव
५ वादो व्याडवाळ—	नडैठ
६ आहाडो मादड—	चूळी सरजोळी
७. टावो सोगुण—	कोलेसर-वूज
८. घूडो (लावो) बैनाडो—	बैनाड
९ सकतो पाकळ—	राजोरगढ
१० भीखो देवडवाळ—	बिचलाणो (भोळ माणूतो)
११ काळू खोडो—	माचडी
१२ देलो भोवडो—	ब्यावण
१३ खाटो बेफळावत	खाटू-खडेलो (पापडदो)

इस गिनती मे १२ के स्थान पर १३ नाम दे दिए हैं। इससे जागाओ द्वारा रखी गई जानकारी की अप्रामाणिकता सिद्ध होती है। ये लोग मनमाने ढग से नामो को घटाते-बढाते तथा बदलते रहते होंगे। ऊपर कोष्ठको मे दिए गए नाम मतातरो के सूचक है। इनके अतिरिक्त भी कई लोग राव नाथू सीहरा (माच) को भी मेवासी मानते है जब कि ये राव पदवीधारी थे। नाहिल देवडवाळ, लाहडो गोठवाळ, केस्यो छाडवाळ आदि नाम भी इसी वर्ग के माने गए है। कुछ जागाओ ने मेवासियो की कुछ और सूचिया भी प्रस्तुत की हैं जिनमे कुछ नाम तो समान ही है पर कई नए नाम भी हैं। इनमे भी कई राव अथवा राजा पदवीधारी व्यक्तियो को ले लिया गया है। इस मान्यता के अनुसार १२ प्रसिद्ध मेवासी, ५ पचवारा के मेवासी तथा ४ खैराड के मेवासी हैं। ये सूचिया निम्न प्रकार हैं—

१	बीलोजी खोडा—	गाव बीलोंत–आमेर तहसील
२.	बीखोजी देवडवाळ—	,, विचलाणों अर्थात् माणु तो-तहसील जमवारामगढ
३	राव भाणोजी सीरा	,, माचु–तहसील जमवारामगढ
४	भीवोजी देला को, ध्यावणा-	,, ध्यावण ,, बस्सी
५.	आहृडोजी मादड	,, सरजोळी (वूज २)जमवारामगढ
६	सकतोजी पाकळ	,, औडेरी–तहसील सपोटरा
७	लावोजी बैनाडा	,, छापराडी ,, जमवारामगढ
८	टावोजी स्योगुण	,, वूज ,, थानागाजी
९	राव बादोजी ब्याडवाळ	,, नडेठ ,, ,,
१०	सालोजी मेवाळ	,, अैटली ,, ,,
११	भाटी राव सूसावत	,, आमेर–कुतलगढ-सीस्यावास-तहसील आमेर
१२	सागोजी मारग	,, गठवाडी–तहसील जमवारामगढ

पचवारा के पांच मेवासी—

१.	हडपोंजी डोबवाळ-	गाव डोब– तहसील लालसोट
२	मुरकल्योंजी बारवाळ-	(मोरा-मारवा) अमावरा, तह० नादोती
३.	करणोजी बैफळावत	(उपनाम खाटोराव) गाव पापडदा तह० दौसा
४	कागोजी (केस्योजी) छाडवाळ–	गाव वैजवाडी ,, ,,
५.	लाहडोजी गोठवाळ–	गाव गोठ–सीकरोडी ,, नादोती

चार मेवासी—

१	पेमो पडिहार	
२.	जोझो खोखर (खैराड)	
३.	सिंगली—सारसोप	(गगापुर-सवाई माधोपुर)
४	?	

इन सूचियो मे उन कई प्रसिद्ध मीणा शासको के नाम छोड दिए गए हैं जो राजा तथा राव आदि पदविया धारण करते थे। पर साथ ही अन्य अनेक समकक्ष व्यक्तियो के नाम भी नही दिए है जो मेवासियो की श्रेणी मे गिने जा सकते थे। लेकिन यह सूची न्यूनाधिक मात्रा मे समाज के बडे-बूढो द्वारा मानी गई है।

मेवासियो के विषय मे यह मान्यता भी है कि ये लोग 'मेवासा' बाध कर रहने के कारण मेवासी कहलाए। 'मेवासी' शब्द प्राय. गीतो मे भी पाया जाता है —

हार मालो हीरो ओ नणद बाई, थारो जी वीरो,
सेजा रो मेवासी (निवासी) ओ नणद बाई, थारो जी वीरो।[1]

'मेवासी शब्द का अर्थ करते हुए बाबू श्यामसुन्दरदास ने उसे 'घर मे रहने वाला, घर का मालिक, किले मे रहने वाला, सरक्षित और प्रबल कहा है।[2] मेवासी तथा मेवास के उपर्युक्त तथा अन्य अनेक गूढ अर्थ प्रकट करने वाले कतिपय कवियो के उद्धरण इस प्रकार प्राप्त हैं—

"मन मेवासी मूडिए केसहि मूडे काहि।
जो कुछ किया सो मन किया, केसा किया कछु नाहि॥
कबिरा मन मेवासी भया, बस करि सकै न कोय।
सनकादिक रिषि सारिखे, तिनके गया विगोय॥
कबिरा हरि की गती का, मन मे बहुत हुलास।
मेवासा भाजै नही, होन चहै निज दास॥
जमने आइ पुकारिया, डडा दीया डारि।
सत मवासी व्है रहा, फासी न परै हमारि"॥-कबीर

१ राजस्थान रा लोक गीत-पृ० ६४-रावत सारस्वत
२ हिन्दी शब्दसागर (१६३०) ५वा खण्ड-पृ० २८१४

गोरस चुराइ खाइ, वदन दुराइ राखै,
मन न धरै वृन्दावन को मवासी ।
सूर स्याम तोहि घर घर सब जानै,
इहा को है तिहारी दासी ॥—सूर

आइ मिले सब विकट मवासी,
चुक्यो, अमल ज्यो रैयत खासी ।—ग्वाल

हुते शत्रु जेते हुते ते भिखारी,
मवासे-मवासीन की जोम भारी—सूदन

हठी मरहठो तामे राख्यो न मवास कोऊ,
छीने हथियार डोलें, बन बन-जारे से—भूषण

सिंधु तरे वडे वीर, दले खल, जारे हैं लक से बक मवासे-तुलसी

कोट किरीट किर्ये मतिराम, करै चढि मोर-पखानि मवासी-मतिराम

कुच उतग गिरिवर गह्यो, मैना मैन मवास-बिहारी

उपर्युक्त उद्धरणो से मेवास तथा मेवासी शब्दो के अर्थ सुस्पष्ट हो जाते हैं। 'मेवास' (मवास) से आशय उस गढ, किले, रक्षा-त्राण-आश्रय-शरण आदि के स्थल से है जो प्रायः दुर्गम गिरिशिखरो पर अथवा ऐसी ही किसी विकट जगह बनाया जाता था, तथा जिसे जीतना या नष्ट करना अत्यन्त कठिन होता था। 'मेवासी' का तात्पर्य ऐसे स्थान के अधिपति उस वीर से है जो किसी शासक के अधीन न रह कर स्वच्छद विचरण करता हुआ अपनी स्वतन्त्र सत्ता का प्रदर्शन करता था और अपने निजी सैन्य-बल से शासक माने जाने वाले लोगो को भयभीत किए रहता था। ऐसे 'मेवासो' को वश मे करना अत्यन्त कठिन कार्य समझा जाता था।

उपर्युक्त छद मे विहारी ने उत्तु ग कुच पर निवास करने वाले मैन (कामदेव) की उपमा के लिए ऊ चे गिरिवर पर मवासा वना कर रहने वाले 'मैना' वीर मेवासी को उपयुक्त समझा है। महाराजा जयसिंह के दरबारी कवि विहारी की यह उक्ति बडी सार्थक है और सिद्ध करती है कि उस समय भी ढू ढाड मे मेवासो मीणो का बडा प्रावल्य था। इस तथ्य का समर्थन 'गुलाव' कवि की एक पक्ति से भी होता है जो रीतिकाल के प्रसिद्ध कवियो मे गिने जाते हैं —

'सुकवि गुलाव कहै, अधिक उपाधिकारी,
मैना मारि–मारि करे अखिल अभूत काज"–गुलाव

मीणो की प्रबल शक्ति का शमन करने मे आमेर के कछावा राजवश को कई शताब्दिया लगी थी, यह तथ्य ऐसे उद्धरणो से अनायास स्पष्ट होता है।

'मवास' शब्द फारसी भाषा से व्युत्पन्न है जहा इसका अर्थ किसी विकट प्रदेश मे वनाए गए सुरक्षा स्थान से है।[1] द्वाश्रय काव्य नामक १२वी सदी के ग्रथ मे भी इसका अर्थ 'जगल' के रूप मे किया गया है। इससे प्रकट है कि उस समय भी इसका यही अर्थ प्रचलित था जो आज ग्रहण किया जा रहा है।[2] ऐसा प्रतीत होता है कि मूल रूप मे यह शब्द ढू ढाड के मेवासी मीणो के लिए ही प्रयुक्त हुआ होगा, पर धीरे–धीरे लोक–व्यवहार मे आने के कारण यह तनिक हेर–फेर से सामान्य वोलचाल के दूसरे अर्थों मे भी प्रयुक्त होने लगा। सामान्यत. 'मेवासा' का अर्थ उस स्थान से लिया जाने लगा जहा शरणागत होने पर अभयप्राप्ति हो जाती है, क्योकि मेवासे पर राज्य-

---

१. इलियट एण्ड डाउसन जि २

२ न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी—(१९३९–४०) जि ४, पृ. ७४

सत्ता का कोई वश चलना अत्यत कठिन होता है। शायद इसी अर्थ मे जोधपुर मे 'मथानिया' नामक गाव के पास पहाड पर बने हुए दशनामी साधुओ के स्थान को भी 'मेवासा' कहते हैं। इसी प्रकार लूणी नदी के किनारे 'खरटिया' नामक गाव मे भी दशनामी साधुओ का स्थान 'मेवासा' ही कहलाता है। दशनामी साधुओ की जागीर के जोधपुर स्थित डेरे को भी 'मेवासा' कहते हैं।

फारसी इतिहास मे 'गिरास' तथा 'मेवास' शब्द साथ-साथ आते हैं जिसका अर्थ यह होना चाहिए कि ये उन जिलो से भिन्न थे जो मुख्य शासको द्वारा सुशासित समझे जाते थे। 'कर्नल वाकर' तथा 'किनलोच फार्बस' ने मेवास (मेहवास) शब्द से आशय उस प्रदेश का लिया है जो दुर्दांत जनजातियो से आबाद हो अथवा जिस विकट प्रदेश मे भूमि के शासको का प्रवेश अत्यन्त कठिन समझा जाता हो। उक्त विद्वानो के अनुसार आधुनिक अर्थ मे मेवास का तात्पर्य निश्चय ही अन्य शासित वर्ग की भाति शासक की अधीनता न स्वीकार कर पर्याप्त स्वतत्रता का उपभोग करने वाले लोगो के स्थान से लिया जाता है। [1]

मध्यप्रदेश मे नर्मदा नदी के किनारे रहने वाले मेवासी सरदारो का उल्लेख करते हुए सर जॉन माल्कम नामक अग्रेज विद्वान ने कहा है कि नर्मदा किनारे के सरदार 'मोवासी' कहलाते हैं, जिससे तात्पर्य उस स्थान से है जो उन्होने अपने रहने के लिए चुना है, क्योकि स्थानीय बोली मे 'मोवास' किसी सुदृढ स्थान को कहते हैं। [2]

क्रैम्ब्रिज हिस्ट्री मे लिखा है कि गुजरात के ब्रिटिश क्षेत्र के गिरासियो तथा मेवासियो की उपद्रवी वृत्ति तथा उनकी बहुसख्यक

---

१. इण्डियन एण्टीक्वेरी–जि ६–पृ ७९ (सन् १८७७)
२ सेण्ट्रल इण्डिया-जि. १ पृ २१६

जनता के दुर्दांत स्वभाव ने ब्रिटिश शासको के सम्मुख बडे भीषरण संकट उपस्थित किए।[१]

मेवासी सरदारो के गावो का वर्णन करते हुए उक्त इतिहास मे फिर लिखा है कि इन गावो मे कभी भी न्याय-व्यवस्था के सामान्य अधिनियमो तथा नियमो से शासन करना सभव नही हुआ। पश्चिमी खानदेश प्रदेश का जिलाधीश तथा पोलिटिकल एजेंट ही इन क्षेत्रो पर समूचे दीवानो तथा फौजदारी अधिकारो का उपयोग करता था।[२]

रेवाकाठा के पोलिटिकल एजेंट जॉन-डब्ल्यू वाटसन ने मेहवासी (मिवासी) शब्द को व्युत्पन्न करने का प्रयास करते हुए लिखा है कि मेरी राय मे इसका अर्थ केवल 'माहीवास'—माही के किनारे रहने रहने वाले हैं, क्योकि गुजरात और कुछ मालवा मे ही इसका प्रयोग है। व्युत्पत्ति का समर्थन करने वालो मे उन्होने डॉ० ब्लूलर और बडोदा के जोशी आत्माराम दूलहराय के नाम गिनाए हैं। जोशी ने एक सस्कृत श्लोक भी बताया है जिसमे माहीकाठे मे निवास करने वाले लोगो की तथाकथित चोरी सबधी आदतो से मेल खाती हुई बात कही गई है—

महो महीमण्डलगा विभाति, प्रभूत चौरा निवसति यत्र।
बालोऽपि चौरस्तरुणोपि चौरचौरान्विना न प्रसवन्ति नार्य. ॥१॥

अर्थात् माहीमण्डल मे निवास करने वाले अधिकाश चोर हैं। जहाँ बालक-तरुण सभी चोर है तथा स्त्रिया चोर के अतिरिक्त किसी अन्य को जन्म ही नही देती।[३]

---

१. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया-जि ६-पृ. १३०
२. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया-जि. ६-पृ. २६१
३ इण्डियन एण्टीक्वेरी–जि. ६–पृ. ७९ (सन् १८७७)

विद्वान लेखक की उपर्युक्त धारणा सही नही मालूम पडती, क्योकि 'मेवास' को 'माहीवास' अर्थात् माही नदी के किनारे रहने वाले मानना युक्तिसगत नही है। मेवास का फारसी भाषा का अर्थ तथा हिन्दी-राजस्थानी भाषाओ मे उसके प्रयोग यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं कि मेवास से आशय विकट स्थान पर बनाए गए रक्षा-स्थल से ही है। माहीकाठे मे रहने वाले मेवासी नामधारी लोगो मे चोरी की आदत देखकर इस प्रकार साधारणीकरण करना भी ठीक नही है। यही भूल अग्रेज शासकों ने समूची जातियो को अपराधी जातिया घोषित करके की थी।

राजस्थान के मेवासी मीणे इस भूमि के मूल स्वामी होने के करण सैंकडो वर्षों तक विजेता शासको से युद्ध करते रहे थे और उनकी अधीनता स्वीकार न कर लगातार अपनी स्वतत्र सत्ता को प्रकट करते रहते थे। भूमि के आदिवासी होने के कारण विकट से विकट स्थान भी उनके लिए बहुत सरल थे, अत. उन्हे वश मे करना बडा कठिन कार्य था। इसीलिए मेवासी मीणो के गीत उनकी वीरता की प्रशस्ति के रूप मे आज भी गाए जाते हैं।

पचवारा—मीणो के सबध मे बहुधा प्रयुक्त यह एक और प्राचीन शब्द है जिसका इतिहास शोध की अपेक्षा रखता है। कर्नल टॉड ने इसे मीणो की मूल, पवित्र और अमिश्रित पाच बडी जातियो द्वारा बना होने के कारण 'पचवारा' कहा जाना माना है। इनका मूल निवास 'काळीखोह' नामक पर्वत श्रेणी मे था, जो अजमेर से लगभग जमुना के तीर तक फैली हुई है, और यही इन्होने अम्बा माता के नाम से, जिसे मीणा लोग 'घाटाराणी' कहते हैं, आम्बेर की स्थापना की। इसी श्रेणी मे मीणो के मुख्य शहर 'खोहगग', 'माच' तथा अन्य अनेक बडे नगर थे।[1]

---

१. अनल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान–जि० २—
पृ० २०२ टॉड

मुनि मगनसागर की मान्यता है कि इन पाचो मे एक भुड गोत्रीय शाखा थी जो अजमेर से जूना नदी तक राज्य करती थी । मौरेज नदी के तीरवर्ती प्राती मे पच भड अति प्रसिद्ध हुए हैं। इमी कारण इस प्रदेश का नाम पचभडा पडा था जिसको आजकल पचवारा कहते हैं। इस प्रात के मीणो का आज भी अन्य शाखाओं की अपेक्षा विशेष मान है । [1]

एक जागा द्वारा रचित छद के अनुसार पाच प्रसिद्ध गोत्रो अथवा व्यक्तियो का निवास होने के कारण ही 'पचवारा' कहलाया—

पाचा को पचवारो वसै, वारा वसै इक ठोड ।
मुरकल्या वारवाळ थारी घाली लागता, भाजग्या वावन राजा चीतोड ॥

जिन पाच के वसने से 'पचवारा' का नामकरण हुआ उनमे 'मुरकल्या वारवाळ' भी एक था। ये पाचो नाम पहिले वताए जा चुके हैं ।

'पचवारा' के नाम से जाना जाने वाला क्षेत्र जयपुर जिले की तहसील लालसोट के पर्वतो से पश्चिम और उत्तर की ओर वसा हुआ है । इसकी सीमा इस प्रकार वताई गई है–पूर्व मे वासखो (नई-नोहान) से पश्चिम मे आडा पर्वत मे पपळाद देवी तक तथा दक्षिण मे मोरेल नदी और लालसोट के घाटे से उत्तर मे सैथल तक । कहते हैं सवत् १३०० के आस-पास यह क्षेत्र चरम उन्नति पर था ।

'पचवारा' शब्द के अनुसार यह तो निश्चित ही होना चाहिए कि 'पाच' की सख्या से इसका सवध है। यह सख्या राजस्थानी सस्कृति मे बहुप्रचलित है । पाच पच, पचपीर-ये शब्द पाच की सख्या का महत्व

---

१ मीनपुराण भूमिका—पृ० ३०—मगनसागर

प्रदर्शित करते हैं। 'वारा' से तात्पर्य 'वाट' से ही रहा होगा। वैसे 'वाट' का अपभ्रश रूप 'वाड' माना गया है, जैसे–मेवाड (मेव–वाट) मारवाड (मरुवाट) आदि। पर हो सकता है कि 'पचवाडा' के स्थान पर 'पचवारा' कहने लग गये हो। 'भड' गोत्रीय लोगो के नाम पर 'पचवाडा' मानने का मुनिजी का सिद्धात इसलिए नही स्वीकार किया जा सकता कि इस क्षेत्र मे न तो मीणो का ही कोई भड गोत्र रहा है तथा न अन्य कोई 'भड' नामक जाति ही। इसलिए पाच प्रसिद्ध जातियो अथवा पाच प्रसिद्ध व्यक्तियो के नाम से ही 'पचवारा' सज्ञा का प्रचलन ठीक लगता है, जैसी कि कर्नल टॉड की भी मान्यता हैं। 'पच द्रविड' तथा 'पच गौड' नाम से जातियो के विभाजन अन्यत्र भी प्रचलित हैं। प्राचीन शासन प्रणाली मे भी पाच सभाओ का बडा महत्व था। ये सभायें समाज के पाच विभागो का प्रतिनिधित्व करती थी। प्रान्तीय शासन प्राय. गावो मे जातियो मे विभाजित होता और उन जातियो के प्रतिनिधि मिलकर अपने निर्णय लेते। इन निर्णयो का स्थानीय महत्व सर्वोपरि होता था।[1] सभव है इस प्रकार के नामकरण के मूल मे ऐसा कोई जातीय सामाजिक गठन रहा हो।

ऐसे नामो के अतिरिक्त राजस्थान मे मीणो के प्रधान वासस्थल **ढू ढाड़, खैराड, हाड़ोती, मेवात, मेवाड़, मेवल, मैनाल, वागड़, गोड़वाड़, जालोर, मेरवाड़ा, सुआलक** तथा **सेखावाटी** नामक भूभाग हैं। १९६१ की जन–गणना के अनुसार उपर्युक्त क्षेत्रो की जिलेवार मीणा जन सख्या के लिए पुस्तक के अ त मे सवधित परिशिष्ट देखें। राजस्थान के २६ जिलो मे मीणाप्रधान जिलो को छोडकर शेष ९ मे मीणो की आबादी नगण्य ही है। इन जिलो मे भी अलवर–भरतपुर के मेवो तथा मेरवाडा

---

१. कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ़ इण्डिया जि० १ पृष्ठ ५४०

के मेरो की गणना मीणो मे नहीं की गई है। अत. उन्हे मिलाकर गिनने से यह सख्या बहुत अधिक हो जाती है।

ढू ढाड मे प्रधानतः जयपुर जिला, अलवर तथा टोंक व सवाई माधोपुर जिलो के कुछ भाग आते है। मेवात मे अलवर जिला तथा भरतपुर का कुछ भाग और पजाब का गुडगाव जिला आता है। खैराड मे सवाई माधोपुर, ट नवाडा तथा बूदी जिलो के भाग माने गए है। हाडोती मे बूदी, कोटा तथा झालावाड जिले आते है। गोडवाड मे सिरोही और पाली के भाग है। जालोर जिला पृथक ही है। मेवाड मे मेवल, मैनाल उदयपुर, चितौड तथा भीलवाडा का कुछ भाग आता है। डूगरपुर, बासवाडा जिले वागड भूमि के है। मेरवाडा मे अजमेर जिले के अतिरिक्त समीपवर्ती भीलवाडा तथा पाली जिले के कुछ भाग आते है। अधिकाश सुवालक नागौर जिले के अ तर्गत है। सेखावाटी मे सीकर-झूझनू जिले है।

ढू ढाड—जयपुर जिले की भूमि का प्राचीन देशी नाम ढू ढाड है और यहा की भाषा का ढू ढाडी। ढू ढाड की सीमा बताते हुए मीणो के एक जागा ने कहा है—

उत्तर टोक टोडा सै, सैथळ सै आथूणो धरा।
इसडा मिनख बसै ढू ढाड मे, परवत सै उरा उरा॥

ढू ढाड की यह सीमा वर्तमान समूचे जयपुर जिले को आत्मसात् करती हुई, अधिकाश टोक को लपेटती हुई तथा सवाई माधोपुर एव अलवर की उत्तरी व पश्चिमी सीमाओ को बेधती हुई अजमेर तथा नागौर जिलो की सीमाओं पर परबतसर के पास समाप्त हो जाती है।

इस प्रदेश का नामकरण विशेषज्ञो की चर्चा का विषय रहा है। लोक-किवदन्तियों मे भी इस विषय की कल्पनायें की गई हैं। लोक प्रच-

लित धारणा के अनुसार अजमेर के चौहान राजा वीसलदेव ने जोवनेर के पास ढूढ' के पहाड पर अपने प्रजोत्पीडन सम्बन्धी कामो का प्रायश्चित्त करने के लिए तपस्या की थी। किवदन्ती के अनुसार वीसलदेव राक्षस योनि मे चला गया और प्रजा को तग करने का पूर्व जन्म का कार्य करता रहा। कहते हैं जब वीसलदेव के पोते ने राक्षस की क्षुधा शान्त करने के लिए अपने आपको समर्पित किया तो अज्ञात स्नेह से राक्षस का हृदय द्रवित हो उठा और वह स्थान छोड कर यमुना को तरफ चला गया।[1]

एक किवदन्ती के अनुसार वीसलदेव चौहान एक ऋषि कन्या की पवित्रता नष्ट कर देने के कारण शापग्रस्त होकर राक्षस बना। उसकी चौथो पीढी मे सोमेश्वर हुआ। वह राक्षस सम्बन्वी वात जानता था। एक बार एक ब्राह्मण अपनी स्त्री से दु:खी होकर राक्षस के पास गया। राक्षस ने उसे आने का कारण पूछा। कारण जानकर राक्षस ने उसे बहुत सा धन दिया और कहा इससे तुम्हारी स्त्री प्रसन्न हो जाएगी पर बदले मे तुम्हे एक काम करना होगा और वह यह कि तू सोमेश्वर से जाकर यह कहना "मैं (राक्षस) शूकर का रूप धारण करके वन मे फिरू गा और तुम इस प्रसग मे मेरा वध करके मेरे मास का भक्षण करना। इससे तेरा तो उद्धार होगा ही वरन् जो इस मास को खायेगा उसको भी पुत्र की प्राप्ति होगी।" सोमेश्वर अपने विश्वासपात्र साथियो को लेकर वहा गया और राक्षस ने जैसा कहा था वैसा ही किया। इससे उसके पृथ्वीराज उत्पन्न हुआ और उसके साथियो के पृथ्वीराज के सामत। उस शूकर की जीभ भट्ट के भाग मे आई जिससे वरदाई चन्द की उत्पत्ति हुई थी।[2]

उसी 'ढूढिया' नामक राक्षस के नाम से इस धरती का नाम

---

१. अनल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान जि. २, पृ २८०
२. रासमाला—फार्बस (गोपालनारायण वहुराकृत हिन्दी अनुवाद) पृ. २००–२०१

ढू ढाड पडा । चू कि राक्षस के भय से जगलो तथा पहाडो से ढको इस भूमि मे वहुत कम लोग गुजरते थे अत. यह प्रदेश वीरान ही रहा । इसी अर्थ मे आज भी खण्डहर तथा सुनसान स्थानो को ढ ढाड अथवा ढू ढाड कह कर पुकारा जाता है ।

भू पू जोबनेर ठिकाने के स्वामी स्व. रावल नरेन्द्रसिंह के अनुसार चौहान नरेश वीसलदेव ने इस प्रदेश के आततायियो (मीणो) का दमन करने के लिए ढू ढ के पहाड पर चौकी स्थापित कर हरेक मेवासे को भग किया तथा एक कोने से दूसरे कोने तक ढू ढ-ढू ढ कर उनको समाप्त किया । इसी कारण इस प्रदेश का नाम पुराने मत्स्य देश से बदल कर ढू ढाड पड़ गया ।[१]

कर्नल टॉड की मान्यता है कि ढू ढ के पहाड पर वीसलदेव ने प्रायश्चित्त किया था । वह मुसलमान बना दिया गया था । उस पहाड को आज भी 'वीसल का ढू ढ' कहते हैं । ढू ढ पहाड से हो ढू ढाड हुआ । उसमे चौहानो के पूर्वजो की हड्डिया दफनाई गई हैं ।[२]

'नाथावतो का इतिहास' के लेखक श्री हनूमान शर्मा ने आमेर के ढू ढाकृति पहाड के नाम से ढू ढाड नाम पडने की बात लिखी है । कई लोग इस प्रदेश की मुख्य नदी 'ढू ढ' के नाम मे ढू ढाड की व्युत्पत्ति खोजते है । भाषाविज्ञान के विद्यार्थी 'धु धुवाट' से ढू ढाड व्युत्पन्न मानते हैं ।[3]

धुन्धु राजा वलि के सेनापति मधु का पुत्र था । इक्ष्वाकुवशीय वृहद्रथ के पुत्र कुवलाश्व ने धुन्धु को मारकर अपना नाम 'धुन्धुमार' रखा । 'वायु' तथा 'ब्रह्म' पुराणो मे कुवलाश्व द्वारा 'धु धु' के मारे जाने

---

३ ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ जयपुर (१६३६) पृ २१-२२—नरेन्द्रसिंह

४ ऐनल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान—जि. २, पृ ३५५-३६८

३. लोकसाहित्य-जनवरी १६६८—पृ० ८५-डा० बद्रीप्रसाद पचोली (राजस्थान—कुछ प्राचीन नाम)

की कथा विस्तार से दी गई है । महाभारत मे भी लिखा है कि धुधु ने 'उज्जालक' नामक रेतीले विशाल समुद्र के नीचे अपने आपको छिपा लिया, जिसे कुवलाश्व तथा उसके लडको ने खोद कर निकाला । उनके मार्ग मे आग की भयकर लपटें आई जिनकी उन्होने कोई परवाह नही की । महापराक्रमी धुन्धु के भय से त्रस्त उत्तङ्क नामक ऋषि ने, जिसका आश्रम इस बालुकामय समुद्र के समीप ही 'मरुधन्व' प्रदेश मे था, राजा कुवलाश्व से प्रार्थना कर धुन्धु का वध कराया । ब्रह्मा से वरप्राप्त धुधु ने कुवलाश्व के सहस्राधिक पुत्रो को भस्मीभूत और उनके शस्त्रो को चूर्ण कर दिया ।[1]

विष्णुपुराण मे भी यही वर्णन मिलता है । प्रसिद्ध विद्वान 'विलसन' का विचार है कि यह घटना शायद कोई प्राकृतिक भूचाल या ज्वालामुखी आदि के विस्फोट से सबधित है । पर जनरल कनिंघम ने अपनी सर्वे रिपोर्ट मे लिखा है कि उन्होने जयपुर के समीप 'गलता' मे 'धुन्धु' की गुफा देखी है और यह भी लिखा है कि 'ढूढ' नदी के दोनो किनारो पर उडने वाले बालू रेत के बथूलो से शायद यह अर्थ लगाया गया है ।[2]

उपर्युक्त मत-मतातरो से हम यह निष्कर्ष निकालना चाहेगे कि प्रसिद्ध पौराणिक वीर धुन्धु की स्थली होने के कारण ही इसका नाम 'धुन्धुवाट' अथवा 'ढूढाड' पडा । यद्यपि मीणा समाज के लोग अपने आपको तथाकथित क्षत्रियो में मानते आये है, पर यदि उन्हे धुन्धु के वशज मानने की कल्पना भी की जाए तो बुरा नहीं होगा । उपर्युक्त

---

१. श्री महाभारत-खडन[1] वन पर्व-अध्याय २०१-२०४ पृ० ६५७-६६२ (गीता प्रेस)

२. आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया-जि० २० (१८८२-८३)—मेजर जनरल ए० कनिंघम

पौराणिक कथा से स्पष्ट है कि इसी भूमि के आदिवासी लोगो को असुर-दानव आदि की सज्ञा देकर आर्यों ने उनसे युद्ध किया था। प्रसिद्ध इतिहासकार पृथ्वीसिंह मेहता ने अपने इतिहास—हमारा राजस्थान-मे लिखा है कि इसी भूमि पर कमलनाभ विष्णु को मधु कैटभ नामक दो महाबली राक्षसो से पाच हजार वर्ष तक मल्ल युद्ध करना पडा था।[1]

श्री मेहता इसे पुष्करारण्य की धरती मे मानते हैं। अयोध्या के रघुवशो निकु भ क्षत्रियो तथा बाद मे ग्वालियर के कुशवशी कछावो ने भी इक्ष्वाकुवशी कुवलाश्व की परपरा मे ही इस धरती के मूल निवासियो का दमन कर उनका राज्य हस्तगत किया। इस दृष्टि मे ढू ढाड के आदिवासी मीणो का क्षत्रियो के साथ सघर्ष सहस्त्रो वर्षो से चला आता हुआ माना जाना चाहिए।

मेवात—अलवर, भरतपुर तथा पजाब के गुडगाव जिलो के अधिकाश प्रदेश को मेवजाति का वास-स्थान होने के कारण 'मेवात' कहते हैं। पहिले इसे 'मेवास' (मेवो का वास) नाम से भी पुकारा जाता था।[2] मालूम होता है मुसलमानो के समय से इसका नाम मेवात पडा। वैसे मेवाती और मेव दो पृथक जातिया यहा रहती हैं। आज दोनो ही मुसलमान हैं पर कभी दोनो ही हिन्दू थी। मेवातियों का उद्गम करौली के राजा तहनपाल (सवत् ११३०) यादव से माना

---

१. श्री दुर्गासप्तशती-अध्याय १, श्लोक ८९-१०४ (गीता प्रेस)

२. सुववसिदेस सोमेस, पेस मेवास महीपति।
कुवरप्पन पृथिराज, तेज प्रगट्यौ तिहिदीपनि॥—
पृथ्वीराजरासो-भाग १-पृष्ठ १७५-कविराज-मोहनसिंह
(साहित्य सस्थान, उदयपुर)

जाता है तथा इनका शासक वर्ग खानजादा कहलाता है।[१] मेव साधारण नागरिक हैं और अपने आपको मीणो से निकले मानते हैं। मेजर पाउलेट ने भी मेवातियो को शासक तथा मेवो को शासित जाति माना है।[२] प्रसिद्ध इतिहासज्ञ मोनियर विलियम्स ने लिखा है कि मेवात का नामकरण मेवो के नाम से ही हुआ है, जो अलवर जिले मे भी हैं। ये लोग अपने आपको राजपूतो से निकला मानते हैं, पर कुछ विशेषज्ञ इन्हे उन मीणो का एक वर्ग वताते हैं, जो मुसलमान बन गए थे।[३] इतिहासकार स्व० श्री जगदीशसिह गहलोत इन्हे शक जातीय मानते हैं।[४] मौलवी अबूमुहम्मद अब्दुल शकूर मेवाती कृत 'तारीख मेवात' मे इनकी उत्पत्ति राजपूतो से मानी गई है। पर मेजर पाउलेट ने इनमे राजपूतो व मीणो का सम्मिश्रण माना है।[५] गहलोतजी के अनुसार मेवो को सन् १३६० मे मुसलमान बनाया गया। मुसलमान धर्म मे दीक्षित करने वाले तीन व्यक्तियो-हजरत मीरान, हजरत सैयद सालार तथा ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती-मे सर्वप्रमुख काम हजरत सैयद सालार का है, क्योकि सैयद सालार के झण्डे की मेव लोग पूजा भी करते हैं व इनके कई मेले भी लगते हैं। हजरत सैयद सालार महमूद गजनवी के साथ भारत आया था।[६] फिरोज तुगलक के समय मे भी खानजादो तथा अधिकाश मेवो को मुसलमान बनाए जाने की बात मानी जाती है, यद्यपि इस धर्म-परिवर्तन का जिक्र उसके इतिहास मे स्पष्ट रूप से नही मिलता। पर ऐसी घटना अवश्य ही भयकर मारकाट के बाद हुई होगी। फिरोज

१ आर्क्योलिजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया जि० २० (१८८२-८३) पृ० ५-६—कनिघम
२ राजस्थान की जातिया—पृ० ३८—लोहिया
३ इण्डियन एण्टीक्वेरी—जि० ८, पृ० २०६-२१० (१८७६)
४ राजपूताने का इतिहास—अलवर राज्य, पृ० २२४—गहलोत
५ अलवर गजेटियर पृ० ३८—मेजर पाउलेट
६ राजपूताने का इतिहास—अलवर राज्य पृ० २२५—गहलोत

के जीवन-चरित्र मे इसकी झलक मिलती है। उसके अनुसार उसने तीन विभिन्न स्थानो पर मूर्तियो को तोडा, देव मदिर ध्वस्त किए और मूर्ति-पूजको को मौत के घाट उतारा। उसमे आगे लिखते हुए कहा गया है कि "वहुत से विधर्मियो को इस्लाम कवूल करने पर विवश किया और उन्हे 'जजिया' से माफी भी दी। इस खवर से वहुत से हिंदू मुसलमान वनने आए और उन्हे मुसलमान वनाया गया। दिन पर दिन हर तरफ से लोग आने लगे और उन्हे मुसलमान वनाकर जजिया से मुक्त किया गया तथा अन्य आदर और इनाम भी दिए गए।'[1] मेजर पाउलेट ने भूतपूर्व अलवर रियासत के रेवेन्यू सेटलमेट के समय खानजादो मे निम्नलिखित हिन्दू रस्मे खोज निकाली थी :—[2]

१ शादिया ब्राह्मण करवाते है। २ हिन्दुओ के विवाहो की कुछ रस्मे इनमे है। ३ स्त्रिया खेतो मे काम नही करती।

मेवाती खानजादो मे कई इतिहासप्रसिद्ध वीर तथा शासक हो चुके है। मेवात पर इन लोगो का राज्य शताब्दियो तक रहा है। वावर ने लिखा है कि हसनखा (मेवाती) ने अपने पूर्वजो से मेवात का राज्य प्राप्त किया जो लगातार दो सौ वर्षों से इस पर राज्य करते आ रहे थे।[3] इसी हसनखा मेवाती ने राणा सागा के साथ मिलकर वावर से युद्ध किया था। 'तारीख सलतीन अफगाना' के लेखक अहमद यादगार ने हसनखा को कई पीढियो से राज्य करने वाले शाही खानदान का लिखा है। अवुल फज्ल भी 'आईने अकवरी' की चौथी पुस्तक मे

---

१ आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया-जि० २०, पृ० ११-१४-१५ (१८८२-८३)-कनिंघम

२ राजपूताना गजेटियर-जिल्द ३-पृ० २०२-पाउलेट

३ वावरनामा-पृ० ३६८ ३६९

खानजादो की उत्पत्ति 'जनुहा' (जादोन) राजपूतो से मानते हैं। सवत् १०७० से १३६० तक खानजादो के पूर्वज यदुवशी रहे और राजा सभरपाल व उसके भाई शिवपुरपाल ने क्रमश: बहादुरखा तथा छज्जूखा नाम धर मुसलमान धर्म ग्रहण किया।[1] बहादुरखा नाहर ने निहत्थे होकर नाहर को मारा, जिस कारण फिरोज ने उसे 'बहादुर नाहर' नाम दिया। तैमूर के आक्रमण के समय यह १०-१२ वर्ष तक सर्वाधिक प्रभुत्वसम्पन्न व्यक्ति था। नाहर को उसके ससुर राणा जामूवास ने इसलिए मार डाला वताते हैं कि वह मुसलमान बन गया था। बहादुर के पुत्र अलाउद्दीन ने राणा को मारा।

बहादुरखा का पोता जलाल भी बडा पराक्रमी था। उसने १४४६ ई० मे आम्बेर पर आक्रमण कर उस पर अधिकार किया और उसका एक फाटक उठाकर ले गया जो अलवर जिले मे 'इन्दोक' नामक स्थान पर आज भी है। जलाल खानजादो का आदर्श वीर है और वे इसके गीत गाते अघाते नही।[2]

मेवातियो को यादव राजपूतो से उत्पन्न मानकर भी उनका इतना वर्णन देने का आशय यही है कि मेवातो (खानजादा) शासक वर्ग के थे। पर मेव नाम से जानो गई वहुसख्यक जाति प्राय शासित ही रही है। यही मेव जाति अपने आपको मीणो का एक वर्ग मानती है। मीणो की तरह इनकी भी १२ पालें हैं। इनके गोत्र चालीस वताये जाते हैं। पालो मे ६ के नाम समान ही हैं। यादवो से छिरकिलात, डालोत, डेमरोत, नाई तथा पुडलोत पालें, तवरो से वालोत, दरवार, कालेसा, लुडावत व रत्तावत पालें, कछावो से धैगल पाल तथा

---

१. अलवर राज्य का इनिहास–पृ० १७–पिनाकीलाल

२. आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया (१८८२-८३)–जि० २०, पृ० १८-१९—कनिघम

बडगूजरो से सिंगल पाल–कुल १२ पालें इस प्रकार गिनाई जाती हैं। चालीस गोत्रो मे भी ये राजपूतो से ही उत्पत्ति गिनाते है। अलवर के पास के पाच गावो के मेव अपने आपको पडिहार कहते हैं। [१] एक अन्य मत के अनुसार १३ पालें तथा ५२ गोत्र वताए जाते हैं। [२]

उत्पत्ति चाहे कुछ भी रही हो पर मेव मेवात मे वहुसख्यक हैं। अलवर का पूर्वी आधा भाग, भरतपुर का उत्तरी आधा भाग तथा गुडगाव का दक्षिणी आधा भाग और कुछ मथुरा का हिस्सा मेवो का है। मेवात मे मेवो की सख्या सन् १८८२–८३ मे निम्न प्रकार थी [३]—

गुडगाव– १,१४,६६३
अलवर– ९७,०००
भरतपुर– ४७,४७६
———————
२,५९,१६९
———————

इस प्रकार राजस्थान प्रदेश मे मेवो की सख्या १,४४,४७६ थी। १९४१ मे प्राय. ६० वर्ष बाद अकेले अलवर राज्य मे यह सख्या १,३४,२४१ हो गई। [४] अलवर मे जमीदारो का एक तिहाई भाग मेवो का है जिससे इनका कृषिकर्मी होना पाया जाता है। मुसलमान होते हुए भी अिनका रहन–सहन हिन्दू है। अिनकी स्त्रिया पहाडी जातियो की तरह शरीर पर 'गोदना' करवाती है। देशी गाढे की ओढनी तथा लहगे पर दस्तकारी होती है। गोडवाल गोत्र के मेव मिहरावखा (भिरका से ७ मील दूर 'रावली' गाव) की १८८२ मे मृत्यु होने पर

---

१ आ स ऑफ इण्डिया (१८८२–८३)—जि २०, पृ २३–२४–कर्निघम
२ अलवर राज्य का इतिहास—पृ १६—पिनाकीलाल
३ आ स ऑफ इण्डिया—जि. २०, पृ. २४–कर्निघम
४ राजपूताने का इतिहास–अलवर राज्य, पृ. २२५–गहलोत

२६–२७ फरवरी १८८३ को सारे देश के मेवो को मृत्यु-भोज पर बुलाया गया और दस हजार लोगो का भोजन हुआ। इसमे १०० मन चीनी, २०० मन चावल तथा ३० मन घी लगा। मिरासियो को सोने की मोहरें, पोशाकें तथा ऊटो का दान दिया गया।[१] यह सारी प्रथा हिन्दुओ के समान ही है। परपरागत गीतो तथा कथाओ मे मेवो और मीणो के विवाह सबधो की चर्चा भी की जाती है जिसका वर्णन इस पुस्तक मे उपयुक्त स्थल पर अन्यत्र किया जाएगा।

मेरवाडा—लगभग ६५० वर्ग मील तथा सत्तर हजार की आबादी (१८७२ की जनगणना) का यह प्रदेश उत्तर मे मारवाड तथा अजमेर से, दक्षिण मे मेवाड से, पूर्व मे अजमेर और मेवाड से तथा पश्चिम मे मारवाड से घिरा हुआ है। मेरवाडा का नामकरण 'मेर' नामक जाति से ही हुआ है। कर्नल टॉड ने लिखा है कि मैना या मेना, मेर, मेरोत आदि सभी पहाडी जातिया 'मेर' शब्द से सम्बन्ध रखती हैं, जिसका अर्थ 'पर्वत' है।[२] विशेषज्ञ लोग मीणो तथा मेरो को एक ही मानते हैं। कार्लाइल नामक पुरातत्वविद् ने लिखा है कि मेर शक्ल-सूरत मे कुछ-कुछ मीणो से मिलते हैं।[३]

मेरवाडा के वर्तमान निवासी अभेद रूप से 'मेर' कहलाते हैं। इसका अर्थ पर्वतो के निवासी होने से ही है। यह नाम किसी जाति या कबीले का न होकर आडावळा पर्वत श्रेणी के उस भाग मे रहने वाले लोगो के लिए ही प्रयुक्त होता है। मेरवाडा की दो प्रधान जातिया

---

१ आ० स० ऑफ इण्डिया, जि० २०, पृ० २५—कनिंघम
२ ऐनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान–जि० २, पृ २८३—टॉड [१९४१ की जनगणना मे रावत १,१३,४६० तथा मेरात २७९७७, कुल १,४१,४३७ मरे थे।]
३ आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया (१८७१–७२–७३) जि० ६, पृ० २—कार्लाइल

'चीता' और 'बरड' नामक है जो २४-२४ गोत्रो मे परपरागत रूप से विभाजित है। पर धीरे-धीरे गोत्रो की सख्यायें बढती जा रही है और हरेक मे प्राय. ४० गोत्र हो गए हैं। [1]

ये लोग अपनी उत्पत्ति उन राजपूत सरदारो से मानते हैं जिन्होने मीणा जाति की स्त्रियो से सम्बन्ध जोड लिया था। कर्नल टॉड ने भी इन्हे मीणा जाति की ही एक शाखा माना है, परन्तु मिस्टर इलियट ने यह शका प्रकट की थी कि ये लोग इडोसीथियन जाति के उन मेडो के स्मृति चिन्ह है जिन्होने मध्यएशिया से भारत मे प्रवेश किया था। [2]

चौहान मीणा—कर्नल टॉड ने यह निश्चयपूर्वक लिखा है कि 'चीता' और 'बरड' नामक जातिया मीणा ही है तथा ये लोग परम्परागत रूप से भी अपने पूर्वज का मीणा होना ही बताते है। [3] दोनों जातिया अपनी उत्पत्ति अजमेर के अतिम चौहान राजा पृथ्वीराज से मानती हैं और कहती है कि पृथ्वीराज के पुत्र 'जोध लाखण' ने बूदी के निकट आक्रमण मे पकडी गई एक मीणी को रजपूतानी समझ कर उससे विवाह कर लिया था। जब उसे अपनी भूल ज्ञात हुई तो उसने उक्त मीणी महिला तथा उससे हुए दो पुत्रो, अणहल और अनूप, का त्याग कर दिया। ये दोनो युवक व्यावर मे 'चाग' नामक स्थान पर पहुँचे जहा गूजरो ने उनका स्वागत किया।

---

१ अजमेर-मेरवाडा सेटलमेन्ट रिपोर्ट-(१८७५) पृ ३८
  जे डी. ला टाउचे

२. राजस्थान की जातिया—पृ ३८—लोहिया

३. अॅनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान—जि० १,
  पृ० ६८०—टॉड

एक दिन दोनो भाई एक वड के पेड के नीचे विश्राम कर रहे थे और इस प्रकार वात करने लगे कि यदि उनकी वश-परम्परा का चलना ही लिखा है तो यह पेड वीच मे से दो टूक हो जाए। कहते हैं उनके इस प्रकार बात करते ही वह पेड विस्मयजनक रूप से फटकर दो टूक हो गया। इस घटना को सौभाग्यसूचक मानकर उन्होने हिम्मत की और अपनी भविष्य की योजना बनाई। इस सवध का एक दोहा भी प्रचलित है जो निम्न प्रकार है—

चरड से चीता भयो, अर बरड भयो वड गात।
साख एक से दो भये, जगत बखानी जात॥

'चरड' की आवाज अणहल के कानो मे पहुची जिससे चीतो की उत्पत्ति हुई तथा 'बरड' की आवाज अनूप नेसुनी जिससे 'वरड' जाति निकली। इन दोनो जातियो के गाव अजमेर मे ५१, व्यावर मे २४१, तथा टाडगढ तहसील मे ८८ हैं।[1]

'वीरविनोद' के लेखक कविराजा श्यामलदास ने 'स्केच ऑफ मेरवाडा' नामक पुस्तक के हवाले से लिखा है कि पृथ्वीराज ने तीज की पूजा करती हुई जिम मीणी को वूदी मे पकडा था उसका नाम 'सहदे' था तथा वह आसावरी (अषाहरी) जाति की थी। 'चाग' के जिन गूजरो के पास सहदे अपने दोनो पुत्रो को लेकर जा रही थी उन्हे चन्देल गूजर कहा गया है।[2]

चीता—"जिन गूजरो ने अणहल तथा उसकी माता को चाग मे प्रश्रय दिया था उन्हे अणहल ने समय पाकर खदेड दिया। वीरविनोद मे अणहल तथा अनूप के वशजो का पाच पीढी तक चाग मे रहना लिखा है तथा पाचवी पीढी मे अणहल के दो पुत्रो—कान्हा तथा काळा मे क्रमश

1. अजमेर-मेरवाडा सेटलमेट रिपोर्ट-पृ ३८-३९
2 वीरविनोद पृ, १९८-श्यामलदास

'चेता' तथा 'वड' नामी दो शाखाओ का निकलना लिखा है। जोध लाखण के वशजो ने इन पर हमला किया तो ये लोग टाडगढ के चेटण नामक गाव मे जा बसे और वहाँ परस्पर विवाह भी करने लगे। बाद मे काळा के वशज केलवाडा (मेवाड) मे और कान्हा के चाग मे जा बसे। कालान्तर मे कान्हा के वश वालो ने मीणा, भील और धाकड मीणा लोगो मे विवाह प्रारम्भ किया जिसमे २४ शाखा कान्हा के वश वालो की तथा २४ काळा के वश वालो की–कुल मिलाकर मेरो की ४८ शाखायें हुई।[१] "अणहल के वशज शीघ्र ही सख्या मे बढते गये और इतने मजबूत हो गए कि उन्होने धीरे-धीरे मेरवाडा के सभी मजबूत स्थानो पर अधिकार कर लिया। इन्होने झक, शामगढ, लुलुआ, हट्टूण, कूकरा, कोटकिराणा तथा नाई आदि अनेक स्थानो की नीव डाली। ऐसा प्रतीत होता है कि इनके वशजो ने शेष सभी मेरो को अपने अधीन कर लिया था, क्योकि ये मेरो की ऐसी १६ जातिया गिनाते है जो इन्हे खेती-वाडी तथा लूट के माल का भी चौथा बाटा देती थी। इस जाति के अधिकार मे आज भी (सन् १८७५ मे) ब्यावर के समूचे ११७ गाव तथा कोटकिराणा और टाडगढ के क्रमश. १६ व ५३ गावो के भाग हैं। अजमेर मे चीतो के २१ समूचे खालसा और जागीरी गाव है। केवल चार गावो को छोडकर ये लोग शेष सभी अजमेर–मेरवाडा मे पाये जाते हैं।"[२]

चीतो की उपजातिया—"चीतो की अनेक उपजातियो मे सर्वाधिक सख्या वाला विभाग 'मेरात' लोगो का हैं। मेरात का अर्थ प्राय मुसलमान मेर से लिया जाता है, पर इसकी उत्पत्ति मेर नामक व्यक्ति से हुई है जिससे 'काठात' तथा 'गोरात' नामक उपजातिया

---

१ वीरविनोद–पृ १६८—श्यामलदास

२. अजमेर–मेरवाडा सेटलमेट रिपोर्ट–पृ ३८–३९

एक दिन दोनो भाई एक बड के पेड के नीचे विश्राम कर रहे थे और इस प्रकार बात करने लगे कि यदि उनकी वश-परम्परा का चलना ही लिखा है तो यह पेड बीच मे से दो टूक हो जाए। कहते हैं उनके इस प्रकार बात करते ही वह पेड विस्मयजनक रूप से फटकर दो टूक हो गया। इस घटना को सौभाग्यसूचक मानकर उन्होने हिम्मत की और अपनी भविष्य की योजना बनाई। इस सबध का एक दोहा भी प्रचलित है जो निम्न प्रकार है—

चरड से चीता भयो, अर बरड भयो बड गात।
साख एक से दो भये, जगत बखानी जात॥

'चरड' की आवाज अणहल के कानो मे पहुची जिससे चीतो की उत्पत्ति हुई तथा 'बरड' की आवाज अनूप नेसुनी जिससे 'बरड' जाति निकली। इन दोनो जातियो के गाव अजमेर मे ५१, व्यावर मे २४१, तथा टाडगढ तहसील मे ८८ हैं।[1]

'वीरविनोद' के लेखक कविराजा श्यामलदास ने 'स्केच ऑफ मेरवाडा' नामक पुस्तक के हवाले से लिखा है कि पृथ्वीराज ने तीज को पूजा करती हुई जिम मीणी को बूदी मे पकडा था उसका नाम 'सहदे' था तथा वह आसावरी (अपाहरी) जाति की थी। 'चाग' के जिन गूजरो के पास सहदे अपने दोनो पुत्रो को लेकर जा रही थी उन्हे चन्देल गूजर कहा गया है।[2]

चीता—"जिन गूजरो ने अणहल तथा उसकी माता को चाग मे प्रश्रय दिया था उन्हे अणहल ने समय पाकर खदेड दिया। वीरविनोद मे अणहल तथा अनूप के वशजो का पाच पीढी तक चाग मे रहना लिखा है तथा पाचवी पीढी मे अणहल के दो पुत्रो—कान्हा तथा काळा मे क्रमश.

---

१ अजमेर-मेरवाडा सेटलमेट रिपोर्ट—पृ ३८-३९

२ वीरविनोद पृ, १९८—श्यामलदास

'चेता' तथा 'बड' नामी दो शाखाओ का निकलना लिखा है। जोध लाखण के वशजो ने इन पर हमला किया तो ये लोग टाडगढ के चेटण नामक गाव मे जा बसे और वहाँ परस्पर विवाह भी करने लगे। बाद मे काळा के वशज केलवाडा (मेवाड) मे और कान्हा के चाग मे जा बसे। कालान्तर मे कान्हा के वश वालो ने मीणा, भील और धाकड मीणा लोगो मे विवाह प्रारम्भ किया जिससे २४ शाखा कान्हा के वश वालो की तथा २४ काळा के वश वालो की—कुल मिलाकर मेरो की ४८ शाखायें हुई।[१] "अणहल के वशज शीघ्र ही सख्या मे बढते गये और इतने मजबूत हो गए कि उन्होने धीरे-धीरे मेरवाडा के सभी मजबूत स्थानो पर अधिकार कर लिया। इन्होने झक, शामगढ, लुलुआ, हट्टूण, कूकरा, कोटकिराणा तथा नाई आदि अनेक स्थानो की नीव डाली। ऐसा प्रतीत होता है कि इनके वशजो ने शेष सभी मेरो को अपने अधीन कर लिया था, क्योकि ये मेरो की ऐसी १६ जातिया गिनाते है जो इन्हे खेती-बाडी तथा लूट के माल का भी चौथा बाटा देती थी। इस जाति के अधिकार मे आज भी (सन् १८७५ मे) व्यावर के समूचे ११७ गाव तथा कोटकिराणा और टाडगढ के क्रमश. १६ व ५३ गावो के भाग हैं। अजमेर मे चीतो के २१ समूचे खालसा और जागीरी गाव हैं। केवल चार गावो को छोडकर ये लोग शेष सभी अजमेर–मेरवाडा मे पाये जाते हैं।"[२]

चीतो की उपजातिया—"चीतो की अनेक उपजातियो मे सर्वाधिक सख्या वाला विभाग 'मेरात' लोगो का हैं। मेरात का अर्थ प्राय मुसलमान मेर से लिया जाता है, पर इसकी उत्पत्ति मेर नामक व्यक्ति से हुई है जिससे 'काठात' तथा 'गोरात' नामक उपजातिया

---

१ वीरविनोद–पृ १९८—श्यामलदास

२ अजमेर–मेरवाडा सेटलमेट रिपोर्ट–पृ. ३८–३९

निकली । औरगजेब के राज्य मे मेरा का पोता हरराज चीता दिल्ली के वादशाह की सेवा मे चला गया । एक रात पहरा देते समय भयकर वर्षा होते समय भी वह ढाल सिर पर रखे खडा रहा । बादशाह को जब इस घटना की सूचना दी गई तो उसने कहा कि मारवाडी भाषा मे मजबूत व्यक्ति को 'काठा' कहते हैं, इसलिए हम भी आज से इसे 'काठा' ही कहेंगे । इस घटना के शीघ्र ही बाद हरराज ने मुसलमान धर्म स्वीकार कर लिया । इस प्रकार वह काठात मेरातो का पूर्व पुरुष बना । इस उपजाति के पास व्यावर के सभी मुख्य स्थानो सहित ७८ गाव हैं (१८७५ सन् मे) । हरराज के एक भाई का नाम 'गोरा' था । उसकी सन्तान हिन्दू ही है, जिनके पास २१ गाव हैं, जिनमे 'कालिजर' और 'कावरा' प्रमुख है । गोरात लोग दक्षिण की तरफ फैलते गए और उन्होने टाडगढ के उत्तर मे तेरह गावो पर अधिकार कर लिया । अजमेर मे इनका गाव 'माखूपुरा' है । चीतो मे सर्वाधिक प्रबल 'काठात' लोग उत्तर की तरफ फैलते गए और अजमेर मे चीतो के २१ गावो मे से ९ पर अधिकार कर लिया । इन्होने नये गोत भी चलाए जिनमे बहादुरखानी चीते सर्वश्रेष्ठ समझे जाते हैं । मुगलो द्वारा इन्हे नौसर, राजावसी, अजयसर, तथा करकेडी नामक गाव इसलिए दिए गये थे कि ये अजमेर शहर तथा इसके आस-पास के रास्तो की रक्षा करते रहें । ये लोग इन गावो के इस्तमुरारदार हैं । राजावसी के इस्तमुरारदारो का मुखिया शमशेरखा बहादुरखानी परिवार का टीकाई है । काठात तथा गोरात लोगो को ठाकुर कहते है । पर व्यावर मे हथूण, चाग तथा झक के काठात खान कहलाते है ।"[1]

"चीतो की शेष उपजातियो मे एक 'लागेत' भी है जिनके भी कई गाव हैं । रूजोरिया, बेगारियात, राजोरियात, वोटवाडा, वीलोदिया, पीथरोत, बालोत तथा नादोत—उन अन्य उपजातियो के नाम है जिनके

---

१ अजमेर—मेरवाडा सेटलमेंट रिपोर्ट—पृ ४०

भी एक-एक, दो-दो या तीन-तीन गाव हैं। शेष सभी गोत यत्र-तत्र विखरे हुए हैं।" [१]

अजमेर के 'करील' गाव मे रहने वाला एक दूसरा वश भी मुसलमान हो गया जिसने अलाउद्दीन गोरी से कई गाव जागीर मे पाये। [२]

बरड—"अणहल के भाई अनूप ने टाडगढ मे बसकर 'वरड' शाखा की वृद्धि की। इसके वशज चीतो की अपेक्षा कम साहसी थे। ये लोग मेरवाडा मे ही रहे, अजमेर की ओर नही बढे। व्यावर मे कालिजर, सैंदडा, भाएला तथा खेडा सागनोता आदि मुख्य गावो सहित ग्यारह गाव इनके हैं। टाडगढ तहसील का समूचा दक्षिणी भाग इन्ही का है जहा इनके ४८ समूचे गाव हैं। ये लोग चीतो की तुलना मे अधिक सभ्य, ईमानदार तथा सीधे-सच्चे हैं। ये लोग अपने आपको उच्च कुल का मान कर 'रावत' कहलाते हैं। 'मेर' कहे जाने पर ये अपमानित अनुभव करते हैं। इनके मुखिया 'राव' कहलाते है तथा इनके अनेक टीकाई होते हैं। 'कूकरा' तथा 'बरार' के राव मुख्य माने गये हैं।" [३]

"काठात" को छोडकर शेप सभी चौहान मीणे साधारण रूप से हिन्दू है। काठात तथा गोरात लोग साथ खाना खाते है तथा इनमे कुछ भी अखाद्य नही है। चीता अपने वश मे तथा बरड अपने मे विवाह नही करते। पर चीता बरड से और बरड चीता से विवाह कर लेते है। एक बरड स्त्री यदि मुसलमान काठात से विवाह करती है तो मृत्यु पर दफनाई जाती है। इसी प्रकार काठात स्त्री यदि बरड पुरुप मे विवाह करती है तो जलाई जाती है। विवाह दोनो मे ही फेरो द्वारा होने है जो

---

१ अजमेर–मेरवाडा सेटलमेंट रिपोर्ट—पृ ४०

२ वीरविनोद–पृ १६८—श्यामलदास

३ अजमेर–मेरवाडा सेटलमेंट रिपोर्ट—पृ० ४०

ब्राह्मण द्वारा कराए जाते हैं। अजमेर के काठात अपने आपको अब मुसलमान मानने लगे है और मुसलमानो के रीतिरिवाज अपनाने भी लगे हे। मेरवाडा की दूसरी समान जातियो द्वारा पहनी जाने वाली 'धोती' का वे परित्याग कर रहे है। कभी-कभी वे अन्य चीतो मे विवाह कर लेते है पर इसे उचित नही समझा जाता। आजकल फेरो के स्थान पर भी 'निकाह' का चलन हो गया है। खादिमो आदि अन्य मुसलमानो से विवाह सबध होने के कारण उनमे मुसलमान धर्म का प्रभाव वढता जा रहा है। वे अपनी स्त्रियो को भी परदे मे रखने लगे है, यद्यपि मेरवाडा की अन्य स्त्रिया खेतो मे काम करती हैं।"[1]

"पर दोनो जातियो के रिवाज, चाहे वे अपने आपको हिंदू कहे या मुसलमान, समान ही है। मृतक की विधवा ही सपत्ति की मालिक होती है और पुर्नविवाह करने तक उस पर काबिज रहती है। उक्त सपत्ति को बेचने, गिरवी रखने अथवा लडकियो के विवाह के लिए काम मे लेने के अधिकार उसको है। पुत्रो के होते पुत्रिया उत्तराधिकार नहीं पा सकती। सभी पुत्रो के समान हिस्से होते हैं। पर अनेक स्त्रियो के पुत्र हो तो स्त्रियो के हिसाब से ही सतानो को आनुपातिक हिस्सा मिलता है। 'पगडीबद' या 'भाईबट' रस्म के विपरीत इस प्रकार का रिवाज 'चेंडाबट' कहलाता है और मेरवाडा मे वहुत प्रचलित है। पूर्वजो की तथा अर्जित सम्पत्ति मे कोई अतर नही समझा जाता। किसी भी उम्र का सम्बन्धी गोद लिया जा सकता है तथा निकटतम सबधी का हक पहिले होता है। गोद आए हुए व्यक्ति के पहिले के पुत्र भी हिस्सेदार होते हैं। दासी पुत्र, जिन्हे 'धर्मपुत्र' कहा जाता है तथा जो बहुसख्यक हैं, खेती के लिए जमीन ले सकते हैं पर उसे बेच नही सकते।

---

१. अजमेर-मेरवाडा सेटलमेट रिपोर्ट—पृ० ४०

नाते की प्रथा प्रचलित है और मृत्यु भोज पर अनाप-शनाप व्यय किया जाता है।" [१]

"यद्यपि मेर लोग अपने आपको हिन्दू मानते हैं तथा हिन्दू समझे भी जाते है पर ब्राह्मणो द्वारा निर्धारित रीति-रिवाजो का कडाई से पालन इनमे नहीं होता। ये लोग भेड-बकरे तथा गाय-भैस का मास भी खा जाते है। मेरवाडा के ब्राह्मण भी मास खाते बताए। भोजन सबधी पवित्रता की ये लोग परवाह नही करते तथा शराब का प्रयोग भी खुल कर करते हैं। ये लोग ऊचे स्थानो पर रहना पसद करते है। कहा भी है-'मेर अर मोर ऊचै पर राजी'। स्नान आदि का भी ये कम ही ध्यान रखते हैं। पौराणिक देवताओ की बजाय शीतला, देवजी, रामदेवजी तथा पीपळाज माता की मान्यता ही इनमे है।" [२]

"अल्लाजी" नामक देवता की पूजा का भी इनमे सामान्यत. प्रचलन है। मकुटजी तथा गोरमजा की ऊची पहाडियो के ये लोग अपने सर्वप्रथम पुत्र की बलि देते थे। आज भी सर्वप्रथम पुत्र होने पर लोग देवी के भैसे की बलि चढाते हैं। होली तथा दीवाली के त्यौहार धूमधाम से मनाए जाते हैं। होली पर सभी गावो के लोग सामूहिक रूप से शिकार करते है जिसे 'अहेर' कहते है। इसमे अधिकतर खरगोशों और हरिणो का शिकार होता है। टाडगढ के 'रावत' हिन्दू धर्म के अनुसार गोमास भक्षण छोडते जा रहे हैं तथा भैसे की बलि चढाने का काम भी बलाइयो के सुपुर्द करते जा रहे है। पर मेरात लोग मुसलमान धर्म की ओर झुकते जा रहे हैं। (१८७५ सन्)"

---

१ अजमेर-मेरवाडा सेटलमेट रिपोर्ट—पृ ४०-४१

२ वही ,, ,, पृ ४२-४३

वीरविनोद के लेखक कविराजा श्यामलदास ने 'स्केच ऑफ मेरवाडा' नामक पुस्तक से मेरो का हाल उद्धृत करते हुए निम्न आशय की जानकारी भी दी है—

"जोध लाखरण और सहदे मीरणी की औलाद के सिवा मेरो की एक शाखा दो गुहिलोतो से बनी है जो अलाउद्दीन गोरी के चित्तौड आक्रमरण के समय भाग कर मेरवाडा के 'पूरना' गाव मे जा बसे थे। उनमे से एक ने वहा एक मीरणी से विवाह कर लिया जिसके १२ बेटे हुए जिनसे १२ शाखायें निकली। दूसरे भाई के हाथ से गोहत्या हो जाने के कारण वह भी भागकर पहाडो मे जा छिपा तथा उससे मेरो की छ शाखायें निकली।"

"धाकड मेरो का पूर्वज एक ब्राह्मरण बताया जाता है जो मोठीसो के डर से बरार नामक गाव मे जा बसा और उसने वहा मीरणो मे विवाह कर लिया।"

"मेर लोग सूअर, हरिरण, मुर्गे और मछली का मास नही खाते। पहिले जमाने मे ये लोग लडकियो की हत्या भी करते थे तथा इनको गाय-भैस की तरह बेच देते थे। बाप के मरने पर बेटा अपनी मा तक को बेच देता बताया। पर आज ऐसा नही है।"

"मेर लोग सकट के समय अपने सरदार के पास जाकर उनके गुलाम बन जाते हैं जो तीन प्रकार के होते है—चोटीकट, बसी और अ गुलीकट। चोटीकट गुलाम अपनी चोटी काट कर सरदार को दे देता है तथा कमाई का चौथा बाटा देता है। बसी अथवा बसीवान गुलाम को चोटी काटने की बजाय गुलामी की लिखापढी करनी होती है। मुसलमान भी बसीवान हो सकता है, पर चोटीकट नही। अ गुलीकट गुलाम अपने हाथ की अ गुली काट कर थोडा लहू सरदार के हाथ मे

टपका देता है। इस कारण उनमे बाप-बेटे का भाव माना जाता है। गुलाम मालिक की जायदाद समझे जाते हैं और गुलाम स्त्री-पुरुष आपस मे भाई बहिन ही बने रह सकते हैं।"

"मेर लोग बहुत बहादुर होते हैं और स्त्रियो की इज्जत विगाडने वाले को ये जान से मार डालते है। ये मेहनती, मजबूत, चालाक, लम्बे-चौडे तथा पुष्ट और निर्भीक होते हैं। शेर को तलवार से मार कर भी बहादुरी का घमड नहीं करते।" [1]

कर्नल टॉड ने अपने इतिहास मे मरो के विषय मे निम्नलिखित अतिरिक्त जानकारी दी है—

"कुंभलमेर से अजमेर तक की पहाडी शृंखला को 'मेरवाडा' कहते हैं। इसकी लम्बाई ४६ कोस तथा चौडाई जगह-जगह पर तीन सौ दस कोस तक है।" (पृ ८५६)

अणहल का विवाह एक मीणा सामत की कन्या से हुआ। इस जाति के सोलहवें पुरुष ने मुसलमान बनकर दाऊदखा नाम धारण किया और 'आथून' का जागीरदार बनकर 'आथून का खा' कहलाया। (पृ ८५८)

विवाह सम्बन्ध के छुटकारे के समय पुरुष दुपट्टे का हिस्सा फाडकर स्त्री के हाथ मे दे देता है। स्त्री वह टुकडा हाथ में लेकर तथा जल से भरे दो घडे तले ऊपर रखकर जिधर इच्छा हो निकल जाती है। जो पुरुष उन घडो को उतारता है वही उसका पति होता है। यह रिवाज मीणो के समान ही मेरवाडा की अन्य कई जातियो मे भी है। (पृ. ८६३)

मुसलमान मेर अल्ला के नाम से अथवा प्रथम विधर्मी पूर्वज दूध दाऊदखा' के नाम से या और भी प्राचीन-चीता वडा की आन कहकर-

---

१ वीरविनोद–पृ १६६–२०१—श्यामलदास

शपथ लेते हैं। दक्षिण प्रांत के मेर 'सूर्य का लोगान' के नाम से शपथ लेते है।योगी याजकनाथ के नाम की भी शपथ लेते है।

मेर जाति सौराष्ट्र से चम्बल तक फैली है। (पृ ८६३)[1]"

टाडगढ के रावत कार्नासिह ने जो स्वय इस जाति के सुयोग्य व्यक्ति है, यह जानकारी दी है कि जोघलाखरण के हाथ का दिया हुआ एक ताम्रपत्र श्री वशीलालजी, तेजा चौक, व्यावर के पास है। ये सुनारो के मदिर के पुजारी हैं और चाग वाले चीतो के पुरोहित हैं। ताम्रपत्र की भाषा को देखने से हमें वह भापा जोघलाखरण के समय की नही प्रतीत हुई, अपितु, १८ वी १६ वी सदी की राजस्थानी ही लगी। पर यह सही बात है कि मुसलमान चीते भी इन पुरोहितो को लाग के रुपये आज भी देते हैं।

श्री कार्नासिह ने निम्नलिखित जानकारी भी दी है—

१. भेलसा की तारादे अूषारी (मीणी) से जोघ लाखरण का पुत्र अनूप हुआ। अनूप के बाद आयड, बायड तथा बरड क्रमशः चारपीढिया चली। चीता अर्थात् वेतर्नासिह का लडका अणहल था।
२. गण-प्रणाली मे गए वे मीणा कहलाए तथा एकतत्र प्रणाली वाले राजपूत।
३. नाता करने वाले मीणा कहलाए।
४. मेर शब्द अपमान का सूचक है क्योकि मेर का अर्थ गुलाम से लिया जाता है।

---

१. राजस्थान इतिहास (टॉड)–पृ. ८५६–८६३ वलदेवप्रसाद कृज हिन्दी अनुवाद।

मेरो मे मू छकट गुलाम भी होते थे।

चीता और वरड का विवाह सवध सोलहवी पीढी के वाद हुआ, जिसकी साक्षी का यह पद है—

सोळा पीढो भाईचारो चाल्यो, सतरवी पीढी हुई सगाई।
परभू वाई पातळात की, रतनसी करणसी का नै परणाई ।।

वड के पेड के दो टूक होने की घटना का सवध भी एक विवाह सवध से है जिसकी साक्षी का पद इस प्रकार है—

वड फाटो वेरो ह्वियो, ह्वियो सगपण को मोदो।
जैतू चीती, करणीमी की, परण्यो भींमट को धोदो ।।

पीपळाज देवी का सवध उस घटना से है जिसके अनुसार किसना घराणा नामक माल की वेटी अपने पति को छोडकर 'वोल रावत' की स्त्री वनकर आ गई। पीछा करने वालो के आने पर वह स्त्री स्वय एक पीपल के खोखले तने मे छिप गई और उसकी वताई हुई रीति के अनुसार वीलरावत ने पीछा करने वालो को मार डाला। जो कुछ हार मान कर वच गए उन्हे 'भोपा' वना लिया गया जो आज भी 'माल भोपे' कहलाते है। पीपल मे घुसने के कारण वील रावत की स्त्री देवी रूप धारण कर 'पोपळाज' कहलाई और मेरवाडा मे पूजी गई। तभी मे कहावत प्रचलित हुई—

'माला रूठी, वरडा तूठी, पोपळाज कहलाई'

हथूण के पास के टरडिए गोत के वळाई चीतो से निकले है। इस गाव का नाम वळाई खेडा है। कहते हैं कि चीतो ने एक राजपूत ठाकुर की कन्या विवाह मे मागी। ठाकुर ने चालाकी से एक भावी की कन्या को अपनी वनाकर विवाह कर दिया। वाद

मे जब उसकी जाति का पता लगा तो चीतो ने उसे निष्कासित किया। पर वह लौट आई और अपने पति को लेकर पीहर वालो के पास जा रही। उस जोडे से यह गोत चला।

१० हरराज चीता की पठानी औरत से हुई सतान भी भावियो मे मिली बताते हैं।

मेवाड—(मेवल, मैनाल) मेवाड के नामकरण की व्याख्या करने वाले विद्वानो ने इसे 'मेदपाट' से व्युत्पन्न माना है। 'मेदपाट' का अर्थ कई लोग मेदिनीपाट अर्थात् पृथ्वी के सिंहासन के रूप मे करते है तो कई ने इसके 'मेधवाट'-या 'मेध्यवाट' मान कर यज्ञो की भूमि–होने की कल्पना भी की है।[१] पाट को विस्तार के अर्थ मे मानते हुए प० रामकर्ण आसोपा ने 'मेदपाट' और 'मेरुपाट' शब्दो से मेवाड तथा मारवाड शब्दो की उत्पत्ति होने की बात कही है।[२]

मेवाड के इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान श्री रामवल्लभ सोमाणी ने मेव अथवा मेर लोगो की भूमि होने के कारण ही 'मेवाड' का नामकरण सही माना है। श्री सोमाणी ने ग्यारहवीं सदी तक के पुराने उल्लेखो का प्रमाण देते हुए यह सिद्ध किया है कि उस समय भी 'मेवाड' का नाम मिलता है। मेदपाट' नाम सस्कृत पण्डितो तक ही सीमित था।[3] मेवाड के 'मेवल' नामक दक्षिणी भाग के मीणो का दमन करने का उल्लेख राजप्रशस्ति' महाकाव्य मे भी आया है।[४] इससे मेवाड भूमि मे मीणो की प्रभुता का प्रमाण मिलता है।

---

१ लोक साहित्य (राजस्थान–कुछ प्राचीन नाम) पृ० ८४–डा० बदरीप्रसाद पचोली

२ मारवाड का सक्षिप्त इतिहास-पृ० १—रामकर्ण आसोपा

३. महाराणा कुम्भा—पृ १—रामवल्लभ सोमाणी

४ उदयपुर राज्य का इतिहास–जिल्द २-पृ० ५४३—ओझा

भीलवाडा जिले मे जहाजपुर का इलाका भी मीणो का अति-सुदृढ और प्रसिद्ध स्थान रहा है। इसी इलाके के मीणो का शमन करने के लिए मीणा सेना (Mina Corps) का गठन किया गया था।

सिरोही तथा मारवाड के गोडवाड परगने से मिलते हुए मेवाड के हिस्से मे मीणो की शक्ति का उल्लेख कर्नल टॉड ने अपनी पुस्तक 'ट्रेवल्स इन वेस्टर्न इण्डिया' (पृ० २६) मे दिया है।

बम्बावदा तथा भैसरोडगढ के समीपवर्ती मैनाल के पठारी प्रदेश मे यद्यपि आठवी सदी मे हूणो के प्रभुत्व तथा बारहवी-तेरहवी मे हाडो के अभ्युदय के प्रमाण मिलते हैं पर बहुसख्यक होने के कारण मीणो की शक्ति भी यहा बढी-चढी थी। 'महानाल' से व्युत्पन्न माना जाने वाला 'मैनाल' का नामकरण भी इस दिशा मे अधिक शोध की अपेक्षा रखता है।

वीरविनोद के लेखक कविराजा श्यामलदास ने मेवाड के मीणो को उत्पत्ति उत्तम वर्ण के पुरुष तथा निम्न वर्ण की स्त्री से मानते हुए मेवाड मे मीणो की १४० शाखायें होने की बात लिखी है, जिनमे १७ प्रमुख गिनाई हैं। इनके अनुसार मेवाड के जहाजपुर इलाके मे मोठीस तथा पडिहार मीणो की बहुतायत है। जयसमुद्र के पूर्व मे प्रतापगढ की सीमा तक रहने वाले मीणे भीलो मे भी विवाह कर लेते बताए। खैराड के मीणे बहुत बहादुर होते हैं और लडाई के समय भीलो की किलकारी की तरह हू हू हू हू करके डुडकारी करते है। पडिहार मीणे सूअर के अलावा सब प्रकार का मास खाते हैं। मोठीस मीणे सूअर भी खा जाते हैं। ये अपने पूर्वज 'माला' जूझार की सौगध खाते हैं। ई. १८९१ मे मेवाड मे मीणो की सख्या २००३२ थी।[1]

---

१ वीरविनोद—पृ १९७

मेजर के डी. अर्सकीन ने सन् १९११ की जनगणना मे मीणो की सख्या १७८९७ ही बताई है। पर वे लिखते हैं कि इस गिनती मे भूल मालूम होती है। अर्सकीन के अनुसार मीणो के दो प्रवान क्षेत्र हैं। एक तो 'छप्पन' के पहाड और दूसरे खैराड़' का क्षेत्र। 'छप्पन' के मीणे वेष-भूषा तथा रस्म-रिवाज और शक्ल-सूरत मे भीलो के समान ही दीखते हैं, पर जहाजपुर के मीणे अधिक सभ्य प्रतीत होते हैं। खैराड के पडिहार मीणे बड़े सुन्दर और स्वस्थ हैं। ये लोग पहिले लडकियो को मारते थे। ये देवली की ४२ वी रेजिमेट, जो मीणा बैटेलियन के नाम से प्रसिद्ध है, मे भर्ती हो गए हैं। यह घटना १८५१-६० ई. की है।[1]

वागड—डूगरपुर-बासवाडा जिलो की भूमि 'वागड' के नाम से जानी जाती है। वागड शब्द का अर्थ जगल से लिया गया है, जो उपयुक्त जान पडता है।[2] ई सन् १९६१ मे डूगरपुर के मीणो की सख्या लगभग छियालीस हजार तथा बासवाडा की तेरह हजार थी। वहा के मीणे वहा के भीलो की तुलना मे अपने आपको अधिक स्वाभिमानी तथा भूमि के स्वामी अनुभव करते आए हैं। भील भी अपने आपको मीणे कहलाना पसन्द करते हैं।

वागड तथा आसपास के मीणे तालाबो तथा नदियो मे मगर मारने का धन्धा करते बताए। कहा नही जा सकता कि पुराने 'मीनवार' अर्थात् मछुओ से इसका कुछ सम्बन्ध हो सकता है या नही। उदयपुर से डूगरपुर जाने वाले मार्ग पर स्वतत्रता-प्राप्ति के पहिले तक वागड के

---

१ राजपूताना गजेटियर, जि II A, मेवाड रेजिडेंसी (१९०८ ई) पृ ३७—मेजर के. डी अर्सकीन

२. वागड और उसका साहित्य, पृ० ४—मथुराप्रसाद

मीणो की १७ चौकिया थी जहा सकुशल यात्रा चाहने वाले यात्रियो को चुगी देनी होती थी ।

आसपुर तहसील मे सोम और माही नदियो के बीच 'कटारा' नामक क्षेत्र के मीणे वडे ताकतवर रहे है । यहा के मीणो की पाल मे उनके गमेती (मुखिया) की आज्ञा के बिना राजपुरुष भी प्रवेश नही पा सकते थे । राज्य का लगान वसूल करके भी गमेती ही भेजते थे । घने जगलो से घिरा हुआ यह क्षेत्र वागड के स्वाभिमानी मीणो की स्वच्छन्द विहार-स्थली रही है ।

खैराड—वनास के दोनो ओर के प्रदेश को खैराड के नाम से पुकारा जाता है । खैराड के मीणो के अतुल शौर्य की गाथायें अनेक लोगो ने लिखी है । कर्नल टॉड ने लिखा है—"मेरी यात्रा जन्म और व्यवसाय से लूटमार का कार्य करने वाले लोगो के उस छोटे से दश मे से थी, जहा तीन साल पहले तक कोई भी राहगीर लुटे बिना नही रह सकता था । आज तो मै चार हजार धनुर्धारी मेरे सकेत पर बुला सकता था क्योकि मीणा अब अच्छे प्रजाजन वनते जा रहे है, क्योकि उन्हे यह विश्वास हो गया है कि उनके अधिकारो का सम्मान होगा । वे अपने से वडो को 'अतुलराज' कहकर सबोधित करते हैं । मैंने राणा के नाम पर मीणा नायकों को एकत्रित किया और उन्हे लाल साफे तथा रुमाल बाटे, क्योकि मेरे बीचबचाव के कारण ही राणा को जहाजगढ मिला था । मैने मीणो को सच्चे प्रकृति-पुत्रो के रूप मे पाया । वे अब समझने लगे थे कि वे समाज से वहिष्कृत नही है, उनका भी समाज मे स्थान है । सम्मान प्रदर्शित करने वाले को सम्मान देने की भावना जितनी प्रवल खैराड के अवनृगम जनजाति वालो मे है उतनी अन्य जातियो के लोगो मे नही मिलती ।"[१]

---

१ ऐनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान-जि २, पृ ५४१-४२

खैराड के मीणो का अन्य वृत्तात मेवाड के प्रसग मे दिया जा चुका है।

हाडोती—बूदी-कोटा-झालावाड जिलो की यह भूमि यहा राज्य करने वाले हाडा चौहानो के नाम से हाडोती कहलाई। बूदी के मूल राज्य पर हाडो द्वारा अधिकार किए जाने से पूर्व यहा भीलो तथा मीणो के राज्य थे। बूदी के ऊषाहारा मीणो से ही छीनकर हाडा देवा ने बूदी मे चौहानो के राज्य की नीव डाली। वर्णी नदी के बायें तट पर बसी 'आसलपुर' नामक ध्वस्त नगरी तथा 'अकेलगढ' का पुराना किला किंवदन्ती के अनुसार भीलो के रहे हैं। कोटिया नामक भील ने ही कोटा बसाया बताते हैं। बूदी के चौहान राजाओ ने इन जन-जातियो के राज्य समाप्त किए।[1] झालावाड जिले के मनोहरथाना नामक कस्बे मे भी सवत् १७७५ तक भीलो का राज था। भील राजा चक्रसेन यहा पर राज्य करता था। उसके पास ५०० सवार तथा ८०० तीरन्दाज थे। महाराव भीमसिह द्वारा हराया जाने पर चक्रसेन मालवा मे चला गया जहा उसके वशज मानधाता ओकारनाथ मे अब तक राज करते हैं।[2]

शाहबाद-किशनगज तहसीलो की सीमा पर बना भवरगढ का पुराना किला भी मीणो का बताया जाता है। मीणो के कुछ देवल आज भी वहा बने हुए हैं।

कोटा के राव मुकुन्दसिह ने 'मुकन्दरा' के पहाडी घाटे मे शिकार करते समय खैराबाद की अतिसुन्दर मीणी 'अबला' को अत:पुर मे रख लिया और वही महल, बाग तथा शिकारगाह बनाकर

---

१. कोटा राज्य का इतिहास—पृ ३३, डा मथुरालाल शर्मा
२ वही—पृ ३००

रहने लगा। कहते हैं एक रात अबला का पति कटार लेकर मुकुन्दसिंह के पास गया। उसे जागीर देकर राजी किया गया। दर्रे मे से जाने वाले ऊंट, घोडे, गाडी आदि से महसूल लेने का अधिकार भी उसे दिया गया। जनरल सर कनिंघम ने लिखा है कि अबला ने शर्त रखी कि दर्रे पर उसका महल बने जिसमे जलता हुआ चिराग उसके गाव वालो को दिखाई दे। बहुत समय तक वह दीपक जलाया जाता रहा। अबला ने कोटा मे भी अपने नाम से बावडी बनवाई तथा बाग लगवाया।[1]

जालोर—कहते है जालोर 'जला' नामक मीणा का बसाया हुआ है।[2] पर कर्नल टॉड इसे जालधरनाथ नामक जोगी के नाम पर बसा हुआ मानते हैं, जिसका स्थान जालोर के किले से एक कोस पश्चिम की तरफ है। कई लोग 'जालोर' के चारो ओर उगे 'जाल' वृक्षो के कारण भी इसका 'जालोर' नाम होना मानते है। टॉड ने लिखा हैं कि राठौडो के अधिकार मे आने मे पूर्व इसका नाम सोनगिरी था।[3] ओझाजी ने इसके एक पुराने नाम 'जाबालीपुर' का भी उल्लेख किया है।[4] राठौडो से पहिले क्रमश मुसलमानो, चौहानो तथा परमारो के अधीन रहने वाले जालोर के गढ का निर्माण किसने करवाया, निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। पर इतना तो सिद्ध ही है कि इस क्षेत्र मे मीणो का प्राबल्य रहा है। आबू

---

१ कोटा राज्य का इतिहास–पृ० १५६–५७–डा० मथुरालाल शर्मा

२ राजस्थान भारती–भाग १० अक २—सगतसिंह

३ ऐनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान–जि २, पृ २३६—टॉड

४ जोधपुर राज्य का इतिहास–प्रथम खण्ड–पृ ५४–ओझा

तथा आडावळा की पहाडियो के मीणो के आक्रमण यहा होते रहे है।[1]

जालोर परगने मे सन् १८१३ मे ३६० गाव व कस्बे होने का उल्लेख है। इसी के अन्तर्गत भाद्राजूण नामक कस्वे मे उस समय ५,०० घरो की आबादी थी तथा तीन चौथाई घर अकेले मीणो के ही थे। यह कस्बा पहाडियो के बीच मे बसा हुआ है तथा पालो को जालोर से मिलाता है।[2] इसी कस्वे के हरराज मीणा ने जोधपुर के दुर्ग पर आक्रमण किया था।[3] ऐसा भी लिखा गया है कि हरराज को जोधपुर के राजा उदयसिह (मोटाराजा) ने मरवा डाला था।[4] राव चद्रसेन ने भाद्राजूण के पहाडो मे शरण लेकर वहा के मीणो का दमन किया बताते है।

जालोर के मीणे अपने आपको परशुराम तथा सहस्रबाहु की लडाई मे परशुराम के मैले से बने बताते हैं। मैल से पैदा होने के कारण ये 'मैला' या 'मैणा' हो गए। कई लोग यह भी मानते हैं कि ये सहस्रबाहु के साथियो मे से है तथा अरावली की पहाडियो मे परशुराम के डर से चले गए और भील औरतो से विवाह कर मीणे कहलाये। एक और धारणा के अनुसार 'मेणा' असल मे 'मेव ना' था। पहिले मेवाड मे मेव लोग रहते थे जिनके नाम पर ही वह मेव+आड=मेवाड कहलाया। मीणो ने इन्हे वहा से खदेड दिया तो मेव लोग दिल्ली के

---

१ अैनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान,
जि २, पृ २४०–टॉड

२ वही पृ० २४१–टॉड

३. जोधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खण्ड, पृ ३५७–ओझा
तथा बाकीदास री ख्यात–पृ २५

४ मारवाड का इतिहास, भाग १, पृ० १७२–रेउ

पास जा बसे जहा का इलाका इन्हीं के नाम से मेवात कहलाया। मेवो से भिन्नता दिखलाने के लिए इनको मेव+ना = मेणा कहने लगे।[1]

जालोर परगने मे मेणो की लगभग ७० खापें मिलती है।

"कहते हैं सवत ११०० के लगभग जालोर से पवारो का शासन समाप्त होने पर मेणे जोर पकड गए। ये लोग लूटमार करते तथा वादशाह को दु वा (ठहरी हुई रकम) भर देते थे। सवत् १३०० के आसपास कान्हडदेव चौहान ने अलाउद्दीन से जालोर का राज्य पाकर मेणो को गोठ के वहाने वुलाकर मार डाला। उनकी औरतें, जो जगलो मे थी, राजा के गुरु जालधरनाथ की शरण मे चली गई। उनकी औलाद ही आजकल के मेणे हैं। कान्हडदेव का राज्य छिन जाने पर चौहान आदि अन्य खापो के राजपूत भागकर जगलो मे चले गए और मेणो के घरो मे जाकर उनकी लडकियो से विवाह कर लिया। उनसे मेणो की २४ खापें चली।[2] ऐसी भी मान्यता है कि मेणे जिन लोगो को पकड ले जाते उन्हे पैसा मिलने पर छोड देते, पर जो नहीं छूट पाते वे मेणे वन जाते।"[3]

"जालोर के 'पावटा' नामक स्थान मे फागण वदी १३ को महादेवजी का मेला होता है जिसमे उन १२ गावो के मेणे दर्शनार्थ

---

१ मरदुमशुमारी राज मारवाड—जि० ३, पृ० १२१
(मारवाड की कौमो का हाल—१८९४ सन्)

२ मरदुमशुमारी राज मारवाड—जि० ३, पृ० ११५
(मारवाड की कौमो का हाल—१८९४ सन्)

३ मरदुमशुमारी राज मारवाड—जि० ३, पृ० ११५
(मारवाड की कौमो का हाल—१८९४ सन्)

आते हैं जो थाना पचानवे के नीचे हैं। इन्ही १२ गावो के मेरणो ने सवत् १६४७ मे आसोज सुदी १५ को शिवरामदास थानवी नामक थानेदार के समझाने से कदीम से चली आई हुई गौहत्या वद करने की शपथ खाई थी। अब गौहत्या करने वाले को जाति से वहिष्कृत कर दिया जाता है।"[1]

गोडवाड—

पाली तथा सिरोही जिलो का क्षेत्र 'गोड़वाड' कहलाता है। यहा मेरणो की प्राय ४२ खापें प्राप्त है। "मारवाड मे मेरणो के दो बडे थोक माने जाते हैं। एक तो 'मीना' (मीरणा) कहलाने वाले तथा दूसरे 'मेरणा'। कई मेरणा लोग अपनी पैदायश गूजरो के एक फिरके से मानते हैं जो 'खारी' गाव से प्रसिद्ध हैं। ये यमुना के निकट व्रज के 'नन्द गाव' को अपना मूल स्थान बताते हैं। कहते हैं ये लोग कृष्ण के साथ चोरी किया करते थे। लोग समझते कि कोई मिन्नी (बिल्ली) मक्खन आदि खा जाती है, पर जब असली चोरो का पता लगा तो लोगो ने कहा कि ये तो 'मिन्नी' नही 'मिन्ना' हैं। तभी से इन्हे 'मीना' कहा जाने लगा।[2] उसी समय से ये लोग लूट-मार करते हैं।"

"व्रज से उठ कर ये पहिले मेवात मे गए और फिर ढूढाड मे पहुँच कर आमेर के पहाडो मे राज्य करने लगे। सवत् ११०० के आसपास कछवाहे राजपूतो ने नरवर और ग्वालियर की तरफ से आकर इनको वहा से निकाल दिया। बहुत कुछ तो उनके अधीन हो गए और कुछ दूसरे इलाको मे चले गए। इनमे कुछ आपत्तिग्रस्त राजपूत भी बाद मे सम्मिलित हो गए। मारोठ तथा नावा-साभर आदि मे जो मीरणे हैं उनका कहना है कि वे गौड राजाओ के समय मे ढूढाड से आकर

---

३. म० रा० मार० जि० ३, पृ० ११७
२ „ „ पृ० ११२

वहा बसे थे। ये मीणें शाक्त है और जीण माता का पूजन करते हैं तथा उन्हीं का इष्ट रखते है। जीण माता का स्थान सीकर जिले के रेवासा नामक गाव के समीप है। इन मीणो के वहुत से दस्तूर गूजरो तथा राजपूतो से मिलते हैं, और इनके श्राद्ध गूजरो की तरह दीवाली के दिन ही होते हैं।[1]"

"इनके विपरीत गोडवाड तथा जालोर परगनो के मीणे 'मेरणे' कहलाते हैं। इनमे भी दो थोक हैं— एक असली या कदीमी मेरणे तथा दूसरे राजपूत वगैरा कौमो से निकल कर पीछे से शामिल हुए। असली मीणो के दो खानदान 'जावआ' और 'खोडा' हैं। इनको अपनी असलीयत याद नही रही। गोडवाड के मेरणो का मत है कि रामचन्द्रजी के वनोवास के समय मेरणो ने एक मैल का तथा दूसरा डाब का पूतला बनाकर रक्खा जिन्हे रामचन्द्रजी ने जीवित किया। पहिले का नाम 'आवधा' तथा दूसरे का 'खोडा' रखा तथा तीर-कमान देकर कहा—जाओ, औरतें ले आओ। वे दौडकर अपने लिए नीच कौम की औरतें ले आए तथा नीच जाति के हो गए। इसीलिए गोडवाड तथा जालोर के मेरणे ढढ्या मीणा कहलाते हैं। इनकी तुलना मे नागौर जिले के मारोठ क्षेत्र के मीणे 'अजळे' कहलाते है। इनके हाथ का पानी तथा छुआ खाना हिन्दू लोग खा लेते हैं। गोडवाड तथा जालोर क्षेत्र के मेरणो का छुआ खाना हिन्दू इसलिए नही खाते कि वे लोग गाय-बैल तथा भैस आदि का मास खाते है। इन दोनो वर्गो मे आपस मे कोई सम्बन्ध नही होता।[2]"

"हिन्दुओ द्वारा अपवित्र माने जाने पर भी ये मेरणे अपने आप को हिन्दू ही मानते हैं। देवी, भैरव, मामाजी (अर्थात् जूझारो) को पूजते

---

१ म० राज० मा० जि० ३—पृ० ११२

२ म० राज० मार० जि० ३-पृ० ११२

हैं। मूर्तियो पर तेल, सिन्दूर तथा मद्य चढाते हैं। भैसे-बकरे की बलि देते है। इनके देवताओ के पुजारी, गुर्ड, रैबारी तथा भील होते है।"[1]

"इन मेरणो का एक बडा मेला, जिसका नाम 'मीनारक' है, हर साल सिरोही के एक गाव की सीव मे होता है, जहा १२ कोस के करीब उजाड रण है और गागेव महादेव का मदिर तथा कपिल मुनि का आश्रम है। इसी दिन 'मीन सक्राति' लगती है। इस मेले का सही नाम 'मीनार्क' मालूम होता है, अर्थात् सूर्य का मीन राशि पर आना। कहते हैं कि एक मेरणा नित्य गगास्नान करने जाता था। जब वहुत वृद्ध हो गया तो स्वय गगाजी ने प्रकट होकर कहा कि अब कष्ट मत कर, मैं स्वय तुम्हारे यहा आ जाऊगी। तभी मीन सक्राति के दिन जमीन से गगा प्रकट हो गई। मेरणो का गुरु उस रण मे जमीन खोद कर धूप सुलगाता है, और कुछ मत्र पढता है। सवा पहर दिन चढे उस समय वहा से इतना पानी निकलने लगता है कि सभी मेरणे स्नान कर लेते हैं तथा अपने मृतको के फूल भी डाल देते हैं। मेवाड-मारवाड तथा सिरोही के हजारो मेरणे इस मेले मे आते हैं। मेला सात रोज तक चलता है। इन दिनो मेरणे चोरी-धाडा नहीं करते। यदि कोई मुसाफिर की चोरी हो जाए तो गाव पोसालिया के मेरणे उसका रुपया चुका देते हैं तथा असली चोर का पता लगाकर उसे १२ वर्ष के लिए जाति से वहिष्कृत कर देते हैं। इस मेले मे इश्तिहारी मुलजिम मेरणा भी नही पकडा जा सकता, चाहे वह खूनी ही क्यो न हो। कई पुलिस के अफसर आमने-सामने खडे मुलजिमो को देखते रहते हैं पर पकड

---

1 म० राज० मा० जि० ३—पृ० ११२

नही सकते क्योकि मेणो की सगठित शक्ति का मुकाबला नही किया जा सकता ।" १

'प्राय सौ वर्ष पहिले गोडवाड के मेणे जिन लोगो को उठाकर ले जाते उनके धर्म-कर्म मे कोई हस्तक्षेप नही करते थे । वे उन्हे आटा-दाल आदि खाने-पीने की वस्तुएँ दे देते थे तथा रुपया मिलने पर उन्हे छोड देते । छोडने वालो को ऐसे विकट रास्तो से लाते-ले जाते कि उन्हे कुछ पता ही नही लगता । ऐसे चोर रास्ते तथा अत्यत विकट स्थल भाद्रा-जूण, जालोर, तथा गोडवाड के पहाडो मे बहुत है, जिन्हे मेणो का मेवासा कहते हैं । अब ये मेवासे खाली पडे हैं, क्योकि मेणो को मैदानो मे बसा दिया गया है । "२

"मेणे लोग नीच जाति के लोगो को बहुत तग करते थे । उनके कानो पर कमान की चाप चढा देते और जीभ मे कूमट का काटा चुभाकर हसी करते—'काकाजी, कूमट खासो ।' उनका यह कहना कहावत बन गया है । मेणे लोग सरगरो को नही लूटते, क्योकि वह उनकी हजामत करता है तथा तीर-कमान बनाता है । ऐसा करने की उनमे तलाक पडी हुई है । मेणो के झगडे पचायत द्वारा तय होते हैं । ये अदालत मे नही आते । पचो का हुक्म नही माने तो हुक्का-पानी बद कर देते है तथा माफी मागने पर ही निर्णय को कार्यान्वित करवाकर बिरादरी मे सम्मिलित करते है । इनके समाज मे चामचोरी की बडी चिढ है । पहिले तो ये लोग परपुरुष के साथ कुकर्म करते देख लेने पर जान से मार डालते थे । पर आजकल जुर्माना ले लेते है जिसमे मे कुछ औरत के पति को, कुछ उसके पीहरवालो को तथा शेष पचो को मिल

---

१ म राज मार, जि ३, पृ ११६

२ म० राज० मार०, जि० ३, पृ० १२०

जाता है । मेणो को 'माजी' कहे तो राजी होते हैं, क्योकि इसे वडी पदवी समझते हैं, पर 'काडी' कहे तो बुरा मानते हैं, क्योकि इससे अपमान समझते हैं"।[1]

"गोडवाड के अनेक गावो मे मेणो की चौथ लगती थी । कमजोर जागीरदारो ने भी गावो की हिफाजत के लिए चौथ कायम करदी थी । जहा-जहा मेणो के थोक थे वहा-वहा भी उनकी चौथ थी । इसी कारण उन-उन गावो के मेणो को चौथिया मेणा कहने लगे । चौथ साल मे एक या दो वार कृषको से ली जाती थी । सावणू साख मे हल पीछे आधा मन से दो मन तक तथा रोकड हल पीछे एक-दो रुपया और हरा चारा एक पोटला लिया जाता था । ऊनाल् मे भावली पीछे १-२ रुपया तथा १ पोटला हरा धान होता था । रैबारियो से १ बकरा, ऊन की १ पींडी, १ लोई तथा घी और महाजनो से रुपयो मे व्यापार के अनुसार चौथ ली जाती थी । चौथ घर बैठे ही पहुचानी होती थी, जिसके न पहुचने पर चोरी करवादी जाती थी । जिस गाव मे मेणो की चौथ लगती उसमे दूसरे मेणे चोरी आदि नही करते । अगर ऐसी कोई घटना होती तो दोषी को आडे हाथो लिया जाता ।[2]"

'इसी तरह पहिले बोलावा भी व्यापरियो पर मेणो का ही लगता था । मारवाड से अहमदावाद जाने वाले माल पर भद्राजूण के मेणे अपने नाके पर जाकर माल न लुटने की जिम्मेवारी लेकर वोलावे की लाग लेते थे । माल के साथ नही जाते थे । रास्ते मे उनके वोलावे का नाम सुन कर माल को कोई नही लूटता । यदि कोई लूटता तो मेणे उसका पता लगाकर माल लौटा देते ।"[3]

---

१ म० राज० मार०, जि० ३, पृ० १२०-१२१

२ म० राज० मार०, जि० ३, पृ० १२२

३ म० राज० मार०, जि० ३, पृ० १२२

चौथ की यह प्रथा ही मेरणो के कमजोर पड जाने पर धीरे धीरे चौकीदारी मे वदल गई और अनेक गावो मे मेरणे वेतनभोगी होकर चौकीदारी करने लगे। "मारवाड की पहाडी कौमो मे मेरणो की कौम वहुत वहादुर और वेरहम गिनी जाती है। मर्द-औरत सभी मजबूत होते हैं। मर्द अधिक लबे नही होते, ठिगने और चौडे होते हैं। रग काला, वदन गठीला तथा सूरत पर जगलीपन छाया रहता है। चोरी-धाडे मे नाम पैदा करना ही ये जीवन की सफलता समझते थे।"[1]

"मारवाड-सिरोही क्षेत्र मे पदिया नामक एक वहादुर मेरणा धाडवी हुआ है। वह वदसूरत, लगडा तथा काना था, पर वहुत वहादुर और सहृदय था। उसने अपने धाडो से समूचे मारवाड को हिला डाला और राज्य के लिए उसे पकडना वडा कठिन हो गया। वनजारो की एक लूट मे छै हजार रुपए प्राप्त होने पर भी उसने केवल ६०) ही लिये तथा पगे औरतो तथा वच्चो के लिए छोडते हुए कहा कि मैं इन गरीवो को दुखी नही देखना चाहता। पदिया की रहमदिली की कई वाते कही जाती है। फासी पर चढने से पहिले पदिया ने शराव पी, खाना खाया, नाचा-कूदा और गाया। उसकी मा ने कहा कि तूने मेरा दूध लजाया है। जव पकडा गया तो तू मर क्यो नहीं गया? क्या मैंने तुम्हे इसलिए जन्म दिया था कि तू नामरदी की मौत मरे। इस पर पदिया ने कहा—मा, मैं ठगा गया। मुझे धोखे से पकडा, नही तो मैं वता देता कि मेरणा ऐसा होता है। अव तो वात अगले जन्म पर जा पडी। परमेश्वर मुझे फिर मेरणा करे। मै इन्ही पहाडो मे जन्म लू और फिर ऐसी ही वहादुरी और नामवरी से काम करू। इतना कह कर उसने अपने हाथो मे फासी का फदा अपने गले मे डाल लिया।[2]

---

१ म० राज० मार०, जि० ३, पृ० १२४

२ म० राज० मार०, जि० ३, पृ० १२४

पुराने समय मे लूटमार पर अवलबित रहने को विवश किए गए मेणो को बडी कठिन साधना करके अपने आपको हर विपत्ति के लिए अभ्यस्त करना होता था।" वे नगे पैर, नगे सिर तथा कमर मे एक कपडा बाधकर तीर-कमान सभालने का अभ्यास करते। उनकी पगथलियो मे काटे टूट-टूट कर खून मारा जाता और वे ऊट की पगथलियो जैसी हो जाती। काटो की बाडो को फादना, दौड मे घोडो से भी आगे निकल जाना आदि सारे अभ्यास उन्हे करने होते। इस प्रकार अभ्यास करके लूट-मार करने के लिए निकलने वाली मेणो की टोली को 'द्रागडा' कहते थे। ऊची चोटी पर बैठ कर द्रागडे की निगरानी करने वाले मेणे को 'टू किया' कहा जाता। 'टू किए' को लूट के माल मे दुगुना हिस्सा मिलता था। इस टोली का कोई आदमी मारा जाता तो दूसरे साथी गाव मे आकर उसके घर के सामने एक तीर गाड देते। इस सकेत से घर वाले समझ जाते कि उनका आदमी मर गया है। पर अनुशासन की सीमा मे रहते हुए वे रोना-धोना नही करते। तभी कहा गया है कि 'चोर की मा घडे मे मुह देकर रोवै'। यदि प्रत्यक्ष रुदन करने की बात होती तो मरने वाले की स्त्रिया कहती-"तेरी कमर का कटारा कौन बाँधेगा, तेरा छोगाळा पोतिया कौन बाधेगा, तेरा कमठा और तीर कौन रखेगा ?" यह सुनकर सब ढाढस बधाते। पर जब वे कहती-"गाव खीमेल के मूता जोरजी का लहणा कौन चुकायेगा ?" तो कोई नही बोलता। इसीलिए मेणो मे कहावत प्रचलित है कि- लेवाळ तो है देवाळ कोनी।"[1]

मेणो की बहादुरी का बखान इनके जागा-डूम आदि करते हैं। पर वे लोग भी प्रश्रय के अभाव मे इतने पढ-लिख नही पाये कि चारण,

---

१ म० राज० मार०, जि० ३, पृ० १२२

भाट आदि जातियो की तरह अपने आश्रयदाताओ के विरुद बखान सकते। राजपूतो के इतिहासकारो तथा विरुद्धवाचको ने मेणो को सदैव गौण बनाए रखा। पर जनसाधारण मे उनकी वीरता की धाक छाई हुई है। एक भूले-भटके चारण कवि ने मारवाड के सागा नामक मेणा की बहादुरी मे एक डिंगळ गीत रचा था जो निम्न प्रकार है। इस कवि का नाम कल्याणदास था जो महडू शाखा के सुप्रसिद्ध अकबरकालीन चारण 'जाडा' का पुत्र था। सतरहवी शताब्दी मे लिखे गए इस गीत मे सागा मेणा की वीरता का वर्णन किया गया है जो उन्होने राजपूतो के किसी युद्ध मे प्रदर्शित की थी—

गीत मैणा सागा रो
कल्याणदास जाडावत कहै

कडि बाधी तणौ भरोसौ करता, तीन च्यारि लागी तरवारि।
'सागळा' तणी कटारी साची, मारणहार राखियौ मारि।।

वहियै खागि पछै उर वाहो, जोर ऊकसी मोर जुई।
मैणा तणी जडाळी समहरि, हुवतै चूक अचूक हुई।।

पडतो वाथ साथ पळटतै हाथ बखाणि बखाणि हियौ।
मारण-मरण मारकै मैणै, कूड ऊपनै साच कियौ।।

इळ पडिहार पमार अखाडै, खिव भुज वहै कटारी खाग।
मुख करि राग थाटियौ मैणी, रावताणी गायौ सुजि राग।।[1]

सेखावाटी—

कछावा खाप के यशस्वी राजपूत वीर सेखा तथा उनके वशजो की उपार्जित भूमि 'सेखावाटी' मे सीकर तथा झूझनू नामक दो जिले

१, राजस्थानी वीर गीत—पृ १५७ (गीत १४२)—नरोत्तमदास स्वामी

है । सीकर जिले की श्रीमाधोपुर तथा नीमकाथाना तहसीलो मे कभी मीणो के बडे थोक थे । झुझनू जिले की अपेक्षा सीकर जिले मे मीणो की सख्या आज भी अधिक है, जहा उनकी सख्या क्रमशः ६२१४ तथा १६७६० है ।

सीकर का 'छापोली' कस्बा मीणो का प्रधान स्थान रहा हुआ है । इसी गाव के पीछे मीणो की एक प्रसिद्ध खाप 'छापोला' कहलाई । चौदहवी शताब्दी मे मुसलमानो के साथ युद्ध होने पर छापोली से मीणो का राज्य उठ गया और वे इतस्तत बिखर गए । सीकर जिले की उक्त दोनो तहसीलो मे रहने वाले मीणो मे सामाजिक और राजनीतिक जागृति उत्पन्न करने के लिए अनेक सामाजिक तथा राजनीतिक कार्यकर्ताओ ने बडे प्रयत्न किए हैं, जिनका इस पुस्तक मे अन्यत्र उपयुक्त स्थल पर वर्णन किया जायगा ।

राजस्थान के अतिरिक्त मालवा तथा गुजरात मे भी मीणों के थोक बताए जाते हैं । भूतपूर्व ग्वालियर, इन्दौर तथा भोपाल रियासतो और उत्तर प्रदेश के आगरा, इटावा, मैनपुरी आदि क्षेत्रो मे बसने वाले मीणा समाज की सही जानकारी होने पर इस विषय पर और अधिक प्रकाश पड सकता है । हमारी मान्यता है कि भारत के दूसरे-दूसरे भागो मे रहने वाले मीणे भी मूल रूप से राजस्थान के ही निवासी रहे हैं, क्योकि आडावळा की शृखलायें ही उनका आदि–स्थान रही है और यही से वे चारो ओर फैले मालूम होते हैं ।

अध्याय ३

आदिकाल

प्राचीन मत्स्यो का निवास-क्षेत्र समझी जाने वाली भूमि मे ही सहस्राधिक वर्षों से वसे हुए आज के मीणे ही पूर्वकालीन मत्स्यो के वशज हैं—यह धारणा अनेक विद्वानो द्वारा व्यक्त की जा चुकी है। इसी मान्यता के आधार पर मीणो के आदिकाल की चर्चा इन पृष्ठो मे की जा रही है।[1] सिन्धु-घाटी-सभ्यता मे मीणो के अस्तित्व की चर्चा पहिले की जा चुकी है। पर उसके साथ परवर्ती आर्य साहित्य के उल्लेखो का कोई तालमेल नही बैठता, अत भारतीय साहित्य मे उपलब्ध प्रमाणो के आधार पर ही इनका क्रम ढूढना समीचीन होगा।

वेद—वेदो मे मत्स्यो के उल्लेख एक से अधिक स्थानो पर प्राप्त हैं। ऋग्वेद मे लिखा है कि मत्स्य लोगो का स्थान इन्द्रप्रस्थ के दक्षिण या दक्षिण-पश्चिम तथा सूरसेन या मथुरा के दक्षिण मे था। मत्स्यो पर 'तुवस' द्वारा आक्रमण किया गया था।[2] वेदो के भाष्यकार सायण ने भी वेदो मे मत्स्यो के पराक्रम की बात कही है। ऋग्वेद मे 'सुदास' के शत्रुओ मे भी इनकी गिनती की गई है।

---

१ न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी—जि २ (१९३९–४०) पृ ३९५–आर. एन सैलेटोर

राजस्थान डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स–बूदी–पृ २०–हरमन गेटे

२ ऋग्वेद–VII–१८–६

ऋग्वेद मे यह भी वर्णन आता है कि भारतवर्ष की अनेक आदिम जातियो ने आर्यों को आगे जाने से रोका था। आर्यों ने इन जातियो को दास, असुर, पणी, कीकट, आदि नामो से बताया है। इनका रग काला, नाक चपटी तथा वाणी कठोर थी। ये आर्य देवताओ तथा आर्य धर्म का आदर नही करते थे, पर भौतिक समृद्धि के धनी थे और चहारदीवारी से घिरे हुए शहरो मे रहते थे।[1] यह धारणा व्यक्त की गई है कि मत्स्य लोग सभवत. भारत के आदिवासी थे। कोई प्रमाण नही है कि वे लोग आर्य वश के थे क्योकि उनके सामाजिक जीवन मे इस विषय को सहारा देने के लिए न पहिले कुछ मिलता है और न बाद मे ही।[2]

उपनिषद्—कौशीतकी उपनिषद् मे उषीनर, वत्स कुरु-पाञ्चाल तथा काशी-विदेहो के साथ मत्स्यो का उल्लेख है।[3]

ब्राह्मण—गोपथ ब्राह्मण मे साल्वो तथा कुरु-पाञ्चालो के साथ मत्स्यो का उल्लेख है।[4] शतपथ ब्राह्मण मे मत्स्यो के वैभव का वर्णन है। 'ध्वसन द्वैतवन' नामक इनके राजा ने द्वैतवन मे अश्वमेध यज्ञ किया और वृत्रघ्न इन्द्र के लिए चौदह घोडे बाधे, जिससे द्वैतवन झील का नाम पडा।[5]

पुराण—वायुपुराण मे मत्स्य नामक राजा के जन्म की बात उपरिचर वसु तथा मछली के गर्भ से होने की कही गई है।[6] पर ये

---

१. ऐन्सेन्ट इण्डिया-पृ २०-वी जी गोखले
२ न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी (१९३९-४०) जि २, पृ. ३८९
३. सैक्रेड टेक्स्ट्स ऑफ दी ईस्ट जि १, पृ-३००-मैक्समूलर
४ गोपथ ब्राह्मण (बिब्लिओथिका इण्डिका) २-९-८-३०
५. शतपथ ब्राह्मण XIII ५-४-९ एस वी. ई XL IV पृ ३९८
६. वायुपुराण-अध्याय ९९

कल्पनायें है और मत्स्यो की उत्पत्ति का इससे कोई सम्बन्ध नही हैं। ये केवल उनकी उत्पत्ति की पवित्रता मात्र बताती हैं। इसी प्रकार की कल्पनायें अन्यान्य ग्रथो मे भी प्राप्त हैं। महाभारत मे लिखा है कि मत्स्यगधा सत्यवती के साथ ही मछली के पेट से मत्स्य नामक राजा उत्पन्न हुआ। वसु की स्त्री गिरिका का रज जब एक बाज द्वारा ले जाया जा रहा था तो यमुना मे शापग्रस्त हो मछली बनकर तैर रही भूतपूर्व अप्सरा 'अद्रिका' ने निगल लिया और इस जोडे को जन्म दिया।[1] मत्स्यराज सत्यमार्तण्ड के विषय मे भी ऐसी ही बात कहीं जाती है, पर यह पुरानी परम्परा की देखा-देखी ही लिखा गया है। पर यह धारणा भी सभावना मात्र है क्योकि इसे प्रमाणित नही किया जा सकता। सौराष्ट्र मे जेठवा शासको के ध्वज का निशान 'मत्स्य' था। कलिंग के कादम्बो तथा मथुरा के पाड्यो के भी मत्स्य लक्षण थे।[2] इन सब सदर्भो का प्राचीन मत्स्य लोगो से कोई सबध नही होना चाहिए।

विष्णुधर्मोत्तर महापुराण (अध्याय ६) मे भी मत्स्यराज का द्वैतवन सम्बन्धी उल्लेख है। पद्मपुराण मे मत्स्य को भारतवर्ष के जनपदो मे से एक माना है।

महाभारत—महाभारत मे मत्स्यो का वर्णन विस्तारपूर्वक किया गया है। उन्हे साल्वो के मित्र बताया गया है।[3] वनवास के लिए स्थान का चयन करते समय युधिष्ठिर ने कहा था कि मत्स्यराज विराट बडा बलवान तथा पाण्डवो का मित्र है। वह धर्मशील, उदार तथा बुजुर्ग है। इसलिए उसी के यहा जाकर अज्ञातवास करना

---

१ महाभारत आदि पर्व–६३–१७४

२ न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी (१६३६–४०) जि २ पृ ३६०

१ महाभारत–विराट पर्व–अध्याय३० –२६–२–१३०–रघुवीर

चाहिए।[१] यही विचार कर द्रौपदी सहित पाचो पाण्डवो ने अपना-अपना छद्मवेष धारण कर विराट राजा की नगरी मे वास करने के लिए प्रस्थान किया। नगर मे प्रवेश करने से पूर्व अर्जुन ने अपना गाण्डीव शमी वृक्ष पर टागा। युधिष्ठिर ने दुर्गा देवी की आराधना की। विराट के नगर मे पृथक्-पृथक कार्यों पर पाण्डवो की नियुक्ति से ज्ञात होता है कि मत्स्य लोगो का राज्य सुशासित था। वे हजारो गायें रखते थे, उनकी अश्वशाला भी सुव्यवस्थित थी तथा उनके अन्त पुरो मे नृत्य-वादन-गायन आदि का प्रचलन था, जहा खोजो को ही नियुक्त किया जाता था। विराटराज के नर्त्तनागार मे दिन मे भी कन्याये नृत्य करती थी। महाभारतकालीन द्यूतक्रीडा मे भी मत्स्यो की रुचि स्वाभाविक ही थी। भीमसेन द्वारा बनाए गए विविध प्रकार के मासो का भक्षण करने से उनका सामिषभोजी होना भी सिद्ध होता है।

विराट के साले तथा प्रधान सेनापति कीचक द्वारा सैरन्ध्री-रूपधारिणी द्रौपदी से काम-प्रसग का प्रस्ताव यह प्रमाणित करता है कि मत्स्य लोग दास-दासिया रखते थे तथा दासियो से अभिरमण करने की प्रथा भी उनमे थी। कीचक सैरन्ध्री को सौ-सौ दास-दासिया देने का प्रस्ताव करता है। (विराट पर्व-२२-११)। अपनी वहिन तथा विराट की पत्नी सुदेष्णा को राजी कर सैरध्री को अपने घर मद्य लेने के वहाने वुलवाने का प्रसग मत्स्यो मे मद्यपान की प्रथा और अन्त पुरीय कुचक्रो की ओर सकेत करता है। सैरन्ध्री को प्राप्त करन की कामना मे कीचक द्वारा वृषभध्वज की मनौती मनाने मे मत्स्यो के शैव होने की वात मालूम होती है। कीचक द्वारा हिरण्मय पात्रो, मणि-रत्नो, स्वर्णभूषणो, कौशेय वस्त्रो, दिव्य शयनगृहो तथा मधुमाधवी पेयो का

---

१ महाभारत, विराट पर्व, अध्याय १-१७ (गीता प्रेस)

लालच देकर सैरन्ध्री को फुसलाने का वर्णन उनकी सुख-समृद्धि का सूचक है। सूतराज केकय की कन्या सुदेष्णा से मत्स्यराज विराट का विवाह-सबंध अन्तर्जातीय विवाहो की पुष्टि करता है। 'सूत' की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए विराट पर्व मे वैशम्पायन के मुख से कहलाया गया है कि क्षत्रिय पुरुष द्वारा ब्राह्मण स्त्री से उत्पन्न सतान 'सूत' कहलाती है और ये लोग सारथी का काम करते हैं।[1]

सूत पूत्र कीचक द्वारा विराटराज की बलवृद्धि का प्रभावपूर्ण उल्लेख महाभारत मे है। उसमे लिखा है कि मर्यादाओ का पालन न करने वाला कीचक सभी राजाओ के लिए भयप्रद बन गया था। कीचक के कारण जिस प्रकार दानवो पर इन्द्र ने विजय प्राप्त की उसी प्रकार विराट ने पडोसी राजाओ पर विजय प्राप्त की। मेखल, त्रिगर्त, दशार्ण, केशरुक, मालव, यवन, पुलिद, काशी, कोसल, अग, वग, कलिग, तङ्गण, परतङ्गण मलद, निषध, तुण्डिकेर, कोकण, करद, निषिद्ध, शिवि, दुश्च्छिल्लिक आदि अनेक जनपदो के स्वामी कीचक द्वारा रण मे परास्त किए जाने पर स्थानभ्रष्ट होकर चले गए। इस प्रकार विजय दिलवाने वाले कीचक को विराट ने अपना सेनापति बना लिया। मत्स्यो की अप्रतिहत शक्ति का अनुमान उपर्युक्त वर्णन से भली प्रकार लगाया जा सकता है।[2] कीचक-वध के बाद क्रोधित हुए कीचक के बन्धुगणो द्वारा सैरन्ध्री को कीचक के साथ ही जला देने की चेष्टा से यह आभास होता है कि सभवत मत्स्यो मे सती प्रथा का चलन भी था। (विराट पर्व-२३-७)

कीचक-वध का समाचार जहा-जहा भी पहुँचा लोग बहुत प्रसन्न हुए क्योकि सभी कीचक से भयत्रस्त थे। यह समाचार दूतो

---

१ महाभारत- विराट पर्व-१५-१६ वा अध्याय

२. महाभारत-विराट पर्व-१६ वा अध्याय

द्वारा दुर्योधन के पास भी पहुचा। (विराट पर्व २५–२१) इस पर दुर्योधन ने सभी गुरुजनो के परामर्श से मत्स्यराज विराट पर आक्रमण कर उसके गोधन का हरण करने की योजना बनाई। (विराट पर्व–२६) इसी अवसर पर मत्स्य–शाल्वेयको की ओर से कीचक द्वारा अनेक बार पराजित हुए त्रिगर्तराज सुशर्मा ने भी विराट पर आक्रमण करने की राय दी। उसने कहा कि बहुधान्यसमन्वित विराट के राष्ट्र को जीत कर उसके विविध रत्नो, गावो तथा राष्ट्रो का बटवारा कर लेंगे। उसकी हजारो गौओ का हरण कर लेंगे और मत्स्यो को समाप्त कर सुखपूर्वक जीवन यापन करेंगे। सुशर्मा के इस कथन की पुष्टि कर्ण ने भी की और दुर्योधन ने भी उनको वैसा करने की आज्ञा दे दी और विराट की शतसहस्र गायो के लोभ मे कौरववाहिनी मत्स्य देश की ओर चल पडी। (विराट पर्व–३०)। जब त्रिगर्त्तों ने विराट की गायें घेरी तो ग्वालो ने आकर मत्स्यराज के सामने पुकार की। विचार-विमर्श के बाद विलक्षण कवचो से सनद्ध हुई मत्स्य सेना तथा विराट के बधु–बाधव–पुत्र आदि युद्ध के लिए चले। उनके पास आठ हजार रथ, एक हजार हाथी तथा साठ हजार घोडे थे। (विराट पर्व–३१) युद्ध मे त्रिगर्त्तराज सुशर्मा ने विराट को पकड कर अपने रथ मे बैठा लिया। युधिष्ठिर के आग्रह पर भीमसेन ने सुशर्मा को पराजित कर विराट को उसके बधन से मुक्त किया। (विराट पर्व–३३) इस विजय के उपलक्ष्य मे विराट ने कृतज्ञता प्रकट करते हुए पाण्डवो को अनेक मान-सम्मान, धन आदि देकर अलकृत कन्याएँ देने की इच्छा भी प्रकट की। (यह उल्लेख प्रकट करता है कि विजेता को अथवा कृतज्ञता–ज्ञापन के निमित्त विवाहार्थ कन्या भेट करने की प्रथा उस समय के मत्स्यो मे थी।) विजय–घोषणा को पुरवासियो मे प्रचारित करने के लिए विराट ने अपने दूत नगरी मे भेजे और यह आज्ञा दी कि विजय के उपलक्ष्य मे अलकृत पुरनारियाँ नगर से आयें, सब प्रकार के वाद्य बजाये जायें और

सजी-धजी गणिकायें भी आयें। (विराट पर्व ३४) कौरवों द्वारा पुन. साठ हजार गायें घेर लेने पर ग्वाले राजा के पास पुकारने आये। (विराट पर्व ३५) विराट का पुत्र उत्तर युद्ध के लिए जाने को उद्यत हुआ और सैरन्ध्री की राय से वृहन्नला के वेष मे अर्जुन को उसका सारथी नियुक्त किया गया। (विराट पर्व ३६—३७) अर्जुन ने भयभीत राजकुमार उत्तर को छद्मवेषधारी पाण्डवो का परिचय देकर आश्वस्त किया और कौरवो के सभी प्रमुख वीरो तथा महारथियो को हरा कर गायें छुडाई। विजय प्राप्त कर नगर—प्रवेश करने वाले मत्स्य राजकुमार के स्वागत मे राजमार्गों को पताकाओ से अलकृत किया गया एव देवमदिरो मे पुष्पहार चढाये गए। सैनिको वाद्यो तथा सजी-धजी गणिकाओ ने कुमार का स्वागत किया। हाथी पर सवार होकर घण्टाध्वनि करने वाले उद्घोषको द्वारा सभी स्थानो पर विजय की घोषणा की गई। राजकुमारी उत्तरा तथा अनेक कुमारियो द्वारा नाना शृगार आभरण धारण कर कुमार का स्वागत किया गया। भेरी, तूर तथा वारिज बजाए गए, वेशकीमती वस्त्रो मे प्रमदाओ ने शृगार किया, सूत मागध-वदी ने स्वस्तिवाचन किया और सारे शहर मे मगलाचार हुए। (विराट पर्व-६८) विराट ने कक वेपधारी युधिष्ठिर का अपमान किया। राजकुमार उत्तर ने आकर पाण्डवो का परिचय दिया। इस पर विराट ने अपना सारा राज्य पाण्डवो को समर्पित कर अर्जुन के साथ राजकुमारी उत्तरा के विवाह—सवध का प्रस्ताव रखा। अर्जुन ने अपने पुत्र अभिमन्यु के लिए वह सवध स्वीकार किया और इस प्रकार भारतो तथा मत्स्यो का सवध स्थापित हुआ। (विराट पर्व ७०-७१-७२) इसके वाद अभिमन्यु और उत्तरा के विवाह के अवसर पर अनेकानेक राजाओ के अतिरिक्त स्वय कृष्ण तथा वलराम भी आए। विवाह के शुभावसर पर आख्यानमय गायन हुए, नट-वैतालिको ने करतव दिखाए। हवनाग्नि प्रज्वलित कर विवाह को सम्पन्न किया

गया। मत्स्यराज ने हाथी-घोडे-रथो, तथा मरिण-रत्नो का दान दिया। मत्स्यराज का नगर उस महोत्सव से अतीव शोभायमान हुआ। (विराट पर्व-७२) महाभारत के युद्ध मे मत्स्यराज विराट एक अक्षौहिणी सेनासहित पाण्डवो के पक्ष मे लडा। वह द्रोणाचार्य के हाथ से ५०० वीरो सहित बडी वीरतापूर्वक लड कर मारा गया। विराट के ग्यारह भाई, दो रानिया तथा तीन पुत्र थे। उसका पुत्र उत्तर शल्य द्वारा, दूसरा पुत्र शख द्रोणाचार्य द्वारा तथा तीसरा पुत्र श्वेत भीष्म-पितामह द्वारा मारा गया।

महाभारत मे किए गए मत्स्यो के इस वर्णन से यह स्पष्ट है कि महाभारत काल मे मत्स्य लोगो का प्रभुत्व बढा-चढा था तथा वे अत्यन्त समृद्धिशाली लोग थे। पाण्डवो तथा मत्स्यो का विवाह-सम्बन्ध सपन्न होने पर यहीं कृष्ण की सलाह से अनेक राजाओ ने कौरवो के विरुद्ध पाण्डवो का पक्ष लेने का निर्णय किया था। यह भी मत्स्यो के प्रभाव का सूचक होना चाहिए।

मनुसहिता—मनु ने मत्स्यो को युद्धप्रिय जाति लिखा है। वे कहते हैं कि मत्स्यो को सेना के हरावल मे रखना चाहिए।[1] मनु ने कुरुक्षेत्र, मत्स्य, पाचाल तथा सूरसेन को ब्रह्मर्षि देश की सज्ञा दी है।

वौद्धसाहित्य—महात्मा बुद्ध के समय मे १६ पारपरिक महाजनपदो मे से एक 'मच्छ' (मत्स्य) को भी बताया गया है।[2] और

---

१. "कुरुक्षेत्र, मत्स्य, पाञ्चाल तथा सूरसेन मे जन्मे हुए पुरुषो को युद्ध की हरावल मे लडना चाहिए, और उन दूसरे लोगो को भी जो लम्बे तथा फुर्तीले हैं"—मनुसहिता–VII–१९३–एम० वी० ई० XXV पृ० २४७

२. अगुत्तर निकाय १—पृ० २१३ (काउवेल–दी जातकाज VI पृ० १३७, २८०)

भी कई स्थानो पर इसका उल्लेख है।[1] यक्खपुण्णक के साथ कुरुराज की द्यूत क्रीडा को देखने वालो मे मत्स्य भी थे। (विधुर पडित जातक) इन उल्लेखो से यह स्पष्ट है कि बौद्धकाल मे ये सुज्ञात थे और इनका स्वामित्व भूमि विशेष पर था, तथा ये सभ्य भी थे।

वराहमिहिर सहिता—इसमे भी मरु, वत्स, घोष, सारस्वत, मत्स्य, मथुरा, सूरसेन आदि नाम आए है।[2]

मत्स्य देश की भौगोलिक स्थिति—मत्स्य देश की स्थिति के सबध मे कोई विवाद नही है। ऋग्वेद मे उसे इन्द्रप्रस्थ से दक्षिण या दक्षिण-पश्चिम तथा सूरसेन या मथुरा से दक्षिण मे बताया है। उपनिषदो, ब्राह्मणो आदि मे भी जिन जनपदो के साथ मत्स्य का उल्लेख है उनसे इसकी स्थिति स्पष्ट हो जाती है। वत्स, साल्व, कुरु-पाचाल आदि जनपद मत्स्य के इर्द-गिर्द ही थे। महाभारत के विराट पर्व (१=१०-१४) मे अर्जुन ने युधिष्ठिर से कहा है कि कुरु देश के चारो ओर अनेक रमणीय तथा बहुधान्य वाले जनपद हैं। जनपदो की इस गिनती मे पाचाल, चेदि, मत्स्य, दशार्ण, नवराष्ट्र, मल्ल, शाल्व, युगन्धर अकुन्तिराष्ट्र, अवन्ति आदि नाम गिनाये गए हैं। जब युधिष्ठिर कहते है कि उनके पुरोहितो, सारथियो तथा रसोइयो से पूछा जाए तो उन्हे कहना चाहिए कि पाण्डव हमे द्वैतवन की झील के किनारे छोडकर कहा चले गए, पता नही—तब मत्स्य की स्थिति और भी स्पष्ट हो जाती है।[3] इसके बाद अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होकर पाण्डव कालिन्दी की दिशा मे आगे बढे और पैदल चलकर उसके दक्षिणी तीर की ओर गए। फिर

---

१ दीर्घनिकाय II २००

२ अलबरूनीज इण्डिया—पृ० ३००—सचाऊ

३ विराट पर्व—४—५ (गीता प्रेस)

गिरि दुर्गों तथा वन दुर्गों मे वास करते और आखेट करते हुए वे दशार्ण से उत्तर तथा पाञ्चाल से दक्षिण मे यकृल्लोम और सूरसेन मे से होते हुए जगल त्याग कर मत्स्य जनपद मे घुसे।[१] इससे स्पष्ट है कि मत्स्य के बाई ओर पाञ्चाल तथा दाई ओर दशार्ण राज्य था और द्वैतवन जगल का सारा भूभाग इसके अन्तर्गत था।

मनु द्वारा वर्णित ब्रह्मर्षि देश की स्थिति की व्याख्या करते हुए विद्वान 'रैप्सन' ने उसमे भूतपूर्व पटियाला रियासत का पूर्वार्द्ध, दिल्ली के समीप का पजाबी प्रात, अलवर, तथा मथुरा जिले मे गगा और जमुना के बीच का प्रदेश बताया है।[२]

पाणिनीकालीन भारत की चर्चा करते हुए डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने लिखा है कि 'मत्स्य का ठिकाना एक दम पक्का है। उसकी राजधानी 'विराट' थी, जो जयपुर मे वर्तमान 'बैराठ' स्थान है।'[३]

जनरल कनिंघम ने लिखा है कि अलवर की अरावली पहाडियो तथा जमुना के बीच का समस्त प्रदेश पश्चिम मे मत्स्यो तथा पूर्व मे सूरसेनो द्वारा अधिकृत था। इसके दक्षिण तथा दक्षिण–पूर्व सीमात मे दशार्ण था।[४] मत्स्य मे वर्तमान अलवर, जयपुर व भरतपुर के कुछ हिस्सो सहित था। 'बैराठ' तथा 'माचेडी' दोनो मत्स्य देश मे थे। कामा, मथुरा और बयाना सूरसेन मे थे। पूर्व मे पाचालो के पास रुहेलखण्ड, अन्तर्वेद या गगा का दोआब प्रदेश था। दशार्ण की राजधानी विदिशा थी, जिसे कनिंघम ने 'भेलसा' या 'बैसनगर' (भेलसा के पास वेत्रवती

---

१ महाभारत विराट पर्व—५=१-४ (गीता प्रेस)

२ ऐन्सेन्ट इण्डिया पृ० ५०–५१—रैप्सन

३ पाणिनीकालीन भारत पृ० ७१—डा० वासु० अग्र०

४ आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, रिपोर्ट XX, पृ० २

नदी के किनारे पुरानी राजधानी) कहा है। यह नदी बेतवा कहलाती है और भोपाल के समीप से निकल कर उज्जैन के पूर्व मे जमुना मे गिरती है।[1]

कैम्ब्रिज हिस्ट्री मे लिखा है कि मत्स्य जाति अलवर, जयपुर तथा भरतपुर के नामो से जाने गए भूभागो मे है। इस जाति के ध्वसन द्वैतवन नामक राजा ने अश्वमेध किया था। यह राजा सभवत जयपुर या अलवर के आस-पास राज्य करता था। यही द्वैतवन होना चाहिए।[2] मत्स्य की स्थिति के एक और उल्लेख मे उसे दिल्ली, जयपुर तथा आगरा के बीच का उत्तरी तथा पश्चिमी प्रदेश कहा है।[3]

चीनी यात्री ह्वेनसाग के अनुसार मत्स्य शतद्रु (नामक राज्य जिसकी राजधानी शायद सरहिंद थी) तथा मथुरा (प्राचीन सूरसेन) के बीच मे स्थित था।[4] कनिंघम ने इस राज्य की सीमा भी इस प्रकार निश्चित की है—

झूझनू से पूर्व मे कोटकासिम तक ७० मील, कोटकासिम से दक्षिण मे चबल तथा बनास के सगम तक १५० मील, उक्त सगम से पश्चिम मे अजमेर तक १५० मील, और अजमेर से उत्तर मे झूझनू तक १२० मील। यह क्षेत्रफल अनुमानत ४९० मील होता है जिसे ह्वेनसाग ने ५०० मील का 'पारियात्र' देश कहकर पुकारा है।[5]

बाद की शताब्दियो मे ऐसा प्रतीत होता है कि मत्स्य देश से खदेडे जाने पर कई थोक दक्षिण दिशा की ओर चले गए तथा

---

१ न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी (१९३९–४०) जि० २, पृ० ३९५
२ कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, जि० १–पृ० ७५–१०८
३ दी वेदिक एज–पृ० १२७—आर० सी० मजूमदार
४ बुद्धिस्ट्स रेकार्ड्स इन दी वेस्टर्न वर्ल्ड–जि० १, पृ १७८ (बील)
५ ऐनसेंट इण्डियन ज्योग्राफी—पृ० ३९१—कनिंघम

चम्बल के किनारे कोटा–बूदी के पहाडो तथा और नीचे मालवा के पठारो मे जा बसे। डा० हरमन गेटे का विश्वास है कि ये वैदिक मत्स्यो के ही वशज हैं।[1]

इस प्रकार मत्स्य देश की भौगोलिक स्थिति निर्विवाद रूप से स्पष्ट है। यह भी कोई सयोग की बात नही है कि मत्स्य देश के नाम से अभिहित इसी भूभाग मे आज के मोरगो का प्रधान निवास रहा है। यह तथ्य यह प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त होना चाहिए कि आज के मीरणे ही प्राचीन मत्स्यो के वशज हैं।

मत्स्य सघ— जनपद या जातीय भूमियो के इतिहास मे तीन अवस्थायें मानी गई हैं। सबसे पहिलें घुमतू कबीलो का युग था जो 'जन' कहलाते थे। इस भ्रमणशील अवस्था मे 'जन' का सम्बन्ध भूमि से निश्चित नही हुआ था। एक 'जन' के सदस्य आपस मे रक्त सम्बन्ध से बँधे थे, जो कुल कहलाता था। कबीले के भीतर कुटुम्ब के विस्तार की यह दूसरी अवस्था थी। यही घुमन्तू 'जन' समय पाकर स्थान विशेष पर बस गया। उसका पद या ठिकाना 'जनपद' कहलाया। 'जन' के जो क्षत्रिय थे उन्ही से 'जनपद' की ठकुराई कायम हुई और 'जनपद' का नाम भी उन्ही के नाम से हुआ।[2] इस तीसरी स्थिति से आगे चल कर ही पुरराज्यो तथा एकतत्र प्रणाली का प्रारम्भ हुआ।

गण या सघ मे प्रतिनिधित्व का आधार कुलो का सगठन था। प्रत्येक कुल एक इकाई माना जाता था। एक कुल का एक प्रतिनिधि शासन मे भाग लेने का अधिकारी होता था जो राजा कहलाता था।

---

१ डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स (१९६४) बूदी–पृ० २९

२. पाणिनीकालीन भारत—पृ० ५८—डा० वासु० अग्र०

महाभारत के सभापर्व (१४-२) मे 'गृहे गृहे हि राजान' कहा गया है। लिच्छवि गण मे ७७०७ कुल और उतने ही राजा (राजाओ) थे।[1] पाणिनी के समय सघ-आदोलन छा गया था। मोटे तौर पर विदित होता है कि देश के प्राच्य भाग मे राज्य-प्रथा तथा उदीच्य भाग मे सघो की प्रथा अधिक प्रचलित थी।[2]

राजस्थान मे ही मत्स्यो के अतिरिक्त यौधेय, मालव, साल्व आदि अनेक गणो के होने के प्रमाण मिले हैं। जाटो के गणराज्य भी अवश्य रहे होगे। इन गणो तथा सघो के कायकलाप भी भिन्न-भिन्न होते थे। मत्स्य लोगो का सघ किस प्रकार का था उसकी कल्पना करते समय प्राचीन ग्र थो मे वर्णित नाना प्रकार के सघो पर ध्यान देना होगा। सघो की उस सूची मे पार्वतीय आयुधजीवी सघो का भी उल्लेख है। ये सघ पश्चिमी भारत मे थे-"प्रतीच्या पार्वतीय"। इन आयुधजीवी सघो मे 'पूग' तथा 'व्रात' नामक आयुधजीवी विभेद भी होते थे जो लूटमार का ही व्यवसाय करते थे। व्रात उन लडाकू जातियो की सज्ञा थी जिनका आर्यों के साथ सघर्प हुआ था और जो लूटमार करके निर्वाह करती थी। ऋग्वेद मे आर्य योद्धाओ को 'व्रात साह' कहा गया है। श्रोत सूत्रो मे भी व्रात्य' का उल्लेख है। लाट्यायन श्रौत सूत्र से ज्ञात होता है कि व्रात्यो के मागध या वदी सूत ही उनकी लोक गाथाओ को गाकर सुनाते तथा धार्मिक कृत्य भी करते। व्रात लोग तख्ते का फट्टा जडा हुआ खड-खडिया रथ रखते तथा ऊबड-खावड मार्गों पर चलते। ये विना डोरी तथा वाण का धनुप (गुलेल) रखते टेढी पगडी वाधते, भेड की खाल की पोस्तीन पहनते तथा कुछ लाल और कुछ काले कपडे पहिनते। सवद्ध होने पर भी व्रात वृत्ति वाले लोग ऊचे वने रहते।[3]

---

१ पाणिनीकालीन भारत—पृ० ४३२—डा० वासु० अग्र०
२ पाणिनीकालीन भारत—पृ० ४३४—डा० वासु० अग्र०
३ पाणिनीकालीन भारत—पृ० ४४९-५०-५३-५५—डा० वा० ग्र०

उपर्युक्त से यह कल्पना की जा सकती है कि मत्स्यो का सघ, जिनके वशज शताब्दियो तक अपनी लूट-मार की प्रवृत्ति के लिए जाने गए हैं, मूलत. आयुधजीवी रहा हो। पहाडी प्रदेशो मे रहने के कारण भी उनका आयुधजीवी होना स्वाभाविक था। सभवत. वाद मे उनमे से कुछ कुल 'पुरराज्य' की अस्वथा को प्राप्त हो गए तथा शेप अपना पारपरिक कार्य करते रहे। मुस्लिम तथा राजपूत काल मे ऐसे पुरराज्यो के प्रमाण मिलते हैं जिनकी यथास्थान चर्चा की जाएगी।

एक और मान्यता के अनुसार मत्स्य लोग पशुपालक थे। अपने पशु-धन की रक्षा के लिए ही इन्हे युद्धप्रिय होना पडा था। मत्स्य देश के राजा विराट के पास एक लाख गायें होने का उल्लेख महाभारत मे है। चीनी यात्री ह्वेनसाग ने मत्स्य के लोगो को पशुपालक, युद्धप्रिय और राज्यप्रणाली वाले बताया हैं, जैसा कि वे पहिले से रहते आये हैं।[1] उसने लिखा है कि यहाँ बैलो तथा भेडो की अधिकता है। कनिघम के अनुसार मत्स्यो के ये लक्षण ठीक हैं क्योकि वैराठ के दक्षिण मे भू. पू, जयपुर राज्य के लोग दिल्ली तथा आगरा के मुस्लिम शहरो तथा वहा की अग्रेजी छावनियो को भेडे भेजने का काम करते थे।[2]

कनिघम का यह कथन आशिक रूप से सही हो सकता है पर अधिकाश मत्स्य लोग आयुधजीवी ही रहे होंगे ऐसा मानना अधिक सगत होगा, क्योकि इनका इतिहास, परम्परा तथा सामाजिक स्थिति इसकी साक्षी है।

---

१. बुद्धिस्ट्स रेकार्ड्स इन दी वेस्टर्न वर्ल्ड-ह्वेनसाग-जि १, पृ. १७८ (बील)

२ ऐंनसेंट ज्योग्राफी ऑफ इण्डिया, पृ. ३९३-कनिंघम

अध्याय ४

हिन्दूकाल

मीणो का सस्कृत रूप 'मत्स्य' मनु के समय से 'पालो' के समय (नवी शताब्दी) तक चलता रहा। लेकिन यह आश्चर्यजनक है कि कौटिल्य इसका उल्लेख नहीं करता, यद्यपि वह मल्लो का उल्लेख करता है। चन्द्रगुप्त मौर्य के पदग्रहण के समय मत्स्यो का क्या हुआ इसका जिक्र वह नही करता।

महाभारत से वि. स. पूर्व २६४ (मौर्यकाल) तक राजस्थान का इतिहास अ धकारमय है। बैराठ मे २०७ वि. के रुद्रदामा के लेख मे चन्द्रगुप्त मौर्य के बनाए सुदर्शन तालाब का उल्लेख है। ह्वेनसाग (सातवीं शताब्दी) के उल्लेख 'पारियात्र' को यदि बैराठ या मत्स्य देश मान लें तो कहा जा सकता है कि यह प्रदेश शातवाहन साम्राज्य मे सम्मिलित था। नासिक प्रशस्ति मे गौत्तमीपुत्र द्वारा पारिवाट (पारियात्र) विजय का उल्लेख है।[१]

कादम्ब मयूर शर्मा का च द्रवल्ली अभिलेख कहता है कि उसने ३५८ ई मे पारियात्र को जीता था।

समुद्रगुप्त के समय मे जब गुप्त सत्ता हुई तो उसके द्वारा विजित जगली राज्यो मे यदि दशार्ण को मान लें तो मत्स्य भी उससे बचा नही होगा। ऐसी ही एक गर्वोक्ति परिव्राजक महाराजा हस्तिन् की भी है जो जगली लोगो को जीतने की बात कहता है।[२]

---

१. एपिग्राफिया इण्डिका VIII पृ. ६०

२. न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी (१९३९–४०) जि २, पृ ३९५–सैलेटोर

समकालीन ग्रथो तथा शिलालेखो आदि मे मत्स्यो का उल्लेख नही होने का एक मात्र स्पष्ट कारण यही हो सकता है कि मौर्यों की विजय के कारण वे इतने ना कुछ हो गए थे कि देश के तत्कालीन इतिहास मे कोई महत्वपूर्ण कार्य नही कर पाए और उन दिनो के विवरणो मे उन्हे भुला दिया गया।[1]

पर इसका यह आशय नही कि मत्स्य लोग उत्तर भारत के इतिहास मे राजनैतिक शक्ति के रूप मे समाप्त हो चुके थे। यद्यपि गुप्त-काल मे मत्स्यो के विषय मे वहुत कम सुनने को मिलता है पर यह नहीं कहा जा सकता कि उनकी राजनैतिक शक्ति समाप्त हो गई थी, क्योकि ह्वेनसाग, चीनी यात्री, ने सातवी शताब्दी मे मत्स्य राज्य के राजा का उल्लेख करते हुए उसके राज्य का विस्तार से वर्णन किया है। वह कहता है कि शतद्रु के दक्षिण-पश्चिम मे फिर जाते हुए हम पो-लि-ये-टो-लो (पारियात्र-विराट) के राज्यो मे आते हैं। यह देश ५०० मील के घेरे मे है और इसकी राजधानी लगभग २½ मील (१४-१५ ली) है। अन्न का वाहुल्य है और गेहू की साख काफी देर की होती है। साठ दिन वाद ही पक जाने वाला एक अद्भुत प्रकार का चावल होता है। बैल तथा भेडो की अधिकता है तथा फूल-फल कम है। आबहवा गर्म तथा लाभदायक है। लोगो के तौर तरीके दृढ तथा भयप्रद है। विद्या के प्रति आदर है और साधु-सन्तो का भी सम्मान करते हैं। राजा वैश्य जाति का है। वह वीर और योद्धा है। आठ सघाराम, प्राय नष्ट तथा थोडे से पुरोहित हैं जो धार्मिक ग्रथो का अध्ययन करते हैं। विभिन्न सप्रदायो के देवमन्दिर हैं जिनके प्रायः एक हजार अनुयायी हैं। इससे ५०० ली या इतना ही चलने पर हम मो-तु-लो (मथुरा) देश मे आते हैं।[2]

---

१ न्यू इण्डिया एण्टीक्वेरी (१९३९-४०) जि० २, पृ० ३९५ सैलेटोर
२ वुद्धिस्ट्स रेकार्ड्स इन दी वेस्टर्न वर्ल्ड—ह्वेनसाग—जि १, पृ. १७८ (वील)

यह एक दिलचस्प बात है कि इस प्रदेश मे सातवी शताब्दी मे बौद्ध धर्म अवनति पर था, जिसके कुछ अनुयायी मात्र हीनयान शाखा के थे, जब कि हिन्दू धर्म के अनेक मन्दिर और लगभग एक हजार अनुयायी थे।

उपर्युक्त वर्णन से शतद्रु तथा मथुरा के बीच स्थित मत्स्य देश की भौगोलिक स्थिति स्पष्ट हो जाती है। जनरल कनिंघम ने ५०० मील के घेरे मे बसे पारियात्र तथा उसकी राजधानी का खुलासा किया है। जिस घाटी मे राजधानी बनी थी उसका उल्लेख करते हुए कनिंघम लिखते हैं कि इसका मुख्य दरवाजा उत्तर-पश्चिम मे बाणगंगा के छोटे से पर प्रधान नाले के किनारे पर है जो यहा का पानी बहा कर ले जाता है। इस घाटी का व्यास २½ मील तथा फैलाव ७-८ मील है।[1]

आठवी शताब्दी मे मत्स्यो मे फिर राजनैतिक जागृति आई और वे शायद स्वतत्र तथा महत्वपूर्ण व्यक्ति माने जाने लगे। पाल राजा धर्मपालदेव के खलीलपुर लेख मे इनका उल्लेख है। धर्मपालदेव द्वारा मत्स्यो की सहमति से कान्यकुब्ज के सिंहासन पर चक्रायुध राजा को आरूढ करने की बात का स्पष्टीकरण नारायणपालदेव के भागलपुर लेख मे हो जाता है, जिसमे कहा गया है कि चक्रायुध को धर्मपालदेव ने राज्य का दान वैसे ही दिया जैसे विष्णु ने बलि को दिया था। पर इस उल्लेख से यह नही कहा जा सकता कि धर्मपालदेव ने कुरु, यदु, यवन गाधार, कीर, अवति भोज और मत्स्य (उत्तर पूर्वी राजस्थान) को जीता था। कन्नौज की राज्य-सत्ता इन प्रदेशो ने स्वीकार की हो ऐसा भी नही माना जा सकता। इन उल्लेखो से यही प्रकट होता है कि धर्मपालदेव ने कन्नौज की गद्दी पर अपना नामजद राजा बैठाया इसने

---

१ ऐन्सेन्ट ज्योग्राफी ऑफ इण्डिया, पृ ३९१—कनिंघम

मत्स्य आदि प्रदेशों की सहमति प्राप्त की जिन्हें वह गुर्जरप्रतिहारों तथा कन्नौज के बीच (बफर स्टेट) मध्यवर्ती राज्य की भाति काम मे लेना चाहता था, तथा मत्स्य देश भोजको के देश (भोज) और मद्रको (रावी-चिनाव के बीच का देश जिसकी राजधानी स्यालकोट थी) के बीच अवस्थित था, जो वर्तमान विराट का प्राचीन नाम था, जैसा कि प्रवरसेन द्वितीय के दानपत्र से विदित होता है।[1]

डा० रमाशकर त्रिपाठी ने भी कन्नौज के इस प्रसग की चर्चा की है। वे लिखते हैं कि ७७९-९४ मे ध्रुव राष्ट्रकूट तथा गौड राजा धर्मपाल कन्नौज पर चढ आए। पाल राजा ने तो इन्द्रायुध को अपदस्थ भी कर दिया और अपने मुखापेक्षी चक्रायुध को सिहासन पर बैठाया। यह कदम उठाने से पूर्व उसने भोज, मत्स्य मद्र, कुरु, यवन, अवन्ति, गधार तथा कीर के राजाओ से स्वीकृति ले लेने की सावधानी बरती, क्योंकि उत्तर भारत के इस प्रमुख राज्य से सबधित हर प्रकार की राजनीतिक व्यवस्था मे इन सभी समकालीन शक्तियो की स्वाभाविक अभिरुचि थी। पर कन्नौज के स्वामित्व पर धर्मपाल का यह दावा राष्ट्रकूट राजा गोविंद तृतीय (७९४-८१४) को अच्छा नहीं लगा।[2]

पालो तथा मत्स्यो के इस समझौते की तिथि पर और विचार कर लेना ठीक होगा। इस प्रसग से सबधित निम्नलिखित राजाओ के समय इस प्रकार हैं—

धर्मपाल ७६९—८१५, नागभट्ट द्वितीय ८१५—८३३, गोविंद तृतीय ७९४—८१४। नारायणपाल के भागलपुर लेख मे चक्रायुध के सिहासनारूढ होने की कोई तिथि नहीं दी है। हरिवश मे चक्रायुध के पूर्वज इन्द्रायुध का राज्यकाल शक ७०५ (ई ७८३-८४) दिया है। अत

---

१. न्यू इण्डियन एन्टीक्वेरी (१९३९—४०) पृ०—३९६—सैलेटोर

२. प्राचीन भारत का इतिहास, पृ० ३९८—डा० रमाशकर त्रिपाठी

धर्मपाल ने चक्रायुध को ७८३-८४ तथा ८१३-१४ के बीच सिंहासन पर बैठाया होगा। धर्मपाल का एक उल्लेख वर्ष ३२ माघ को १२ का है जिसे डा० कीलहार्न ने नवी शताब्दी माना है।[१] अत यह समझौता ८०१ ई मे होना मान सकते है।[२]

धर्मपालदेव के उल्लेख से मत्स्यो का थोडे दिनो तक स्वतत्रता का उपभोग करना समझ मे आता है, पर शीघ्र ही गुर्जरप्रतिहार नागभट्ट द्वितीय ने चक्रायुध को कन्नौज पर नही देखना चाहा और बीच मे पडने वाली मत्स्य, किरात आदि शक्तियो को सहन नही किया। इसलिए उसने आनर्त्त, मालव, किरात, तुरुष्क, वत्स और मत्स्य प्रदेशो के पहाडी किलो को विजित किया। यह उल्लेख गुर्जरप्रतिहार भोज की ग्वालियर प्रशस्ति मे मिलता है जिसका काल नवी शताब्दी ईसवी माना गया है।

नागभट्ट के बाद राष्ट्रकूट राजा गोविंद तृतीय ने भी, जिसने नागभट्ट द्वितीय को भी पराजित किया बताते हैं, मत्स्यो को विजित किया होगा, ऐसा उसकी विजय के उल्लेखो से आभास होता है। पर विजय करके भी उसने उनको अपने राज्यो का शासन करने दिया होगा। नागभट्ट द्वितीय की हार के बाद मत्स्यो का कोई उल्लेख नही मिलता है, पर वे ग्यारहवी शताब्दी के प्रारम्भ मे हुए मुस्लिम आक्रमणों तक महत्वहीन व्यक्तियो के रूप मे रहते रहे होगे।[3]

इस प्रकार नवी शताब्दी तक पालो, गुर्जरप्रतिहारो तथा राष्ट्रकूटो के काल तक मत्स्य लोग जातीय नेताओ के रूप मे राज्य करते रहे होंगे।

---

१ एपिग्राफिया इण्डिका, जि० ४-३४-२४४

२ न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी (१९३९-४०) जि० २, पृ० ३९६-९७

३. न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी (१९३९-४०) जि० २, पृ० ३९८-९९

अध्याय ५

प्रारम्भिक मुस्लिम काल

पालो, गुर्जरप्रतिहारो तथा राष्ट्रकूटो के बाद मत्स्य लोगो का कोई उल्लेख प्राप्त नही होता। इसलिए नवी शताब्दी के बाद मत्स्यो मे गण या सघबद्ध प्रणाली रही या नही, कहा नही जा सकता। मुस्लिम इतिहासकारो के कुछ वर्णनो मे मत्स्यो द्वारा अधिकृत इस क्षेत्र के प्रसग आते है जिनसे इनका राज्यप्रणाली के अनुयायी होना ही पाया जाता है। अलउत्वी नामक इतिहासकार के अनुसार ये लोग राज्यप्रणाली के मानने वाले और स्वतत्र राज्य के थे। अपनी पुस्तक 'तारीख यमोनी' मे वह लिखता है कि किस प्रकार सुल्तान मुहम्मद गजनवी उन पर टूट कर पडा था।[1] इस वर्णन मे वह मत्स्यभूमि मे अवस्थित 'नराणा' नामक स्थान का उल्लेख करता हुआ लिखता है—

"सुल्तान ने पुन हिंद पर आक्रमण करने का विचार किया और उसने 'नराणा' की ओर कूच किया। अश्व दौडाता हुआ तथा कठोर और मुलायम भूमियो पर चलता हुआ वह हिन्द के मध्य मे पहुचा, जहा उसने उन मुखियाओ को समाप्त किया, जो इससे पूर्व किसी के अधीन नही हुए थे, उनकी देवमूर्तियो को नष्ट किया और उस देश के स्वेच्छाचारियो को मौत के घाट उतारा। वह धीरे धीरे सतर्कतापूर्वक अपनी योजना की पूर्ति मे आगे बढा। वह काफिरो के मुखियाओ के साथ लडा जिसमे परमात्मा ने उसे जायदाद, घोडो और हाथियो के रूप मे बहुत सा लूट का माल प्रदान किया और परमात्मा के मित्रो ने हर

---

१ इलियट एण्ड डाउसन—जि. २, पृ ३६

पहाडी तथा घाटी मे कत्लेग्राम किया। यह सारा लूट का माल लेकर सुल्तान गजनी लौट गया।"

अलउत्बो इस आक्रमण की कोई तारीख नही देता, पर वह उसे भीमनगर तथा गुर (Ghur) के बीच (३९९–४०१ हि०) रखता है, जिसका अर्थ है कि यह आक्रमण सन् ४०० हि० (१००९ ई सन्) मे हुआ होगा। इब्नुल अथिर ने, जिसका विवरण बहुत सही और विश्वसनीय माना गया है, इस आक्रमण का इस वर्ष अक्टूबर मे होना लिखा है।[1]

फरिश्ता ने भी गजनवी के इस आक्रमण का उल्लेख करते हुए लिखा है कि "उसने एक नाले के किनारे अपना कूच जारी रखा, जिसके किनारो पर सात दृढ दुर्ग थे, जो सभी बारी-बारी से जीत लिए गए। यहा कुछ बहुत प्राचीन मन्दिर थे, जिन्हे हिन्दू लोग चार हजार वर्षो से भी पहिले के बताते थे।"[2] पर फरिश्ता का यह कहना कि सुल्तान का यह आक्रमण मथुरा के मन्दिरो को नष्ट करने के बाद १०१७ ई (४०९ हि) म हुआ, गलत है, क्योकि अलउत्बा का कथन अधिक विश्वसनीय है।

कनिंघम ने गजनवी के आक्रमण की यह जगह 'नारायणपुर' बताई है जो बैराठ (विराटपुर) के उत्तरपूर्व मे १२ मील पर है।[3] 'जमी-उत-तवारीख-रशीदुद्दीन' मे कहा गया है कि कन्नौज से दक्षिण–पश्चिम

---

१ दी लाइफ एण्ड टाइम्स ऑफ सुल्तान मुहम्मद गजनी–पृ ९–मुहम्मद नाजिम

२ फरिश्ता–दी राइज ऑफ दी मोहमडन पावर इन इण्डिया, जि० १, पृ० ५९-ब्रिग्स

३ ऐन्मेण्ट ज्योग्राफी ऑफ इण्डिया (१९२४ ए डी)–पृ ३९४–कनिंघम

मे गुजरात की राजधानी 'नाराणा'[1] की ओर चलते हुए दूरी १८ परसग थी, तथा नाराणा से मथुरा तक २८ परसग। फरिश्ता भी यही कहता है कि मथुरा के मन्दिरो को नष्ट करने के बाद महमूद ने सात किलो पर आक्रमण किया जो स्पष्ट ही 'नारायणपुर' के थे। इस आक्रमण की पुष्टि एक कसीदे मे भी की गई है जिसमे कवि कहता है कि "'नारायण' की विजय पर मुझे स्वर्णमुद्राओ की दो थैलिया मिली।"[2]

इस आक्रमण का परिणाम नारायणपुर तथा आस-पास के स्थानो के लिए अत्यत घातक रहा। रशीदुद्दीन लिखता है कि शहर को नष्ट कर दिया गया और उसके निवासी सीमात के एक कस्बे में चले गए।[3] इस कस्बे का नाम 'जदूरा'? बताया गया है।[4] अल उत्बी ने ऐसे किसी सर्वनाश का वर्णन नही किया है। उसने लिखा है कि नारायणपुर का राजा, लूटे और हराये जाने के बाद, यह मान गया कि वह सुलतान का मुकाबला नही कर सकता। इसलिए उसने अपने कुछ सबधियो तथा सरदारो को सुलतान के पास यह प्रार्थना करने के लिए भेजा कि वह भारत पर फिर आक्रमण न करे और ऐसा न करने के बदले मे उसे द्रव्य की भेंट देने की बात कहलाई। राजा ने सुलतान के सुखद भविष्य की शुभकामना भी भिजवाई। सुलतान ने उनसे कहा कि वह साधारण हाथी से दुगने आकार तथा ताकत वाले ५० हाथी पेश करे तथा उन पर बेशकीमती और अलभ्य पदार्थ लादे जायें।

---

१ इलियट एण्ड डाउसन, पृ० ५८–५६ (नोट—नारायणपुर कभी गुजरात की राजधानी नही रही)

२ इलियट एण्ड डाउसन, जि. १, पृ ५६ (मुहम्मद नाजिम पृ० १०२)

३ इलियट एण्ड डाउसन, जि० १, पृ० ३६

४ अलबरूनीज इण्डिया. जि० १. पृ० २०२—डा० एडवर्ड सी० सचाऊ

राजा ने प्रति वर्ष यह नजराना भेजना स्वीकार किया। सुलतान ने भी यह प्रस्ताव स्वीकार किया क्योकि उसके नजराना देने तथा इस प्रकार विनम्र होकर अधीनता स्वीकार करने से इस्लाम की वृद्धि हुई। सुलतान ने एक दूत यह देखने के लिए भेजा कि इन शर्तों का पालन किया जाता है अथवा नही। हिंद के राजा ने पूरी तरह शर्तों का पालन किया और अपने सरदारो मे से एक को हाथियो के साथ यह निश्चय करने के लिए भेजा कि वे सुलतान को पेश किए जायें। इसलिए शाति स्थापित हुई, कर दिया गया और खुरासान तथा हिंद के बीच काफिले पूरी सुरक्षा के साथ यात्रा करने लगे।

नारायणपुर की स्थिति वैराठ के समीप ही थी इसका खुलासा करते हुए जनरल कनिंघम ने विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला है।[1]

सुप्रसिद्ध अबू रिहा (अलबरूनी) उत्तरी भारत के अपने भौगोलिक वर्णन मे 'नारायण' शहर को तीन विभिन्न यात्रा-पथो का प्रारंभिक स्थल बताता है, जो दक्षिण, दक्षिण-पश्चिम तथा पश्चिम की ओर जाते हैं। प्राचीन भारतीय इतिहास के विद्वान एम रैनॉड (M Reinaud) ने इस स्थान की पहिचान तो नही की है पर इसकी स्थिति निश्चित रूप से जयपुर के आस-पास बताई है। 'नारायण' की भौगोलिक स्थिति ने सर एच इलियट को भी भ्रमित किया था। वे लिखते है कि एक अपवाद को छोड कर 'नरवर' सभी आवश्यक शर्तें पूरी करता है। पर नारायण के वैराठ या मत्स्य की राजधानी होने के पक्ष मे जो प्रमाण दिये जा रहे हैं, उनसे उसकी स्थिति अपरिवर्तनीय है।

चीनी यात्री व्हेनसाग के वर्णन मे पो-लि-ये-टो-लो, जिसे रैनॉड ने पारियात्र या वैराठ माना है, को मथुरा से ५००ली अर्थात् ८३$\frac{१}{३}$ मील

---

१ आर्क्योलोजिकल रिपोर्ट (१८६४-६५) पृ० १, जनरल कनिंघम
इलियट एण्ड डाउसन, जि० १, पृ० ३९३

पश्चिम मे अवस्थित बताया गया है। मुहम्मद का समकालीन अबू रिहा भी उसे मथुरा से पश्चिम मे २८ परसग की दूरी पर बताता है। परसग को ३½ मील के नाप का मानने से यह दूरी ९८ मील होती है, जो व्हेनसाग की दूरी से लगभग १४ मील अधिक बैठती है। पर मुसलमान इतिहासकारो द्वारा दिए गए 'करजात' की राजधानी 'नराणा' के वर्णनो से 'वैराठ' की राजधानी 'नारायण' मे उसका पूरा मेल बैठता है। इसलिए मथुरा मे उसकी उपर्युक्त दूरियो का अन्तर नगण्य है।

अबुरिहा ने यह भी लिखा है कि 'नराणा' या 'बजाना' को मुसलमान 'नारायण' कहकर पुकारते है।[1] इसमे 'नारायणपुर' की सम्भावना और भी बढ जाती है। अबू रिहा ने कन्नौज से नराणा तक के दो मार्गो का उल्लेख किया है जिनमे से पहला तो सीधा मथुरा से ५६ परसग या १९६ मील का तथा दूसरा जमुना से दक्षिण होकर ८८ परसग या ३०८ मील का बताया है। दूसरे मार्ग मे असी (अस्सीघाट), सहीना (सहानिया) जनादरा (चद्रा ?–हिण्डोन) तथा राजौरी (राजोरगढ) के स्थान बताए गए हैं। अबू रिहा ने इसे मवाड मे चित्तौड से उत्तर २५ परसग, मुलतान से पूव मे ५० परसग तथा अनहिलवाडा से उत्तर–पूर्व मे ६० परसग बताया है। ये सारी दूरिया भी यही सकेत करती है कि यह नारायणपुर ही था, यद्यपि परसगो के उल्लेख मे यहा कुछ भूल रही प्रतीत होती है।

अनेक विद्वानो के इस मतैक्य के बावजूद सी इ. ए डब्ल्यू ओल्डम द्वारा दी गई एक सूचना के अनुसार पुरातत्वज्ञ सर ऑरेल स्टेइन ने नराणा की स्थिति पजाब के नमक वाले क्षेत्र मे मानी है।[2]

---

१ अलबरूनीज इण्डिया, जि १, पृ २०२–डा० एडवर्ड सी सचाऊ
२ आर्कयोलोजिकल रिमेस एण्ड एक्सकेवेशन्स ऑफ वैराट (२१-५-३७) पृ० ४०–आर बी दयाराम साहनी

फरिश्ता के अनुसार यह आक्रमण ४१३ हि० अर्थात् १०२२ ई (१०७९ वि०) मे हुआ। उसने लिखा है कि मुहम्मद ने जब यह सुना कि कैराट (बैराठ) तथा नारदीन (नारायण) नामक दो पहाडी प्रदेशो के निवासियो ने अब भी मूर्तिपूजा नही छोडी है, तो उसने उन्हे इस्लाम ग्रहण करने के लिए विवश करने का सकल्प किया। फलत अमीर (मुहम्मद) ने उन स्थानो पर अधिकार किया और उन्हे लूटा।

नारायणपुर तथा बैराठ के उपर्युक्त वर्णनो से यह अनुमान लगाया जाना चाहिए कि ये स्थान पुराने मत्स्यो (आज के मीणो) के ही अधिकार मे थे और मुहम्मद का आक्रमण इन्ही पर हुआ था।

मुसलमान शासको का दूसरा महत्वपूर्ण उल्लेख बलबन के समय का है जब उसने एक लाख मेवो को मौत के घाट उतारा बताते है। पर इससे आगे मत्स्यो के किसी उल्लेखनीय राज्य का वर्णन नही आता जिसने मुसलमानो से टक्कर ली हो। ऐसा प्रतीत होता है कि राज्य समाप्त हो जाने पर इन लोगो ने पहाडियो मे छिपे रह कर शासको को तग करने तथा लूट–मार करने की नीति अपना ली थी। मुस्लिम इतिहासकार अलवर-भरतपुर मे रहने वाले मीणो को 'मेव' कह कर पुकारने लगे थे। मेव लोग आडावळा की पहाडियो मे बनाए गए अपने मेवासो से निकल कर दिल्ली तथा इधर-उधर के शहरो पर टूट कर पडते और लूट-मार कर पुन वहा जा छिपते।[1] ई सन १२५९ मे दसहजार मेवाती और उनके २०० सरदार तथा अन्य साधारण सैनिक बदी बनाए गए क्योकि मेवात के राजा और राजपूत उपद्रव करने लगे थे। असख्य घोडे तथा सैनिक एकत्र करके उन्हे लूटा गया और जला दिया गया। बलबन की यह नीति भी काम न कर सकी

---

१ फरिश्ता जि १ पृ २४४–ब्रिग्स

और १२६५ ई मे उसने उनको समाप्त करने की नई योजना बनाई। दिल्ली से दक्षिणपूर्व मे ८० मील तक के पहाडी क्षेत्र मे फैले हुए इन उपद्रवी मेवो को खत्म करने के लिए उसने एक विशाल सेना भेजी जिसने कुल्हाडो तथा दूसरें उपकरणो से सौ मील के घेरे मे फैले हुए जगल को साफ किया और एक लाख मेवातियो को मार डाला।

इतिहासकार फरिश्ता के उपर्युक्त कथन का मिलान उसके पूर्ववर्ती इतिहासकार जियाउद्दीन बर्नी के वर्णन से भी करने की आवश्यकता है। बर्नी लिखता है कि अपने राज्यकाल के प्रथम वर्ष को बलबन ने जगलो को साफ करने तथा उन मेवातियो को समाप्त करने मे लगाया जिन्हे शमसुद्दीन के बाद किसी ने नही छेडा था। शमसुद्दीन के पुत्रो की अयोग्यता के कारण दिल्ली के आसपास के क्षेत्रो मे मेवातियो की हिम्मत इतनी बढ गई थी कि वे भरे दिन ही दिल्ली मे घुस आते तथा कुओ पर पानी भरती हुई पनिहारिनो के बर्तन छीन लेते और कपडे तक उतार कर ले जाते। इस डर से दिल्ली के पश्चिमी द्वार दिन रहते ही बद कर दिए जाने लगे। दिल्ली के पडोस मे फैले हुए घने जगलो मे से गुजरने वाले मार्गों पर उनका उपद्रव इतना बढ गया था कि न कोई तीर्थ यात्री और न राजकीय सत्ताधारी ही उन पर जाने का साहस करता। व्यापारियो के काफिले उन मार्गों से सुरक्षित रूप से नही गुजर सकते थे। मेवातियो के इन कृत्यो से दिल्ली भयभीत हो उठी थी। इसलिए अपने राज्यारोहण के प्रथम वर्ष मे ही सुलतान ने अपना कर्तव्य समझा कि वह इन मेवातियो का दमन करे और तदनुरूप पूरे वर्ष भर वह जगलो को साफ कराने तथा उपद्रवियो को समाप्त करने मे लगा रहा। उसने शहर के आस-पास कई चौकिया कायम की और जमीनें देकर अफगानो को उन पर नियुक्त किया। पर इस योजना मे सुलतान के एक लाख सिपाही मेवातियो द्वारा मार डाले गए। सुलतान ने कुछ प्रतिष्ठित सरदारो को मेवातियो का यह इलाका सौंप कर उन्हे

हुक्म दिया कि वे इन आततायियो को मार डालें, उनकी स्त्रियो तथा बच्चो को कैद कर लें तथा सदा के लिए उनको समाप्त करने की दृष्टि से उनके जगलो को साफ कर डालें।[1]

वर्नी के इस वर्णन से स्पष्ट है कि फरिश्ता ने बलबन द्वारा मेवातियो की हत्या का वर्णन तो ठीक ही किया है पर मेवातियो द्वारा बलबन के एक लाख सैनिको को मारने की बात छिपा ली है। वर्नी का यह कथन विश्वसनीय है। बलबन द्वारा मेवातियो को समाप्त करने के लिए सरदारो को भूमि देकर मेवात मे बसाने की नीति बाद के शासको द्वारा भी अपनाई गई। गुजरात के सुलतान मुहम्मद द्वितीय ने भी सोलहवी सदी मे गुजरात के गिरासियो को समाप्त करने के लिए ऐसी ही नीति अपनाई थी।[2] यहा यह भी ध्यान देने योग्य है कि मेवात के मेव और मेवाती दो भिन्न समुदाय है, पर चू कि मेवाती (खानजादा) लोग शासक वर्ग के रहे है, अत. मुखिया होने के नाते मुस्लिम इतिहासकारो ने उनका ही उल्लेख किया है, जब कि सत्य यह होना चाहिए कि बहुसख्यक मेव (जो अपने आपको मीणे मानते हैं) ही इन कार्यो मे प्रधान रहे हैं।

मेवात मे जिस प्रकार मेव नामधारी मीणो का प्राबल्य रहा है उसी प्रकार मेरवाडे मे मेर नाम से जाने गए मेरणो की तूती बोलती थी। ११९७ ई मे जब कुतुबुद्दीन ऐबक अजमेर मे था, समीपवर्ती इलाको मे रहने वाले मेरो ने विद्रोह किया और उन्होने गुजरात के राजा भीम को इस उद्देश्य से निमत्रित किया कि वह मुसलमानो को

---

१ इलियट एण्ड डाउसन, जि ३, पृ १०३-५

२ इलियट एण्ड डाउसन, जि ४, पृ. ६०

मार भगाने मे उनकी सहायता करे। ऐबक ने गर्मी के दिनो मे प्रात ही आक्रमण कर दिया और भीम के आने के पहले ही युद्ध प्रारभ कर दिया।

पर मेर बहुत बहादुरी से लडे और दूसरे दिन प्रात. फिर लडाई छिडने तक भीम की सहायता आ पहुची और मुसलमानो को खदेड कर शहर मे घुसा दिया गया। ऐबक अन्दर शहर मे बद रहा। गजनी से कुमुक आने की खबर पाकर ही मेरो तथा भीम ने शहर का घेरा उठाया।[1]

मेवात मे भी बलबन द्वारा दमन किए जाने पर भी मेवो के हौसले बुलद थे। ई १४२३ मे फिरोज तुगलक के समय वे उसी प्रकार विद्रोही थे जैसे दो सौ वर्ष पहिले थे। जब फिरोज ग्वालियर के निकट अलफखा पर आक्रमण करने जा रहा था तो मेवो ने नमरतखा के साथ मिलकर अलफखा को लूट लिया और वे उसके सैनिको तथा घोडो को उठा लाए।[2] इससे प्रतीत होता है कि मेवो ने अपनी नीति मे थोडा परिवर्तन कर दिया था और वे दो पक्षो मे से एक का साथ देकर अपना काम बनाते थे। ई १४२४ मे उन्होने फिरोज के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। फिरोज ने मेवात पर आक्रमण किया और उनके गावो को नष्ट–भ्रष्ट किया। मेव लोग पहाडो मे जा छिपे। फिरोज उन्हे उनके मेवासो से बाहर न निकाल सका और न उन्हे जीत ही सका। १४२५ ई तथा १४३२ ई मे पुन॰ फिरोज को मेवात पर आक्रमण करना पडा था। इन आक्रमणो से यह प्रतीत होता है कि अधिकाश मेव या तो मुसलमान बन गए अथवा मुसलमान सरदारो की शरण मे चले

---

१ कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, जि ३, पृ ४४

२ इलियट एण्ड डाउसन, जि. ३, पृ १०८

गए, क्योंकि बार-बार के आक्रमणों से उनकी उपद्रवी वृत्ति पर काफी रोक लग गई थी।

फिरोज के बाद भी मेवात पूर्णतया शांत हो गया हो ऐसी बात नहीं है। दिल्ली के तख्त पर बैठने वाले हर बादशाह के लिए मेवात सदा सिरदर्द बना रहा था।

इस तथ्य की साक्षीस्वरूप बाबरनामे का वह उल्लेख है जिसमे बाबर कहता है कि मेवात का हसनखां सारी खुरपात की जड था। इसके पूर्वज दो सौ वर्षों से शासन करते आ रहे थे और सुलतानों की आंशिक अधीनता ही उन्होने स्वीकार की थी। सुलतान लोग मेवात को पूरी तरह कभी अधिकार मे नही कर पाए। जो कुछ जीत मिल पाई उसी मे वे सन्तुष्ट हुए।[१] बाबर ने भी मेवात को वश मे करने का विचार किया और ७ अप्रैल १५२७ ई. को वह विजयी बन कर अलवर मे प्रविष्ट हुआ।[२]

मुगल बादशाहो मे सर्वप्रसिद्ध अकबर ने मेवात को पूर्णतया दिल्ली मे मिला लिया और आगरे के सूबे मे तिजारा तथा अलवर की दो सरकारें बनाली गई। उसके दृढ शासन मे मेवो की शक्ति धीरे-धीरे घटती गई और मेवो-मेवातियो की एक भी जागीर अलवर तथा भरतपुर के क्षेत्र मे नही रही। सोहना तथा गुडगाव क्षेत्रो मे फिर भी थोडे बहुत गाव है।[3] अकबर ने हजारो मेवो को डाक विभाग मे हरकारो की जगह नियुक्त किया। अबुल फज्ल ने उन्हे 'मेवराह' कह कर सम्बोधित किया है।

---

१ आर्क्योलोजिकल सर्वे रिपोर्ट–ईस्टर्न राजपूताना–जि० १–२ पृ० १९–कनिंघम

२ कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, जि०४, पृ० १७

3 आ० स० रि० ई० रा० जि० १–२, पृ २२ कनिंघम

मार भगाने मे उनकी सहायता करे। ऐवक ने गर्मी के दिनो मे प्रात ही आक्रमण कर दिया और भीम के आने के पहले ही युद्ध प्रारभ कर दिया।

पर मेर बहुत बहादुरी से लडे और दूसरे दिन प्रात फिर लडाई छिडने तक भीम की सहायता आ पहुची और मुसलमानो को खदेड कर शहर मे घुसा दिया गया। ऐबक अन्दर शहर मे बद रहा। गजनी से कुमुक आने की खबर पाकर ही मेरो तथा भीम ने शहर का घेरा उठाया।[1]

मेवात मे भी बलबन द्वारा दमन किए जाने पर भी मेवो के हौसले बुलद थे। ई १४२३ मे फिरोज तुगलक के समय वे उसी प्रकार विद्रोही थे जैसे दो सौ वर्ष पहिले थे। जब फिरोज ग्वालियर के निकट अलफखा पर आक्रमण करने जा रहा था तो मेवो ने नमरतखा के साथ मिलकर अलफखा को लूट लिया और वे उसके सैनिको तथा घोडो को उठा लाए।[2] इससे प्रतीत होता है कि मेवो ने अपनी नीति मे थोडा परिवर्तन कर दिया था और वे दो पक्षो मे से एक का साथ देकर अपना काम बनाते थे। ई १४२४ मे उन्होने फिरोज के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। फिरोज ने मेवात पर आक्रमण किया और उनके गावो को नष्ट-भ्रष्ट किया। मेव लोग पहाडो मे जा छिपे। फिरोज उन्हे उनके मेवासो से बाहर न निकाल सका और न उन्हे जीत ही सका। १४२५ ई तथा १४३२ ई मे पुनः फिरोज को मेवात पर आक्रमण करना पडा था। इन आक्रमणो से यह प्रतीत होता है कि अधिकाश मेव या तो मुसलमान बन गए अथवा मुसलमान सरदारो की शरण मे चले

---

१. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, जि ३, पृ ४४

२ इलियट एण्ड डाउसन, जि. ३, पृ १०८

गए, क्योंकि बार-बार के आक्रमणो से उनकी उपद्रवी वृति पर काफी रोक लग गई थी।

फिरोज के बाद भी मेवात पूर्णतया शात हो गया हो ऐसी बात नही है। दिल्ली के तख्त पर बैठने वाले हर बादशाह के लिए मेवात सदा सिरदर्द बना रहा था।

इस तथ्य की साक्षीस्वरूप बाबरनामे का वह उल्लेख है जिसमे बाबर कहता है कि मेवात का हसनखा मेवाती खुरपात की जड था। इसके पूर्वज दो सौ वर्षों से शासन करते आ रहे थे और सुलतानो की आशिक अधीनता ही उन्होने स्वीकार की थी। सुलतान लोग मेवात को पूरी तरह कभी अधिकार मे नही कर पाए। जो कुछ जीत मिल पाई उसी से वे सन्तुष्ट हुए।[1] बाबर ने भी मेवात को वश मे करने का विचार किया और ७ अप्रैल १५२७ ई. को वह विजयी बन कर अलवर मे प्रविष्ट हुआ।[2]

मुगल बादशाहो मे सर्वप्रसिद्ध अकबर ने मेवात को पूर्णतया दिल्ली मे मिला लिया और आगरे के सूबे मे तिजारा तथा अलवर की दो सरकारें बनाली गई। उसके दृढ शासन मे मेवो की शक्ति धीरे-धीरे घटती गई और मेवो-मेवातियो की एक भी जागीर अलवर तथा भरतपुर के क्षेत्र मे नही रही। सोहना तथा गुडगाव क्षेत्रो मे फिर भी थोडे बहुत गाव है।[3] अकबर ने हजारो मेवो को डाक विभाग मे हरकारो की जगह नियुक्त किया। अबुल फज्ल ने उन्हे 'मेवराह' कह कर सबोधित किया है।

---

१ आर्क्योलोजिकल सर्वे रिपोर्ट-ईस्टर्न राजपूताना-जि० १-२ पृ० १९-कनिंघम

२ कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, जि०४, पृ० १७

३ आ० स० रि०, ई० रा० जि० १-२, पृ २२ कनिंघम

मेवात के इस उज्ज्वल इतिहास की ताईद करते हुए मोरलैण्ड नामक विद्वान ने लिखा है—"दिल्ली के आसपास का प्रदेश हवालिए देहली कहलाता था। इस प्रदेश के पूर्व मे जमुना नदी, उत्तर मे शिवालिक की पहाडिया या उसके निचले जगल तथा दक्षिण मे इसकी सीमा स्वतत्रताप्रिय मेवातियो की सीमा से मिलती थी। इनसे दिल्ली प्रदेश को हमेशा ही आशकाग्रस्त रहना पडता था। अत्यधिक युद्धात्मक दवाव पडने पर वे राजपूताना की पहाडियो की शरण ले लेते थे और अवसर पाते ही फिर से शेर हो जाते थे। शायद ही ऐसा मौका कभी आता था जव वे सम्पूर्णरूप से अधीनता स्वीकार करते थे।[1]

जहा-जहा विभिन्न नामधारी मीणा वशो के लोग बसे हुए हैं वहां-वहां उन्होने अपनी स्वतत्रता को वनाए रखने के लिए निरन्तर सघर्ष किया है। शिवाजी और प्रताप द्वारा अपनाए गए पहाडी युद्धो के तौर-तरीको के जन्मदाता, प्राचीन मत्स्यो के यशस्वी उत्तराधिकारी मीणो के गौरवपूर्ण आख्यानो को यदि भारतीय इतिहासकार सभाल कर रखने का प्रयत्न करते तो देश के इतिहास की श्रीवृद्धि होती, इसमे सदेह नही है। जिन मुसलमान आक्रमणकारियो और वादशाहो के सामने राजस्थान तथा अन्यान्य प्रदेशो के राव-राजा घुटने टकते गए उन्ही विजय के मद मे दुर्दान्त वने यवन शासको को मीणो ने एक-दो वार नही सैकड़ो बार और शताब्दियो तक नाको चने चवाये हैं। ऐसी वहादुर कौम को, जिनकी सघ-शक्ति की दुदुभि कभी समूचे देश मे गूजती थी, किस प्रकार राज्य-प्रणाली के हिमायतियो ने धीरे-धीरे नाचीज वना दिया, यह सारी कथा वडे दर्द से भरी हुई है और जिसे जानने के लिए साधारण पाठक के सामने कोई क्रमवद्ध वर्णन अभी प्रस्तुत नही हो पाया है।

१, मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था, पृ० ३६, मोरलैण्ड

अध्याय ६

मीणा-राजपूत सघर्ष

प्राग्वैदिक काल से मत्स्य' नामधारी मीणो की जो सत्ता हिन्दूकाल की समाप्ति तक उल्लेखनीय रूप से वनी आई थी उसका कोई स्पष्ट उल्लेख दसवी शताब्दी के बाद न मिलना एक आश्चर्यजनक बात है। प्रारम्भिक मुस्लिम इतिहासकारो ने शायद उन्हे पहाडी मुखियाओ के रूप मे परिगणित कर उनके परास्त किये जाने का वर्णन किया है। चूकि पूर्ववर्ती मुस्लिम आक्रामक लूटमार के प्रधान उद्देश्य से ही आए थे, अत इन पर्वतवासियो से उनका अधिक सवध नही होना समझ मे आता है। सघ–प्रणाली मे विश्वास रखने वाले मीणे सहअस्तित्व के सिद्धान्त को मानने वाले रहे होंगे। तभी तो भारत-भूमि पर पलने वाले अनेक सघो के बीच वे भी अपना अस्तित्व बनाए रहे। चूकि मीणे प्राय विकट और दुर्गम स्थानो मे रहने वाले थे और भौतिक समृद्धि मे भी उनकी कोई वहुत अधिक आस्था रही हो ऐसा प्रतीत नही होता, अत आक्रमणकारी दलो ने भी उनसे अधिक उलझना ठीक नही समझा होगा। मीणो ने भी आक्रामको की शक्ति का अनुमान लगाते हुए यदि अस्थायी रूप से उनके वशवर्ती होना स्वीकार कर लिया हो तो कोई अनहोनी बात नही थी। वे जानते थे कि इस प्रकार लूट के उद्देश्य से ही आने वालो से उनका कोई लम्बी अवधि तक सम्बन्ध नही रहने वाला है। इसी नीति का अनुसरण कर मीणो के छोटे छोटे राव-राजाओ ने, जो सभवत किसी न किसी प्रकार के सामाजिक और सुरक्षात्मक सघ मे आवद्ध रहे होंगे, समय पर आक्रामको अथवा दिग्विजयी सम्राटो की अतुल शक्तियो के

आत्मसमर्पण किया होगा, क्योकि उस स्थिति मे थोडी देर के लिए वशवर्ती होना ही श्रेयस्कर था।

पर जब शताब्दियो से अपनी बना कर रखी गई उनकी भूमि पर क्षत्रियो की चौहान, कछावा, गुहिलोत राठौड आदि शाखाओ ने अपनी आख गडाई और उसे हडप करने के कुचक्र रचे तो मीणो का भिन्न घातियो से सघर्ष होना स्वाभाविक था। ग्यारहवी शताब्दी के प्रारम्भ से ही शुरू हुआ यह मीणा-राजपूत सघर्ष प्राय सोलहवी शताब्दी तक निरन्तर चलता रहा। जब तक मुगल सत्ता भारत के सिंहासन पर दृढतापूर्वक आसीन नहीं हो गई तब तक मीणे परास्त होकर भी इन राजपूत शासको से जूझते रहे और उनका सुख-चैन से शासन करना एक दुष्कर कार्य बनाए रखा। राजस्थान के मीणो का यह छै सौ वर्षो का सघर्ष ही उनके इतिहास का सर्वाधिक ज्वलत पक्ष कहा जा सकता है। किस प्रकार धीरे-धीरे एक-एक करके मीणो की छोटी-छोटी सत्ताओ को समाप्त करने के लिए छल-कपट का सहारा लिया गया और किस प्रकार निर्दयतापूर्वक मीणा जाति को पौरुष-श्री हीन किया गया, यह एक मर्मान्तिक व्यथापूर्ण कथा है। खेद है कि इस सपूर्ण गाथा की साक्षीरूप कोई लिखित पुष्ट प्रमाण हमारे पास नही है। जो कुछ है वह किवदन्तियो, ख्यातो, वातो तथा वही भाटो का विवरण ही है। पर जनश्रुतिया भारत के इतिहास की बहुमूल्य धरोहर के रूप मे रखी जाकर मानी जानी चाहिए। यह आवश्यक नही है, और सभव भी नही कही जा सकती, कि सहस्रो वर्षो के भारतीय इतिहास की हर छोटी बडी घटना शिलालेखो, ताम्रपत्रो और ग्रथो की पकड मे आई हो और सुरक्षित भी रह पाई हो। ऐसी स्थिति मे मौखिक परम्परायें, अतिशयोक्तियो की परतो से रहित की जाने पर, हमारे तत्कालीन इतिहास को उत्तम साधन बननी चाहिए।

अनेक ऐसी कथाये और घटनायें सुनने मे आती हैं जिनके बारे मे इतिहास मौन है, पर जिनकी सत्यता मे सन्देह करना सत्य का गला घोटने के समान है। इसलिए लोकमुख पर चर्चा के विषय बने हुए ऐतिहासिक प्रवाद सग्रहणीय ही नही विचारणीय और अनुसधेय भी है।

मीणो के इतिहास के लिए भी हमे इन जनश्रुतियो पर ही अवलम्बित होना पडता है, क्योकि प्राय एक हजार वर्ष पूर्व का इस भूमि का इतिहास घने अधकार मे खोया हुआ है। दूसरे, यदि कुछ लिखित प्रमाण बचा भी होगा तो विजेता जाति ने उसे सदा के लिए समाप्त कर देना ही ठीक समझा होगा। फिर भी, जातीय गौरव और स्थानीय इतिहास मे रुचि रखने वाले बडे-बूढो के मुख से जो कुछ सुना जाता है, जागा-भाटो ने अपनी परपरागत वृत्ति के आधार रूप मे जो कुछ लिपिबद्ध कर रखा है तथा परिश्रमी और उत्साही विद्वान सग्राहको ने जो कुछ सकलित कर प्रकाशित किया है उसी के सहारे इस महान् और प्राचीनतम जाति के विलुप्त इतिहास की कडिया जोडने का स्वल्प प्रयास किया गया है। निश्चय ही यह प्रयास अनेक दोषो से पूर्ण है और आने वाले युगो मे जब भी पुष्ट प्रमाण मिल सकेंगे, इस सदर्भ की अनेक धारणाये सभवत मान्य नही रह जायेगी, पर वर्तमान स्थिति मे जो कुछ ज्ञात है उसे ही प्रस्तुत करना श्रेयस्कर होगा।

अधुनातन ज्ञात ऐतिहासिक वृत्तान्तो के आधार पर ढूढाड क्षेत्र (प्राचीन मत्स्य भूमि के अन्तर्गत एक भाग) मीणो का सर्वाधिक प्रसिद्ध और महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है। यहा मीणो के गणराज्यो और उनके सघो का अस्तित्व रहा है, जैसा कि मत्स्य सघ के पुराकालीन वर्णनो से भी स्पष्ट है। आठवी-नवी शताब्दी तक जिन मत्स्यो का राजनीतिक प्रभुत्व अखिल भारतीय स्तर पर स्वीकार किया गया था उनका एकाएक विस्मरित होकर राजनैतिक मच से हट जाना समझ मे

आने वाली जैसी बात नही है। हो सकता है कि उन्होने सार्वदेशिक महत्व के कोई कार्य सपन्न न किये हो पर उनकी स्थानीय सत्ता को चुनौती देने वाली कोई घटना तब तक नही सुनाई देती जब तक ग्वालियर की ओर से कछावा क्षत्रियो का प्रवेश यहा नही हुआ। इस ऐतिहासिक महत्व के प्रवेश का बडा नाटकीय और रोमाचक वर्णन कर्नल टॉड ने लोकमुख से सगहीत कर सुरक्षित किया है। ग्यारहवी शताब्दी के प्रारभ मे हुई इस घटना के समय मीणो के छोटे-छोटे गणराज्य यहा थे। खोह-गग, माची, आमेर, गेटोर, झोटवाडा आदि नामधारी ये राज्य बीस-तीस कोस के घेरे मे ही स्थित थे और आमेर की विकट पार्वतीय घाटी मे इनके सघ का मुख्यावास था। इन गणो का आस-पास रहना यही सिद्ध करता है कि ये आयुधजीवी सघ के सदस्य रहे होगे जिनकी वृत्ति का आधार लूट-मार अथवा सुरक्षा के बदले मे चौथ, चुगी आदि लेना ही था।

कछावो के ढूढाड-प्रवेश की घटना को लेकर विद्वानो मे थोडा मतभेद है। जयपुर राज्य की प्रशासनिक रिपोर्टों तथा राजकीय सरक्षण मे लिखी गई हस्तलिखित पोथियो और अन्यान्य फुटकर लेखो तथा ग्र थो मे राजा सोढदेव के पुत्र दूलहराय का विवाह के लिए दौसा आना सर्व-प्रथम घटना बताई गई है। ई सन् १९१६ मे छपी हुई एक राजकीय परिचय-पुस्तक मे यह लिखा है कि ई सन् ११२८ मे दूलहराय दौसा के राजा की पुत्री से विवाह करने के लिए आया। यहा काफी दिनो तक टिके रहने के बाद उसे ज्ञात हुआ कि उसके पीछे से उसकी पैतृक गद्दी पर उसका भानजा परमालदेव, जिसे वह अपनी अनुपस्थिति मे कार्य-भार सभालने के लिए छोड आया था, अधिकार कर बैठा है। इसलिए लौटकर उससे झगडा करने की बजाय उसने दौसा मे रह कर वही अधिकार करने का निश्चय किया। इस वर्णन मे यह नही बताया गया

है कि दौसा का वह राजा कौन था और उसे दूलहराय ने किस प्रकार परास्त किया।

स्व रावल नरेन्द्रसिंह ने लिखा है कि दूलहराय का विवाह मोरा (दौसा के पास) के चौहान राजा मालारसिंह (कुछ ख्यातो के अनुसार रालणसिंह) की राजकुमारी कुमकुमदेवी के साथ हुआ था। दूलहराय ने रालणसिंह को लिखा कि उसे रहने के लिए कोई स्थान बतायें। इस पर रालणसिंह ने उसे दौसा मे आकर उस पर अधिकार कर लेने का लिखा। आधी दौसा उस समय चौहानो की थी तथा आधी देवती के बडगूजरो की, जिनसे चौहानो की अनबन थी। दूलहराय ने यह संकेत पाकर दौसा पर आक्रमण किया और चौहानो की मदद से विजय प्राप्त की।[1]

सन् १९४१ मे प्रकाशित एक राजकीय प्रशासनिक रिपोर्ट मे दूलहराय के स्थान पर उसके पिता का सन् ९६६ मे ही दौसा मे बसना लिखा है जो सन् १००७ तक लगभग ४१ वर्ष राज्य करता रहा।[2]

एक और इतिहास मे दूलहराय का अजमेर की चौहान राजकुमारी से विवाह होना लिखा है और दूलहराय के ही द्वारा सन् ९५७ मे आमेर के किले की स्थापना किया जाना बताया है।[3] पर यह

---

१ ए ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ जयपुर—पृ १९-२०—रा व ठा नरेन्द्रसिंह (१९३९ सन्)

२ रिपोर्ट ऑन दी एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ दी जयपुर स्टेट फॉर सवत् १९९७ (सितम्बर १९४०—अगस्त १९४१) पृ. ११७—परिशिष्ट

३ दी हिन्द राजस्थान—पृ १९२

कथन विश्वसनीय नही कहा जा सकता क्योंकि दूसरे सभी इतिहासकार काकिल के द्वारा आमेर-विजय किया जाना बताते है।

कैम्ब्रिज हिस्ट्री मे लिखा है कि ग्वालियर के कछावा राजा वज्रदामन् से आठवी पीढी मे हुए तेजकरण (उपनाम दूलहराय) ने किसी अज्ञात कारणवश अपना पैतृक राज्य अपने पडिहार जातीय भानजे को थोडे दिनो के लिए सभला कर बाहर प्रस्थान किया। तेजकरण ने दौसा के वडगूजर राजा की लडकी से विवाह किया और वहा पर अपना अधिकार भी किया।[१] यह भी मान्यता है कि दूलहराय के श्वसुर के कोई सतान नही होने के कारण उसने अपना राज्य दूलहराय को सौप दिया।

डा० मथुरालाल शर्मा के अनुसार दूलहराय का विवाह लालसोट जिले के रल्हणसी नामक चौहान राजा की पुत्री से हुआ था और दौसा का किला उसे दहेज में मिला था। पर दौसा के इर्द-गिर्द की भूमि वडगूजर राजपूतो के हाथ मे थी। दूलहराय ने अपने ससुराल वालो की सहायता से वडगूजरो को दौसा से निकाल बाहर किया और वहा राजधानी वनाकर ढूढाड पर राज्य करने लगा।[२] दौसा-विजय की यह घटना किस वर्ष मे हुई यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता, पर कर्नल टॉड ने दूलहराय द्वारा ढूढाड राज्य की

---

१ कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया-जि० ३-पृ. ५३४

२ जर्नल आफ दी राजस्थान इन्स्टीट्यूट ऑफ ओरिएण्टल रिसर्च-जि० ३, सख्या २ (अप्रैल-जून १९६६)-पृ. ५१-जयपुर राज्य का इतिहास-डा० मथुरालाल

नीव सवत् १०२३ (सन् ९६६) मे डाला जाना लिखा है।[1] इस घटना के १३ वर्ष बाद सवत् १०३६ मे दूलहराय की मृत्यु हुई बताते हैं।[2]

दौसा-विजय के बाद दूलहराय ने खोहगग तथा माची के मीणा राज्यो पर अधिकार किया बताते हैं। जयपुर राज्य के इतिहास-कारो ने दूलहराय की मृत्यु ग्वालियर मे दक्षिणियो के साथ लडाई करते हुए होना लिखा है, पर कर्नल टॉड ने मीणो के साथ हुए युद्ध मे उसकी मृत्यु वताई है। खोह तथा माची के युद्धो के क्रम के विषय मे भी पृथक् धारणाये है। एक के अनुसार दौसा के बाद माची पर तथा माची के बाद खोह पर आक्रमण हुआ, जब कि दूसरी धारणा के अनुसार पहले खोह पर तथा बाद मे माची पर हुआ। इन सबका स्पष्टीकरण करने के लिए हमे पारपरिक इतिहास के सूत्र का सहारा लेकर चलना होगा, क्योकि सभी इतिहासकारो का मुख्य आधार परम्परागत विवरण ही रहा है। आलोच्य काल मे ढूढाड नामक इस प्राचीन मत्स्यभूमि मे मीणो के अनेक 'कुल' राज्य थे। खोह का चादा राज्य, माची का सीहरा राज्य, आमेर का सूसावत राज्य तथा गैटोर घाटी और झोटवाडा का नाढला राज्य—कुछ प्रमुख नाम है जो परम्परा मे वर्णित है। इन सभी राज्यो का आक्रामक राजपूतो से किस प्रकार सघर्ष हुआ और कैसे ये सभी एक—एक कर परास्त हुए, यह उल्लेख पृथक्-पृथक् राज्य के सदर्भ से करने का प्रयास यहा किया जा रहा है।

---

१ अेनाल्स एण्ड एण्टोक्विटीज ऑफ राजस्थान—जि० २ (१९५७) पृ० २८०—टॉड

२ जयपुर एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट (१९४१ ई०) पृ० ११८

खोह का चादा राज्य

वर्तमान जयपुर से दक्षिण दिशा मे लगभग पाच मील की दूरी पर पहाडो से सटी हुई 'खोह' नामक एक प्राचीन वस्ती है। परकोटो से घिरी हुई तथा महलो, मदिरो, वावडियो और पक्के राजमार्गों से युक्त यह नगरी ही कभी मीणो के चादा वश की राजधानी थी। विक्रमी ग्यारहवी शताब्दी के प्रारभ मे आलणसिह नामक चादा राजा यहा राज्य करते थे। चादो के इस राज्य को किस प्रकार कृतघ्नतापूर्वक कछावा दूलहराय ने हस्तगत किया इसका रोमाचक वर्णन कर्नल टॉड ने अपने सुप्रसिद्ध ग्र थ मे करते हुए लिखा है सोढसिह की मृत्यु के वाद, नरवर का राज्य उसके भाई द्वारा अधिकृत कर लिए जाने पर, सोढसिह की विधवा पत्नी अपने पुत्र दूलहराय को, जो शैशवावस्था मे ही था, वचा लेने के अभिप्राय से नरवर से भाग आई। वह किसी प्रकार खोह के पास पहुच गई और वहा भूख से व्याकुल हो जगली फलो से क्षुधा शात करने के लिए अपने पुत्र को पेड के नीचे सुला कर स्वय फल तोडने लगी। फल तोडते समय जव उसने सतर्क होकर अपने पुत्र की ओर दृष्टि डाली तो एक सर्प को उस पर फन फैलाये देखा। साक्षात् काल को देखकर वह चीख उठी, जिसे सुन कर एक राहगीर ब्राह्मण उधर आ निकला। उसने उसके पुत्र के उज्ज्वल भविष्य का शकुन समझते हुए उसे खोहगग मे जाकर राजा के यहा दासी वन कर रहने की राय दी। इस पर दूलहराय की मा अपने पुत्र सहित राजा आलणसिह (रालणसिह) की रानी के सम्मुख उपस्थित हुई और तत्काल सेवा मे रख ली गई। एक दिन रानी ने उसे भोजन वनाने के लिए कहा। उस दिन राजा ने भोजन को स्वादिष्ट पाकर भोजन वनाने वाली दासी को वुलाया। यह जान कर कि दासी वनकर रही हुई स्त्री राजघराने की है, राजा ने उसे अपनी वहिन के रूप मे स्वीकार किया और तदनतर वह राजसी ठाठ से अपने पुत्रसहित खोह मे रहने लगी। जव दूलहराय चौदह वर्ष की आयु का

हो गया तो राजा आलणसिंह ने उसे अपने आदमियो के साथ दिल्ली के तवर सम्राट् के दरबार मे जाकर खोह राज्य का कर जमा कराने के लिए भेजा। दूलहराय दिल्ली मे पाच वर्ष रहा और वहा रहते समय खोह के राज्य पर अधिकार करने की दुर्भावना उसके मन मे उत्पन्न हुई। चादा राज्य के ढाढी ने उसे राय दी कि उसे दीवाली के दिन पितरो का तर्पण करते समय नि शस्त्र हुए मीणो पर अचानक आकमण कर उनका नाश करना चाहिए और इस प्रकार अपनी योजना की पूर्ति करनी चाहिए। कहते है उसी परामर्श के अनुसार खोह के निकट तालाब की पाल पर तर्पण करते हुए मीणो का सहार किया गया और खोह पर अधिकार कर लिया गया। कृतघ्न ढाढी (डूम) को भी मार कर मृतको की लाशो पर सबसे ऊपर रख दिया गया। इस प्रकार सर्वप्रथम खोह मे कछावा राज्य की नीव सवत् १०२३ मे डाली गई।[1]

मुनि मगनसागर ने इस वृत्तान्त को और आगे ले जाते हुए लिखा है कि चादो के वश को इस प्रकार समाप्त कर दिए जाने पर राजा आलणसिंह की रानी ने सती होते समय डूम (भाट ?) के विश्वासघाती होने के कारण यह भविष्यवाणी की थी कि जो भी चादा वश का व्यक्ति इन डूमो को रखेगा उसके कुल का क्षय होगा। कहते है तब से कोई भी चादा मीणा डूमो को नही मानता। रानी ने यह भी कहा कि मीणे के बायें अ गूठे के खून से तिलक कराने वाले ही इस भूमि के राजा होंगे।[2] इसी के अनुसार आमेर (जयपुर) की गद्दी पर बैठने वाले कछावा राजाओ ने मीणे के अ गूठे के

---

१ ऐनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान, जि २, पृ २८१–२८२—टॉड।

२ मीनपुराण भूमिका, पृ –६६ —मगनसागर

रक्त से तिलक करवाने की प्रथा अपनाई, जो कालातर मे बद कर दी गई होगी।

'खोह' के प्राचीन शहर मे मीणा शासको के समय के बने पुराने राजसी महल तथा अन्यान्य इमारतें बताई जाती है। कछावो ने वहाँ राजधानी बनाने के बाद गत एक हजार वर्षों मे पर्याप्त इमारते बनाई होगी तथा अन्य नागरिको द्वारा भी इतनी लम्बी अवधि मे अनेक इमारतें बनाया जाना स्वाभाविक है, पर पहाडी की ढाल पर बनी हुई कुछ अत्यत प्राचीन इमारतें अवश्य ही मीणा शासको के समय मे रही होगी। शहर के बाहर एक सर्प की बडी मूर्ति आज भी पूजा का विषय बनी हुई है, जो सभवत यह सकेत करती है कि लोगो की आस्था दूलहराय के वृत्तान्त मे आए सर्प के प्रसग के प्रति है। वैसे नाग-पूजा से सबधित ऐसी मूर्तियाँ प्राय मिलती भी है। खोह के श्मसानो मे बनी बावडी तथा पास ही के एक कच्चे तालाब को दीपावली के दिन किए गए तर्पण की ऐतिहासिक स्थली के रूप मे मानने की धारणा मीणा समाज मे है। खोह मे किसी भी मीणे का घर नही होना तथा भूतपूर्व जयपुर राज्य मे किसी भी मीणे को खोह मे न घुसने देने की हिदायत से भी खोह के उपर्युक्त वृत्तात की सत्यता प्रकट होती है। खोह मे पहाडी पर बने मदिर मे चादो की देवी आज भी प्रतिष्ठापित है और चादा वश के सभी स्त्री-पुरुष आज भी परकोटे के अदर दरवाजे से सटे हुए देवी के स्थान पर गठजोडे की जात तथा जडूले आदि के लिए आते है। खोह के आसपास चादा मीणो के कई गाव आज भी हैं। हाल ही मे खोह मे हुए एक विशाल यज्ञ मे चादा-वशी श्री रामनाथ मीणे को ही मुख्य यजमान बनाया जाना भी यह प्रमाणित करता है कि लोक-विश्वास के अनुसार चादा गोत्र के मीणे ही कभी खोह मे राज्य करते थे तथा इन्ही से ही कछावा राजपूतों ने सत्ता छीनी होगी।

खोह स्थित प्राचीन महलों के दो
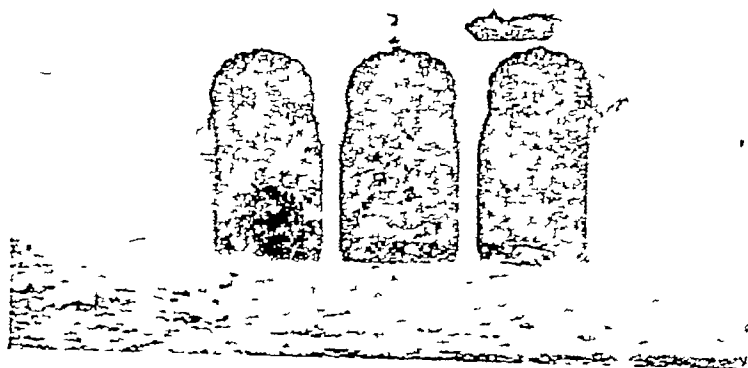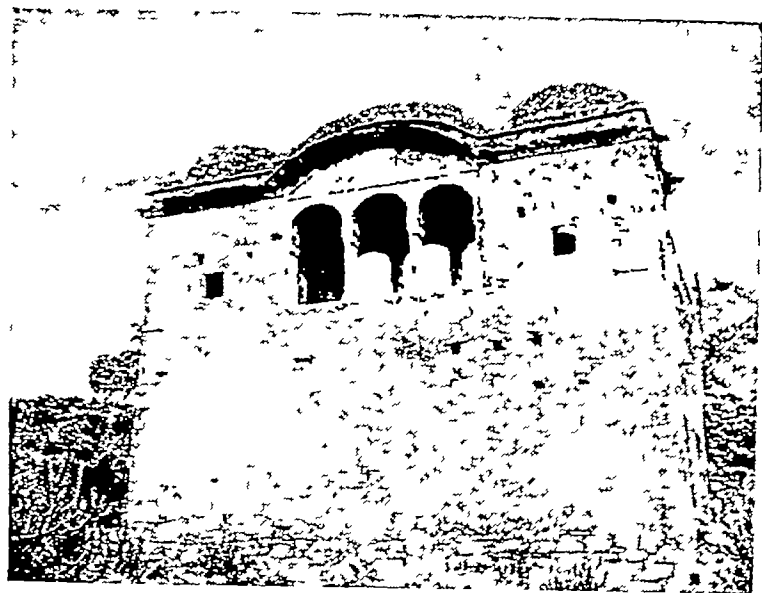
खोह मे टेकडी पर बना प्राचीन नक्कारखाना

खोह के मीणाकालीन महलो के खण्डहर

मांची का सीहरा राज्य

कर्नल टॉड ने लिखा है कि खोहगग पर अधिकार कर लेने के बाद दूलहराय ने दौसा के बडगूजर राजा की कन्या से विवाह करने का प्रस्ताव भिजवाया। पर बडगूजर राजा ने कहा कि आप (कछावा) राम के पुत्र कुश के वशज हैं और हम कुश के भाई लव के वशज हैं तथा वैवाहिक सबधो के लिए धर्मशास्त्र द्वारा निर्धारित जितनी पीढियो का अन्तर होना चाहिए वह अभी नही हुआ है, अत यह सम्बन्ध सभव नही है। पर बाद मे पीढियो का वाछित अन्तर पाया जाने पर बडगूजर राजा ने अपनी कन्या का विवाह दूलहराय से कर दिया और उसके कोई पुत्र नहीं होने के कारण उसने राज काज भी दूलहराय को ही सौंप दिया। रावल नरेन्द्रसिंह ने दौसा-विजय की सवत् ११२५ लिखी है, जो अन्य उल्लेखो से नहीं टकराती।[1]

इस प्रकार दौसा पर आधिपत्य जमा कर दूलहराय ने माची के सीहरा राज्य को हडपने की योजना बनाई जिसमे वह सफल हुआ। खोह की तुलना मे माची को अधिक उपयुक्त समझ कर उसने अपनी राजधानी 'माची' (माच) मे स्थापित की और उसका नाम 'रामगढ' रखा।[2]

माची मे उस समय सीहरा वश का मीणा राजा राव नाथू सीहरा राज्य करता था। उसका पुत्र राव मेदा अत्यन्त पराक्रमी था। उसके युद्ध-शौर्य और उसकी दानवीरता की अनेक गाथायें मीणा-समाज के विरुद-वाचको के मुख से आज भी सुनने को मिलती हैं।

---

१ ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ जयपुर-पृ० २०—रावल नरेन्द्रसिंह

२ अैनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान-जि० २, पृष्ठ २८३-टॉड

राव मेदा की माता 'वूज' के मेवासी 'टावा' नामक 'स्योगुरा' मीरा की पुत्री थी। उसका सवध राव वादा (?) के भाई रणमल के पुत्र दूदा के साथ हुआ था। गौना करके लौटते समय किसी वात पर तकरार हो जाने पर 'स्योगुरा' को दूदा ने छोड दिया और वह अपने पीहर आ रही। वाद मे माची के राव नाथू से किसी प्रसग मे भेंट होने पर वह मीणो की सामाजिक रीति के अनुसार जलभरे दो कलश लेकर माची के महलो पर जा खडी हुई और राव नाथू ने उसे रानी बना कर रख लिया। उसकी कोख से राव मेदा पैदा हुआ, जो भाइयो मे सवसे छोटा होने पर भी वडा पराक्रमी था। उसने जारूडा नामक अलग स्थान की नीव डाली और वही जा रहा। चाग (चादसेन ?) के मेवासी हडमल चीता को राव मेदा ने परास्त किया। चीता राव नाथू सहित अनेक छोटे-छोटे भूमिपतियो से चौथ वसूल करता था। इसी राव मेदा ने अपनी वहिन शशिवदनी की छाती पर पलग का पाया रख कर सोने वाले रावभीवा (देला का पुत्र) ध्यावरणा (गोत्र) को मार कर वहिन को अत्याचार से मुक्त किया। कवियो व याचको का सम्मान करने तथा उन्हे भरपूर दान देने की अनेक कथायें भी मेदा के विषय मे कही जाती है। यह मीणा जाति का आदर्श वीर नायक रहा है जिसके गीत एक हजार वर्ष बीत जाने पर आज भी गाये जाते है।

यद्यपि राजकीय सरक्षण मे लिखे गए सबधित इतिहास-ग्रथो मे दूलहराय द्वारा माची पर अधिकार किए जाने और उसकी मृत्यु ग्वालियर मे किसी युद्ध मे होने का उल्लेख ही किया गया है, पर टॉड आदि इतिहासकारो तथा मीणो के बहीभाटो की यह दृढ मान्यता है कि दूलहराय माची के पास मीणो से युद्ध करते हुए मारा गया था। राव मेदा जैसे पराक्रमी वीर के नायकत्व मे लडने वाले मीणा सैनिको के शौर्य को देखते हुए दूलहराय का उनसे लड कर मारा जाना
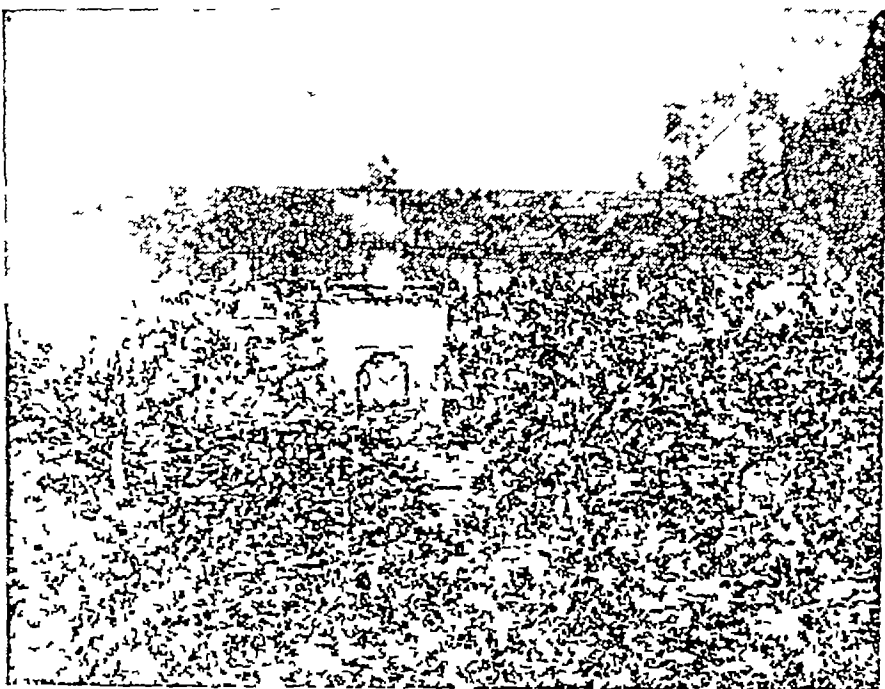
माची (जमवा रामगढ) के दुर्ग के भीतरी भाग का एक दृश्य
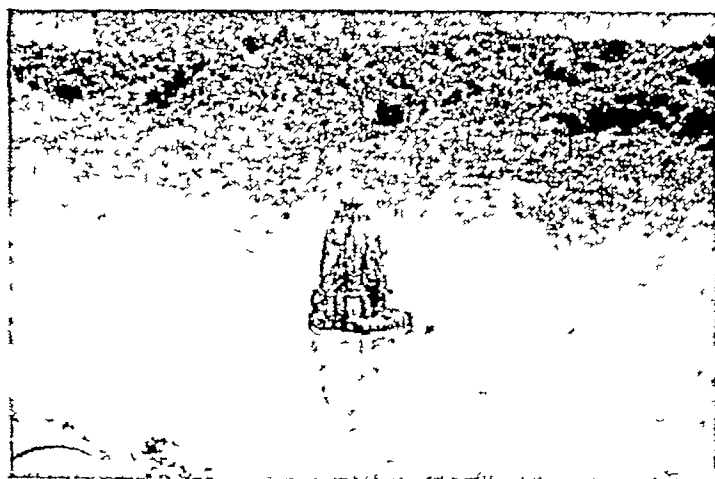
सीहरा राजाओ द्वारा निर्मित एक प्राचीन शिव मदिर जो
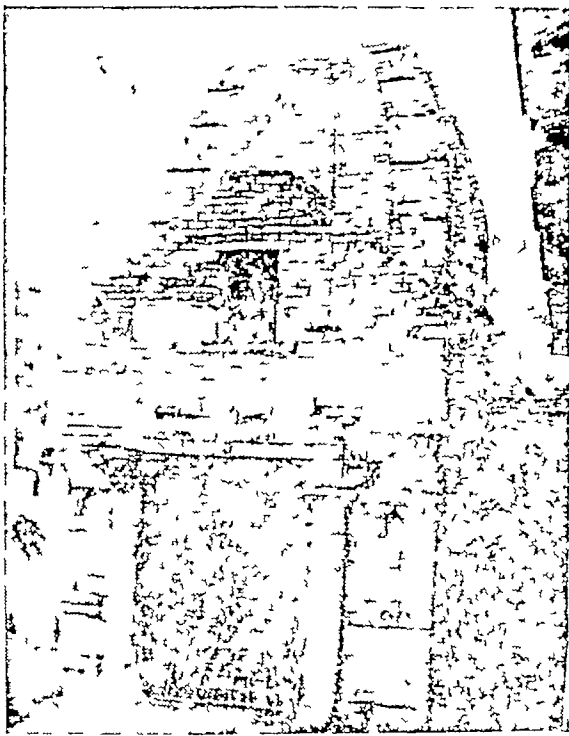
शशिवदनी सती का स्मारक (राणीजी का खोहा)
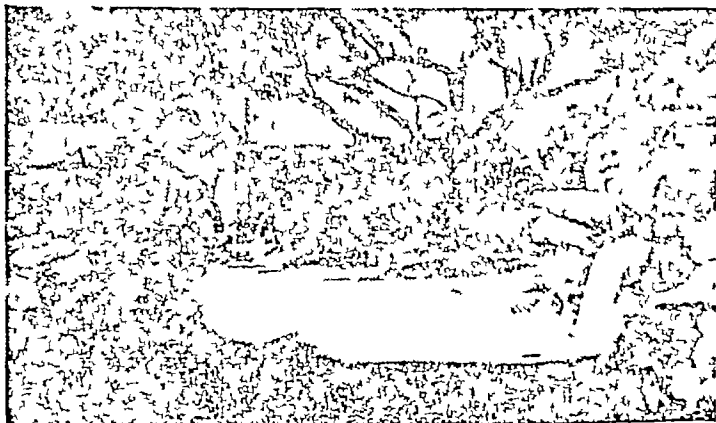
ध्यावण माता का मन्दिर (ध्यावण)

कोई अनहोनी बात नही होनी चाहिए। दूलहराय का एक बार परास्त होना तो सभी इतिहासकार एक मत से मानते ही है। जयपुर के कपडद्वारे के किसी सेवक द्वारा रखी गई एक ख्यात मे माची के इस युद्ध का वर्णन इस प्रकार किया गया है—

"पछै माची मे मीणा को अमल छो। सो माची पै दूलहरायजी चढ्या। जदि मीणा खबरि पाये। राठ कूडला ओर सब सिमटि आए। माची सू चढ्या। मो दूल्हरायजो के वा मीणा के माचि सू कोस तीन अगाऊ नाका मे झगडो हुयो सो मीणा को लोग तो मार्‌यो नही। अर दूलहरायजी घायल होय फोज सुधा खेत पड्या। जदि मीणा के फते का ढोल बाज्या। अर माचि मे आय मतवाळ करी। पाछै अरध रात्रि के समै देवी बुढवाय आई अर दूलहराय ने कही तू अठ। जदि दूलहरायजी खडा होय अरज करी। आप कुण छो। जदि देवी बोली—मै थारी देवी बुढवाय छू। जदि राजा अस्तुति करी। जदि देवी प्रसन्न होये वरदान दीनो। थारी रण मे विजै होसी। अठी की वसुधा म्हे तोनैं दीनी। अब ताई थे देवी बुढवाय कर पूजै छा। आज सू देवी जमवाय कर पूजो। अर ई नाका मे म्हारो मन्दिर बणवावो। थारो अठै राज होसी।"

दूलहराय का इस प्रकार देवी की मदद से पुन मीणो पर आक्रमण करने के लिए सनद्ध होना यह सिद्ध करता है कि दूलहराय को मीणो से परास्त होना पडा था। प्रस्तुत ख्यात के अनुसार देवी से वर प्राप्त कर दूलहराय ने माची पर आक्रमण किया और मीणे यह खबर पाकर आपस मे कटार खाकर मर गए तथा बचे सो काट डाले गए। इस प्रकार दूलहराय ने माची पर आधिपत्य जमा लिया। ख्यातकार ने आगे लिखते हुए कहा है कि "दूलहराय ने माची पर

अधिकार कर देवती के बडगूजरो पर आक्रमण कर उन्हे दबाया[१] और उसके बाद क्रमश खोह के चादा राजा, गेटोर घाटी तथा झोटवाडा के झोटा मीणा (राजा) को मार कर उन स्थानो पर अधिकार कर लिया। माची छोड कर वह खोह मे आ गया और वही राजसी महल बनाकर रहने लगा। दूलहराय का पिता सोढदेव सवत् १०६३ मे ४० वर्ष राज्य करके मृत्यु को प्राप्त हुआ और दूलहराय स्वय ग्वालियर मे दक्षिणियो से झगडा करते हुए काम आया।"

ऐसी ही किसी ख्यात के आधार पर शायद डा० मथुरालाल शर्मा ने यह भी लिख दिया है कि दूलहराय ने माची के बाद खोह, गेटोर और झोटवाडा को जीता। दूलहराय की मृत्यु के विषय मे डा० शर्मा मौन हैं। पर उन्होने दूलहराय के पुत्र काकिल द्वारा 'नादला' मीणा को हराये जाने का उल्लेख किया है[२] जब कि 'नादला' वश के मीणा ही गेटोर घाटी तथा झोटवाडा के शासक थे। यदि

---

१ इससे यह सिद्ध है कि कछावो की मैत्री चौहानो से तथा उनका वैमनस्य बडगूजरो से था। राजोरगढ, माचेडी और देवती तथा दौसा के बडगूजर बहुत समय से इस भूमि मे मीणो के साथ रहते आ रहे थे अत. उनका मीणो से मैत्रीभाव सभव है। पर चौहान अपेक्षाकृत नए होने के कारण मीणों के शत्रु रहे होंगे। इस दृष्टि से दूलहराय का विवाह दौसा के बडगूजर राजा की कन्या से न होकर मोरा के चौहान राजा सालारसिंह की कन्या से होना ही ठीक है।

२. जर्नल ऑफ दी राजस्थान इन्स्टीट्यूट ऑफ ओरिएन्टल रिसर्च, जि० ३, सख्या २, पृ०५ २

सीहरा राजाओ के समय की एक
प्राचीन इमारत (जमवा रामगढ)

जमवा रामगढ स्थित जमवा माता के नए मन्दिर के समीप
मीणाकालीन प्राचीन मन्दिर
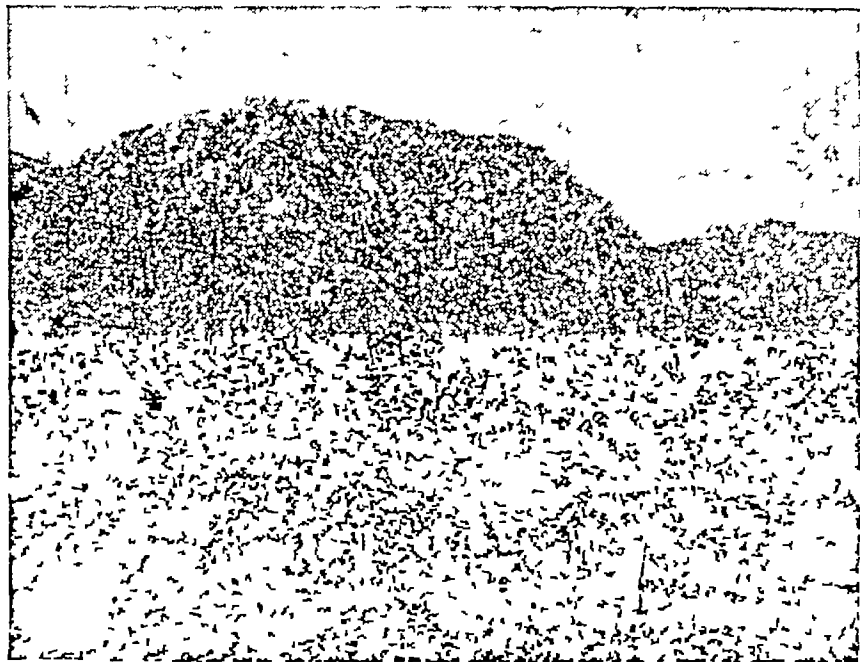
ऊपर—
सीहरो की कुल देवी दात माता का मदिर जो पहाडी की गोद मे सफेद चिन्ह सा दिखाई दे रहा है।
(जमवा रामगढ)
नीचे—
प्राचीन आमेर का एक देव-मन्दिर

दूलहराय ने ही उक्त दोनो स्थानो को जीत लिया था तो पुन 'नादलो' का कौन सा राज्य बाकी रह गया था जिसे काकिल को जीतना पडा। दूलहराय द्वारा गेटोर घाटी तथा झोटवाडा को जीतना इसलिए भी असभव लगता है कि ये दोनो आमेर के राज्य से बिलकुल सटे हुए थे और केवल एक पहाडी ही दोनो की सीमा थी। खोह से निकलते हुए पुरान घाट के नाके पर बना आमागढ का किला भी शायद उस समय गेटोर घाटी अथवा आमेर के मीणा राव के अधीन रहा होगा, जिसे पार कर आना कोई खेल नही था। इसके अतिरिक्त एक आम धारणा के अनुसार दूलहराय का मीणो के साथ हुए युद्ध मे मारा जाना भी यह सिद्ध करता है कि वह गेटोर घाटी तथा झोटवाडा को वशीभूत नही कर सका था।

कर्नल टॉड के अनुसार अजमेर के चौहान राजा की कन्या 'मारुणी' के साथ विवाह करके आते समय ग्यारह हजार मीणो ने दूलहराय को घेर लिया और वह युद्ध मे काम आया। उसी विधवा रानी के गर्भ से काकिल का जन्म हुआ बताते हैं।[1]

दूलहराय से सबधित इन सारी घटनाओ का क्रम हम इस प्रकार रखना चाहेगे। सर्वप्रथम दूलहराय अथवा उसके किसी अभिभावक ने खोह के मीणा राजा का विश्वास प्राप्त कर उसका सहारा लिया। खोह के राज्य को छलपूर्वक अधिकृत कर उसने दौसा के पास स्थित मोरा के चौहान राजा की कन्या से विवाह किया। इस विषय मे यह ध्यान देने योग्य है कि ग्वालियर से निष्कासित हुए दूलहराय को

---

१ अँनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान, जि २, पृ० २८२–टॉड

दौसा अथवा मोरा के राजकुल की कन्या नहीं मिल पाती, क्योंकि भूमि-हीन राजपूत को किसी राज-परिवार की कन्या बिना किसी कारण मे नहीं दी जा सकती थी।

श्री जगदीशसिंह ने लिखा है कि ढूंढाड के कछावो का पूर्वपुरुष सुमित्र करौली राज्य के नीदड गाव का जागीरदार था। सुमित्र के वंश मे क्रमश मधुब्रहन, कान्ह, देवानिक तथा ईशासिंह हुए। ईशासिंह को करौली मे ही वरेली गाव की जागीर मिली। यह जागीर बहुत छोटी थी अत ईशासिंह के पौत्र दूलहराय ने अपने पिता सोढदेव की आज्ञा लेकर दौसा की ओर प्रस्थान किया।[1]

इतनी मामूली-सी जागीर के नाकुछ हकदार बनने वाले दूलह-राय का ढूंढाड मे आकर मीणो के सहारे के बिना आगे बढ पाना समझ मे आने जैसी बात नही है।

खोह का राज्य मिलने पर अपने ससुर मोरा के चौहान राजा की मदद से दौसा के बडगूजरो को हरा कर उस पर अधिकार कर लेना ठीक लगता है। दौसा के बाद माची के सीहरा मीणो से लड कर उनसे माची[2] छीन लेना और फिर मीणो से लडते हुए ही काम आना—दूलहराय के जीवन का प्रधान इतिवृत्त है।

यह एक आश्चर्यजनक बात है कि मीणो के छोटे-छोटे राज्य एक-एक करके समाप्त किये जाते रहे और सघशक्ति के हामी मीणा लोग चुपचाप कैसे एक दूसरे का अन्त देखते रहे। शायद पहली बार ही

---

१ जयपुर राज्य का इतिहास—पृ ५—गहलोत

२ जयपुर से उत्तर-पूर्व मे प्राय १७ मील पर स्थित जमवारामगढ कस्बे का प्राचीन नाम।

राव मेदा के नेतृत्व मे राठ-कूडला तक के मोणे (ग्यारह हजार की सख्या मे) दूलहराय पर चढ कर आये और उसे परास्त कर मार डाला। रावल नरेन्द्रसिंह ने इस युद्ध मे दूलहराय द्वारा अत्यधिक नुकसान उठाने की ही बात मानी है।[1]

कर्नल टॉड ने अजमेर के चौहान राजा की कन्या से विवाह करने की जो बात लिखी है वह भी समझ मे नही आती। अजमेर के राजा के 'मारूणी' नामक कोई कन्या नही थी। 'ढोला' मारूणी' की कथा को सुप्रसिद्ध नायिका पूगल (बीकानेर) के परमार राजा की कन्या थी और वह ढोला (दूलहराय) भी नरवर के शासक वज्रदामा के पिता लक्ष्मण का पिता था।[2]

डा मथुरालाल शर्मा ने दूलहराय के बाद उसके पुत्र काकिल का सन् १०७० ई (सवत् ११२७) मे खोह की गद्दी पर बैठना लिखा है।[3]

इसका आशय यह लिया जा सकता है कि दूलहराय की मृत्यु भी इसी सवत मे (सवत् ११२७) मे हुई। भू पू जयपुर राज्य की सन् १६४१ की रिपोर्ट मे दूलहराय की मृत्यु तथा काकिल की राजगद्दी पर बैठने की तिथि सवत् १०६३ दी है। उक्त रिपोर्ट के अनुसार दूलहराय के पिता सोढदेव ने सवत १०२३ से सवत् १०६३ तक राज्य किया तथा स्वय दूलहराय ने सवत् १०६३ से १०९३ तक।[4]

---

१ ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ जयपुर—पृ २२—नरेन्द्रसिंह
२ ढोला-मारू रा दूहा—पृ ३०—सूर्यकरण पारीक आदि
३ जर्नल ऑफ दी राजस्थान इन्स्टीट्यूट ऑफ हिस्टोरिकल रिसर्च, जि. ३, सख्या २, पृ ५१ —डा शर्मा
४ रिपोर्ट ओन दी एड. ऑफ जय स्टेट, सन् १६४१ ई—पृ ११८ (परिशिष्ट)

दूलहराय द्वारा ढूढाड के राज्य-स्थापन की तिथि रावल नरेन्द्रसिंह ने सवत् ११२५ (सन् १०६८) दी है जिसे ओझाजी ने भी मान्यता दी बताते हैं।[२]

यद्यपि मीणो के वहीभाटो ने दूलहराय की विभिन्न घटनाओ की सवते ग्यारहवी शताब्दी की ही लिखी हैं पर शिलालेखो मे प्राप्त प्रमाणो को आधार मान कर हम दूलहराय का समय बारहवी विक्रमी सदी से पहले नही ले जा सकते। ग्वालियर के वज्रदामा का सवत् १०३४ का एक लेख मिला है। वज्रदामा के मगलराज का छोटा बेटा सुमित्र था। सुमित्र की चौथी पीढी मे ईशासिह हुआ। ईशासिह का पुत्र सोढसिह और सोढसिह का पुत्र दूलहराय था। वज्रदामा के बडे पौत्र कीर्तिवर्मा का सवत् १०७८ कई लेखो से प्रमाणित होता है। अत. उसके अनुज सुमित्र का भी यही सवत माना जा सकता है। सुमित्र के बाद पाचवीं पीढी गुजर जाने पर छठी पीढी मे दूलहराय हुआ। अत दूलहराय का समय किसी भी स्थिति मे बारहवी शताव्दी से पहले नही होना चाहिए।[३]

श्री जगदीशसिंह गहलोत ने दूलहराय का दौसा आने का समय सवत् ११६४ दिया है जिसका आधार भी वज्रदामा के १०३४ सवत् के लेख के बाद छ पीढी के, २५ वर्ष प्रति पीढी की दर से, १५० वर्षों की गणना ही है।[४]

पर सुमित्र से गिनी गई ये पीढिया भी विशेष प्रामाणिक नहीं मानी जा सकती क्योंकि इनका आधार किसी समकालीन लेख से नही

---

२. ग्रीफ हिस्ट्री ऑफ जयपुर—पृ. २०—नरेन्द्रसिंह
३. ढोला-मारू रा दूहा—पृ ३०—सूर्यकरण पारीक आदि
४. जयपुर राज्य का इतिहास—पृ ५८—गहलोत

लिया गया है । दूलहराय के बाद की कछावो की पीढियो मे भी कुछ अन्तर माना जाता है । कर्नल टॉड ने काकिल के पुत्र मैदल द्वारा आमेर, गेटोरघाटी तथा झोटवाडा के राज्य छीने जाने की बात लिखी है, जब कि इस नाम का कोई व्यक्ति कछावो की वशावली मे नही है । उसमे काकिल के पुत्रो के नाम—हणूदेव, इल्हादराय, देल्हण तथा रल्हण गिनाये गये हैं । टॉड ने हणूदेव (हूणदेव) के बाद कुतल का नाम गिनाया है और उसके बाद पज्जूण का । पर वशावली मे हणूदेव के पुत्र का नाम जानडदेव बताया है और कुतल को उसकी सातवीं पीढी मे हुआ बताया है । पज्जूण के बाद की वशावली से प्रायः सब सहमत हैं । यहा तक कि टॉड ने भी हणूदेव से सातवी पीढी मे हुए कुतल का उल्लेख यथास्थान किया है । इसका आशय है कि टॉड ने काकिल के एक और पुत्र कुतल की कल्पना की है जो शायद उसका भ्रम ही है । इतिहासकार गहलोत के एक उल्लेख से मेदुलराव (मैदल) की गुत्थी सुलझाई जा सकती है जिसमे उन्होने लिखा है कि काकिल का ही एक नाम मेदल या मेघल ख्यातो मे मिलता है । उन्होने किसी ख्यात का उल्लेख नही किया है ।[1]

गेटोरघाटी तथा झोटवाड़ा के नांढ़ला राज्य

ख्यातो के अनुसार गैटोरघाटी तथा झोटवाडा के दोनो राज्यो को स्वय दूलहराय ने ही समाप्त किया था । गेटोरघाटी जयपुर स्थित नाहरगढ की पहाडी के नीचे से प्रारम्भ होकर ब्रह्मपुरी, काला हनुमान, यज्ञस्थल जलमहल आदि स्थानो को समेटे हुए थी । झोटवाडा सभवतः वर्तमान 'जयपुर पश्चिम' से दक्षिण की ओर पहाड से सटा हुआ रहा होगा, क्योकि प्राचीन काल मे सुरक्षा के लिए पहाड का आश्रय

---

१ जयपुर राज्य का इतिहास-पृ ५६ —गहलोत

आवश्यक समझा जाता था और किसी भी राज्य के मुख्यावास के पास पहाड होते हुए भी उसका उपयोग नही किया जाना समझ मे नही आता। कर्नल टॉड ने इन राज्यो को जीतने का श्रेय काकिल के पुत्र मैदल को दिया है। मुनि मगनमागर के अनुसार काकिल ने ही दूलहराय की मृत्यु के बाद मीणो द्वारा छीन लिए गए माची के राज्य को पुन हस्तगत किया तथा चौहानो की सहायता से झोटवाडा पर विजय प्राप्त की।[1]

मुनिजी ने 'काळीखोह' नामक एक और मीणा राज्य तथा उसके राजा चूहडदेव की बात लिखते हुए कहा है कि उक्त मीणा राजा ने काकिल के पुत्र मैदुलराव (मैदल) को यह कहलाकर भेजा कि यदि तुम हमारे बायें पैर के अगूठे से तिलक करवाना स्वीकार करो तो हम तुम्हे अपना राज्य बिना लडे ही दे देंगे।[2] मुनिजी ने यह नही बतलाया है कि 'काळीखोह' नामक राज्य कहा था। कर्नल टॉड ने 'अजमेर से यमुना नदी तक फैली हुई पहाडी शृखला मे स्थित आबेर' को ही सम्भवत. काळीखोह माना है।[3] 'काळाखो' नामक एक गाव दौसा तहसील मे स्थित है, जहा मीणो की बस्ती बताई जाती है, पर कहा नही जा सकता कि मुनिजी का आशय उस 'काळाखो' से है या नही। जनश्रुति मे उक्त 'कालाखो' के किसी मीणा राज्य की बात नही मिलती है। 'काळीखोह' का शाब्दिक अर्थ पहाडो से घिरे हुए विकट स्थान से है।[4]

---

१. मीनपुराण भूमिका—पृ ७७ —मगनसागर
२ ,, पृ ७६ ,,
३ अनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान, जि २, पृ २८२–टॉड
४. काळी=विकट, खोह=पास-पास सटे पर्वतो के अन्दर दूर तक जाने के बाद मिलने वाला स्थान।
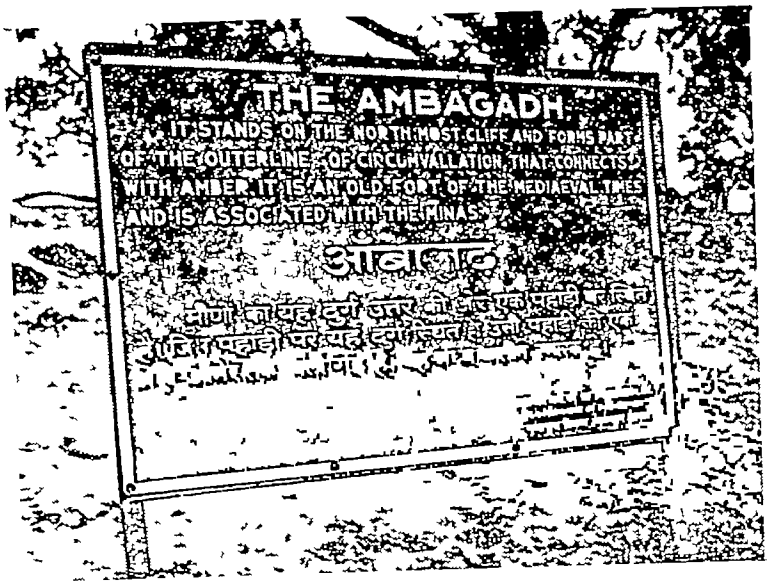
पुरातत्व विभाग द्वारा लगाया हुआ सूचना पट्ट

अम्बागढ़ दुर्ग के अन्दर बना जलाशय
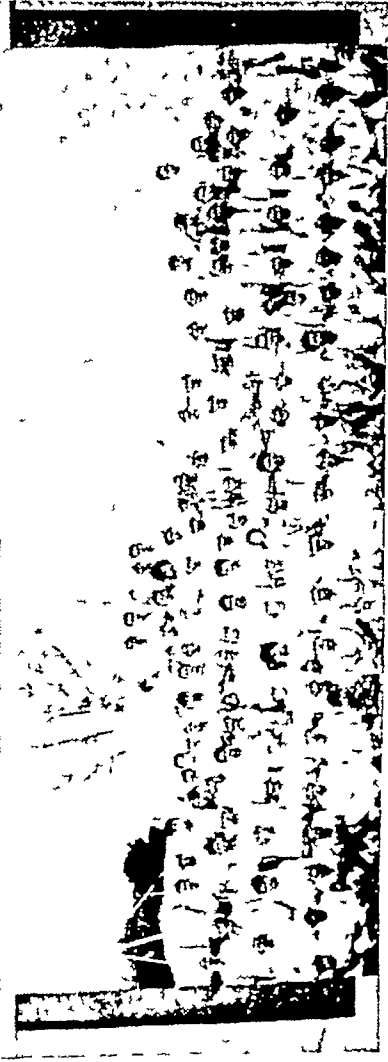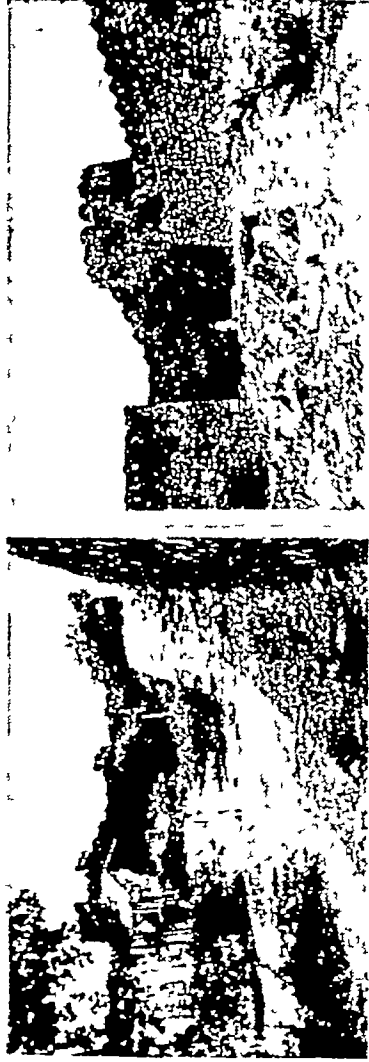
ऊपर—आमागढ दुर्ग के दो हिस्से

नीचे—दुर्ग के नीचे बसे जामडोली नामक गाव मे सन् १९६४ मे हुए मीणा–सम्मेलन के प्रतिनिधि

फिर भी मुनिजी की यह दलील बोधगम्य नही है कि कोई भी राजा अथवा साधारण भूमिपति भी ऐसी मूर्खतापूर्ण बातो के लिए अपनी भूमि देगा।

इस प्रसग मे हम यह भी कल्पना करना चाहेगे कि झोटवाडा तथा गेटोर घाटी के नाढला राज्यो का कोई सुदृढ दुर्ग अवश्य रहा होगा जिसके सहारे वे उन दिनो भूमि का स्वामित्व भोग पाते थे। उक्त राज्यो की अधिकृत भूमि मे दृष्टि दौडाने पर हमे नाहरगढ, हथरोई तथा आमागढ के किले दिखाई देते हैं।

आमागढ का किला निश्चय ही मीणो का रहा है और उसकी साक्षी पुरातत्व विभाग का सूचनापट्ट भी भरता है। यह किला निवास के लिए न होकर सैनिक दृष्टि से उपयोग के लिए बनाया गया मालूम होता है। किले के अन्दर केवल एक जलाशय और दो–तीन पक्के मकान हैं। पर सुरक्षात्मक परकोटे एक पर एक करके तीन बने हुए है। अत मीणो के सघ द्वारा सम्मिलित रूप से इसका उपयोग करने की बात ठीक लगती है। पुराने घाट के नाके पर सामरिक महत्व की दृष्टि से भी यह किला बडा उपादेय रहा होगा।

दूसरा किला अजमेर मार्ग पर 'हथरोई' नाम से है। यह केवल एक छोटी सी टेकरी पर बनी गढी है। इसके पास एक प्राचीन शिव-मदिर है जो जयपुर के बसने से पूर्व का बनाया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि हथरोई का किला मूल रूप मे मीणा राजाओ द्वारा निर्मित किया गया होगा।

आज जहा नाहरगढ का भव्य दुर्ग बना है उसके पीछे मीणो की एक प्राचीन वस्ती है जो अब ऊजड है। पर थोडे वर्ष पहिले तक यहा मीणे पर्याप्त सख्या में रहते थे। नाहरगढ के अदर का पुराना जलाशय

तथा पुराने मकानात भी आमागढ तथा कुंतलगढ की शैली पर बने हुए है। इनसे यह आभास होता है कि नाहरगढ का पिछला हिस्सा मूल रूप मे मीणा शासको का बनवाया हुआ रहा होगा। सुदर्शन (भगवान कृष्ण) के नाम पर, जिनका मदिर दुर्ग मे बताते है, इसका प्राचीन नाम भी सुर्दशनगढ बताया जाता है। सामने की ओर दीखने वाले नए सात महल कछावा शासक महाराजा माधोसिह ने अपनी सात पासवानो के लिए बनाए हैं और किसी नाहरसिह (राठोड) भोमिया के नाम पर इसका नामकरण नाहरगढ किया है। जब तक कछावो की राजधानी आमेर मे थी तब तक पहाडी की इस चोटी पर एक अतिरिक्त दुर्ग बनाने मे कोई तुक नही थी। सन् १७३४ मे जयसिह द्वितीय ने साढे तीन लाख रुपए व्यय करके इसे बनाया बताते हैं।[१] पर वह भी किसी पुरानी इमारत पर ही बना होगा। अत यह मान लेना भी युक्तिसगत ही होगा कि नाहरगढ का प्राचीन दुर्ग, जिसका नाम चाहे सुदर्शनगढ रहा हो अथवा और कुछ, मूलरूप मे मीणो का था। इतना ही नही हम तो यह भी मानना चाहते हैं कि जहा–जहा मीणो के थोक है और जहा पिछले हजार वर्षों से उनका रहना तथा किसी न किसी प्रकार स्वामित्व प्रगट करना प्रमाणित है, वहा–वहा उनके द्वारा बनाए गए छोटे–मोटे दुर्ग तथा अन्य सुरक्षास्थल अवश्य रहे होंगे, भले ही वे कितने ही साधारण क्यो न हो। इस दृष्टि से आमेर तथा इसके आसपास के दुर्गों की बनावट आदि की परीक्षा की जानी चाहिए और इस अनुमान की सत्यता की भी। कुन्तलगढ का पुराना किला तथा जयगढ के भीतरी भाग भी जनश्रुति के अनुसार मीणो द्वारा बनवाये गए बताए जाते हैं। जमवारामगढ का किला भी जो कछावा मानसिह प्रथम द्वारा १६६६ मे बनाया गया बताया जाता है, मूलरूप मे मीणो का ही था।

---

१ जयपुर राज्य का इतिहास—पृ. ४०—गहलोत

वहा राव मेदा के प्राचीन महलो को आज भी मीणा समाज के लोग चाव से देखने जाते हैं। रामगढ के बधे के पास दसवीं शताब्दी के कई पत्थर के स्तम्भ भी मिले है।[1]

आमेर का सूसावत राज्य

कर्नल टॉड के अनुसार काकिल के पुत्र मैदल ने सूसावत राव 'भत्तो' से आमेर छीना। (जि २ पृ २८२–टॉड) कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया मे भी इसी तथ्य की पुष्टि की गई है जिसका आधार शायद यही हो। (जि ३, पृ ५३४) रावल नरेन्द्रसिंह ने आमेर-विजय का श्रेय काकिल को दिया है पर यह भी लिखा है कि आमेर के राज्य की दृढता पज्जूण तक हो पाई थी। (ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ जयपुर–पृ २५) कपडद्वारे की ख्यात मे लिखा है कि "सवत् १०९३ मे गद्दी पर बैठने के बाद राजा काकिल पर दबाव देकर मीणो ने जमीन दाब ली तथा जब बहुत अधिक दबाव पडने लगा तो काकिल ने मीणो पर चढाई की जिसमे वह घायल होकर मूर्छित हो गया। उस समय कछावो की इष्ट देवी जमवाय माता ने धेनु का रूप धारण कर अमृतरूपी दूध की वर्षा की जिससे काकिल की मूर्छा हटी और उसने माता की स्तुति की। प्रसन्न होकर माता ने कहा कि तुम्हारे शत्रु मारे जायेंगे और तुम्हारी विजय होगी। तब तुम यहा 'आमेर' बसाना। यहा अम्बिकेश्वर महादेव जमीन मे गडे है जिन्हे निकलवा कर विधि-विधान से उनकी पूजा करना तथा उन्ही के नाम से 'आमेर' की स्थापना करना। तुम्हारा राज्य जम जाएगा। इस पर राजा ने कहा कि मेरे सभी साथी मारे गये तथा मै ही अकेला हू, सो क्या कर सकता हू। इस पर माता ने कहा कि तुम जिनका नाम लेकर पुकारोगे वे ही खडे हो जाएँगे। तब काकिल ने अपने उमरावो को

---

१. जयपुर राज्य का इतिहास—पृ ४५—गहलोत

नाम लेकर पुकारा और उनको साथ लेकर चढाई की जिसमे उसकी विजय हुई। आमेर के पहाडो मे सूसावतो के मेवासे थे सो उन्हे मारकर उन पर अधिकार किया।"

जयपुर राज्य की वशावली मे कांकिल का केवल दो वर्ष, दो महीने अठारह दिन राज्य कर सवत् १०६६ मे मर जाना लिखा है। (जयपुर एडमिनिस्ट्रेशन रिपोट सन् १६४१ पृ. ११८) इस थोडे से समय मे काकिल द्वारा कोई विशेष उपलब्धि करना सभव नही है। कपडद्वारे की ख्यात यह भी कहती है कि काकिल ने मैड-बैराठ-कूडला के यादवो पर आक्रमण किया और वहा अधिकार किया। उसने आमेर के पहाडो पर दुर्ग भी बनवाया। ऐसा प्रतीत होता है कि सदियो से बसे हुए मीणो से शत्रुता कर लेने पर दूलहराय को जिस प्रकार मौत के घाट उतार दिया गया, वही गति काकिल की भी हुई होगी। ख्यातो के अनुसार खोह की गद्दी पर १०२३ सवत् मे अधिकार करने के बाद १०६३ तक दूलहराय जीवित रहा। पर उसके पौरुष और उद्यमी स्वभाव को देखते हुए वह इतने वर्ष जीवित नही रहा होगा। उसने खोह के बाद दौसा, देवती, माची गैटोर, झोटवाडा आदि स्थानो पर आक्रमण किए बताते है और निश्चय ही इन्ही मे से एक मे उसको प्राणो से हाथ धोने पडे थे। ऐसी स्थिति मे उसकी मृत्यु अल्पायु मे ही होनी चाहिए। उसने जिस भयकर अग्नि से खेलना प्रारभ किया था उसी ने उसके पुत्र काकिल को, जिसने लोकश्रुति के अनुसार उसकी विधवा रानी के गर्भ से जन्म लेकर पन्द्रह-बीस वर्षों के बाद होश सभाला होगा, अपने प्रकोप से जला डाला। जनश्रुति के अनुसार काकिल के मरते ही 'आमेर' कछावो के हाथ से निकल चुकी थी।[1] काकिल के इस अत्यल्प राज्यकाल को

---

१ जयपुर राज्य का इतिहास—पृ ४२—गहलोत

देखते हुए कर्नल टॉड की यह धारणा भी अधिक उपयुक्त लगती है जिसके अनुसार काकिल के पुत्र (?) मैदलराव द्वारा आमेर जीती गई।

राज्य-सरक्षित इतिहास-लेखको का यह कहना किसी भी स्थिति मे मान्य नही हो सकता कि काकिल ने आमेर बसाई। डा० मथुरालाल शर्मा के इस कथन मे भी कोई सार नहीं होना चाहिए कि काकिल ने काकिलगढ तथा अम्बिकेश्वर महादेव का मदिर बनवाया। मीणो द्वारा बसाई हुई पुरानी आमेर तथा उसकी सुरक्षा के लिए सामरिक महत्व के नाको पर बनी हुई पुरानी गढियो के स्थानो को ध्यानपूर्वक देखने से यह भली भाति ज्ञात हो सकता है कि काकिल ने यदि आमेर पर अधिकार कर लिया था तो उसे तत्काल कुछ भी वनाने की आवश्यकता नही थी। कोई पुष्ट साक्षी भी नही है कि उसने कुछ बनवाया। आमेर के पुराने महल जो भारमल तथा मानसिह के पहले के बने हुए होंगे उन्हे कछावा राजदेव ने वहुत बाद मे बनवाया है। अन्य इमारते भी बाद के राजाओ की ही वनवाई हुई हैं। काकिल को यदि कोई श्रेय है तो वह यही कि उसने आमेर पर आक्रमण किया और शायद उसे जीत भी लिया जो थोडे दिनो बाद ही उसके वशजो के हाथ से निकल गया। सभवत इसी सबध के किसी युद्ध मे उसके प्राणान्त भी हुए।

मुनि मगनसागर ने आमेर-विजय का श्रेय टॉड की ही भाति मदुल (मैदल) राव को देते हुए लिखा है कि उसने वद पालकियो मे अपने सिपाही ले जाकर अम्बिकेश्वर महादेव के दर्शनो के मिस आमेर मे प्रवेश किया और अपने स्वागतार्थ आये भानोराव (राव भत्तो ?) का सिर काट लिया तथा इसी भगदड मे आमेर पर अधिकार कर लिया। मुनिजी ने भानोराव के पिता शूरसिह तथा उनकी पत्नी

बालाबाई का होना भी बताया है ।[1] अन्य इतिहासकारो के अनुसार यह बालाबाई बीकानेर के राव लूणकर्ण की लडकी थी तथा कछावा राजा पृथ्वीराज की विवाहिता थी ।[2] ये दोनो पति-पत्नी बडे धार्मिक बताये जाते हैं और मदिर मे दर्शन के समय भ्रमवश 'बाई' कहकर पुकार लेने के कारण इनका पति-पत्नी सबध विच्छिन्न हो गया और ये बहिन-भाई या पिता-पुत्री की तरह रहने लगे । मुनिजी ने अपने उल्लेखो मे किसी प्रामाणिक आधार या पुष्ट जनश्रुति का सकेत नहीं किया है, अत. उनकी लिखी हुई अधिकाश बातें विश्वसनीय नही कही जा सकती ।

ढूढाड के मीणा राज्यो के सघ के प्रधान स्थान 'आमेर' पर इस प्रकार अधिकार किए जाने तथा सघ के मुखिया राव भत्तो के परास्त हो जाने पर मीणो की शक्ति क्षीण होने लगी । उनके पैर उखडने लगे और उनमे से बहुत से दल दक्षिण की ओर चम्बल के किनारे के पहाडो तथा वनो मे चले गए ।

बारहवी शताब्दी ई के समय मे—११७३ सन् के लगभग—आमेर, खोहगग तथा दूसरे महत्वपूर्ण मीणा राज्यो के बहुसख्यक लोग अपने स्थानो से इस प्रकार खदेडे जाने पर, परमारो की क्षीण होती हुई शक्ति का लाभ उठा कर, मालवा के पठार तक जा पहुँचे ।[3]

काकिल की मृत्यु के बाद उसका पुत्र हणूदेव आमेर की गद्दी पर बैठा । उसने मीणो से सघर्ष जारी रखा । मुनि मगनसागर लिखते हैं कि उसने भाडेरिया गोत्र के मीणो से भाडारेज छीना तथा बैराठ के

---

१. मीनपुराण भूमिका—पृ० ८३-८४—मगनसागर
२. जयपुर राज्य का इतिहास—पृ० ६०—गहलोत
३. दी स्ट्रगल फोर एम्पायर—पृ ६६—आर. सी. मजूमदार

मत्स्य राजा के यहा अपनी कन्या का वैवाहिक सम्बन्ध स्थिर कर चौहानो की मदद से सारे बरातियो को धोखे से मार डाला। पर मीणो ने सगठित होकर पुन आक्रमण किया जिसमे हणूदेव (हूणदेव) खेत रहा।[1] मुनिजी का यह कथन विवादास्पद है, क्योकि उस समय वैराठ मे यादवो का अधिकार होने की बात भी कही जाती है। यद्यपि रावल नरेन्द्रसिह ने भाडारेज तथा राठकू डला दोनो मे ही मीणो के आधिपत्य की बात कही है।[2] कविराजा श्यामलदास ने भी भाडारेज के मीणो पर दूलहराय का अधिकार करना लिखा है।[3] भू पू जयपुर राज्य की रिपोर्ट मे हणूदेव की मृत्यु सवत् १११० मे लगभग चौदह वर्ष राज्य करने के उपरात हुई बताई गई है। दूलहराय के ढू ढाड-प्रवेश का सवत्, जो १०२३ माना गया है, को यदि वज्रदामा के सवत् १०३४ के शिलालेख से मेल खाने के लिए सवत् ११९४ मानलें तो जयपुर की राजकीय सवतो मे १७१ वर्षों का अन्तर पड जाता है। इस कालक्रम की सत्यता को टकराने का एक और अवसर हमे पज्जूण के समय मे मिलता है जो पृथ्वीराज चौहान के साथ तराई व महोबा के युद्धो मे मुहम्मद गोरी से लडा था। उसकी मृत्यु वि सवत् १२४९ के युद्ध मे ही हुई बताई जाती है।[4] दूलहराय से पज्जूण तक इस कछावा घराने की चार पीढिया हुई हैं। प्राय पीढियो का औसत राज्य-काल २५ वर्ष माना जाता है, पर मीणो के साथ निरतर युद्ध करने की आवश्यकता होने के कारण ये सभी राजा कम अवस्था मे ही मृत्यु को प्राप्त हुए होंगे। राजकीय पुरालेखो के अनुसार काकिल, हणु तथा जानड ने क्रमश २, १४ तथा १७ वर्ष के लगभग राज्य किया। सोढदेव और दूलहराय

---

1. मीनपुराण भूमिका—पृ ७८ —मगनसागर
2. ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ जयपुर—पृ २०–२२—नरेन्द्रसिह
3. वीरविनोद—पृ. १२६८ —श्यामलदास
4. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया-जि. ३, पृ-५३४

का राज्यकाल क्रमश ४० तथा ३० वर्ष बताया गया है। इस प्रकार १०२३ सवत् के करीब १०४ वर्ष बाद पज्जूण राजगद्दी पर बैठा। पर पज्जूण के ऐतिहासिक सवत् (१२४६) से दूलहराय के इतिहास सम्मत सवत् (११९४) का अतर प्राय. ५५ वर्ष होता है जिसमे दूलहराय के बाद की तीन पीढियो के लिए निर्धारित ३३-३४ वर्ष छोड देने पर दूलहराय के निजी सघर्ष काल के २१-२२ वर्ष बच रहते हैं, जो ठीक जान पडते हैं। इसलिए हम दूलहराय के ढूढाड-प्रवेश का सवत् अनुमानत ११९४ मान कर और उसका सघर्ष-काल २२ वर्ष निश्चित करके काकिल के राज्य का प्रारभ १२१६ सवत के आस-पास स्वीकार करते हैं। ऐसा करने से आगे की सवतें इतिहास से मेल खाती हुई बन जाती हैं और राजकीय रेकार्ड तथा इस सशोधित काल मे १२३ वर्ष का अतर चलने लगता है। खेद है कि इस गणना की परीक्षा करने का अवसर भी पृथ्वीराज कछावा मे पहिले नहीं मिलता क्योकि मुगलो से पहिले का इस घराने का इतिहास प्राय: अधकारपूर्ण ही है।

कविराजा श्यामलदास ने भी लिखा है कि पृथ्वीराज कछावा से पहिले के सवतो पर हमे एतबार नहीं है।[1]

हणूदेव के बाद उसका पुत्र जानड गद्दी पर बैठा। उसके भूडवाड के चौहानो के यहा विवाह के लिए जाते समय मीणो ने उसे नक्कारे-निशान आदि राजकीय चिन्ह छोड जाने के लिए कहा, जिस पर तनातनी हो गई और जानड ने उस समय का लाभ उठाकर मीणो को पूर्णतया परास्त कर दिया।[2]

कर्नल टॉड ने यह घटना जानड के स्थान पर कुतल के समय हुई बताई है, पर उन्होने हणू के पुत्र का नाम भूल से कुतल मान लिया-

१ वीरविनोद-पृ १२७०-७२-श्यामलदास
२ जयपुर राज्य का इतिहास-पृ. ६० —गहलोत

दीखता है, जिसका खुलासा उनके द्वारा बाद की पीढियो मे पुन कु तल को स्वीकार करने से हो जाता है।[१] यह घटना यह सकेत करती है कि कछावो ने मीणो को परास्त करने के स्थान पर उनसे किसी न किसी प्रकार का समझौता करके ही सत्ता हथियाई थी। मीणो के इस कथन मे भी सत्यता दिखाई देती है कि दूलहराय ने भानजा बन कर तथा बाद मे काकिल ने सुसावतो के गोद बैठ कर सत्ता हस्तगत की थी। मीणो द्वारा निशान-नक्कारे अपने सरक्षण मे रखना, राजकीय कोषागार पर अधिकार रखना, सभी गढो-किलो को नियत्रण मे रखना तथा राजकीय महलो, अतपुरो, शहर की तमाम चौकियो, नाको, दरवाजो तथा स्वय महाराजा के शरीर तक की रक्षा का सारा दायित्व मीणो को ही सौपा जाने के कारण भी इस मान्यता को बल मिलता है। कर्नल टॉड ने भी इस बात की ताईद करते हुए लिखा है कि 'मीणो को जो अधिकार तथा सुविधायें प्राप्त हैं वे यह प्रमाणित करते हैं कि नरवर के राजकुमार को ढू ढाड का राज्य विजय के उपलक्ष्य मे न मिलकर समझौते के रूप मे मिला है, जिससे गोद लेने की किंवदन्ती भी सही मालूम होती है, क्योकि काळीखोह के मीणो द्वारा अपने पैर के अ गूठे के रक्त से तिलक करने का रिवाज था जो मेवाड मे भीलो द्वारा किए जाने वाले तिलक की तरह था तथा अब नही है।'[२]

जानडदेव के वाद क्रमश पज्जूण, मलयसी, बीजलदेव, राजदेव, कोल्हण, कु तल, जूणसी, उदयकर्ण आदि १८ पीढिया राजा भारमल तक हुई। इस अर्से मे कछावा अपने राज्य का कोई विशेप विस्तार नही कर

---

१ ऐनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान जि २, पृ २८२-टॉड

२ ऐनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान जि २, पृ ३४७-टॉड

सके तथा जो कुछ लिया था उसे सगठित करने मे ही लगे रहे। अमल मे मुगलो के शासनकाल से पहिले तक, जब राजा भारमल ने अपनी लडकी का विवाह मुगल सम्राट अकबर से किया, आमेर की रियासत नगण्य ही थी। इस तथ्य की स्वीकारोक्ति कई इतिहासकारो ने की है।[1]

जूणसी के बाद के राजाओ में कुतल ने मीणो के साथ दुर्व्यवहार किया बताते हैं जिसकी अनेक किंवदतियो का उल्लेख मुनि मगनसागर ने भी किया है।[2] पर पज्जूण, मलयसी तथा अन्य अनेक राजाओ ने स्थिति को समझ कर मीणो के परामर्श से ही राज्य सचालन किया प्रतीत होता है।

पृथ्वीराज ने १२ कोटडिया स्थापित कर अपने पुत्रो को १२ जागीरें प्रदान की थी। इसका आशय सभवत. यह लिया जा सकता है कि परम्परागत 'मीणा बारह गाव' की तुलना मे उसने अपने वश के भी १२ प्रमुख सत्ताधारी स्थापित किए जिससे संभवतः यह आशा रखी गई हो कि वे मीणो की शक्ति का दमन करेंगे। पर इतिहास मे इस विषय के कोई प्रमाण नही मिलते हैं।

नहाण का गोमलाडू राज्य

राजा भारमल के समय मे मीणो के उपद्रव दबाए जाने तथा 'नहाण' के मीणा राजा को परास्त कर उसके नगर को नष्ट करने के उल्लेख से यह सिद्ध होता है कि तब तक भी मीणे ढूढाड मे प्रबल शक्ति के रूप मे थे। इनके मेवासे दुर्जेय समझे जाते थे। पर मुगलो

---

१. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया जि. ३, पृ. ५३४
अैनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान, जि २, पृ० २८३-टॉड

२. मीनपुराण भूमिका—पृ ६२—मगनसागर

आमेर की पहाडी पर मीणा शासको द्वारा निर्मित प्राचीन परकोटा

आमेर के पहाडो मे वसी प्राचीन मीणा वस्ती-मीम्यावास

नहान (नई का नाथ) के शिव मदिर का शिखर

नहान मे उत्कीर्ण शिला खण्ड जो गोमलाडू राजाओ के समय के हैं ।

की महायता पाकर भारमल ने उन्हे कुचलने का उपयुक्त अवसर देखा होगा। कहते हैं भारमल ने 'नहाण' (दौसा के पास बासखो नामक गाव के निकट) को नष्ट कर 'लवाण' नामक कस्बा बसाया था।[1] कर्नल टॉड ने मीणा समाज मे प्रचलित एक कहावत को उद्धृत करते हुए बताया है कि 'नहाण' मे मीणा राज्य था और उस नगर के बावन कोट तथा छप्पन दरवाजे थे —

'बावन कोट छपन दरवाजा, मीणा मर्द नहान का राजा'
'वूडो राज नहान को, जब भुस मे बाटो माग्यो'[2]

एक और उदाहरण देते हुए कर्नल टोड ने लिखा है कि राजा भारमल ने मेवासी (मीणो) से युद्ध किया था —

पल्हण-पज्जूण जीते महोबा कन्नौज लडि,
माण्डू मलैसी जीते, राड रोत्राहि की,
राजा भगवानदास जीते, मोवासी लडि,
राजा मानसिंह जीते, खोटन फोज दुबाहि।

जयपुर के कछावा राजाओ द्वारा जीते गए अनेक युद्धो की तुलना मे भगवानदास (?) —सभवत भारमल द्वारा मेवासियो से लडकर जीतना यह सकेत करता है कि ढू ढाड के मीणे-मेवासी आमेर के राजाओ के लिए एक समस्या ही बने हुए थे। बारहवी शताब्दी से लेकर मध्य सतरहवी शताब्दी तक के लगभग पाचसौ वर्षों तक मीणो ने कछावो को सुख-चैन की जिन्दगी नही गुजारने दी यह तथ्य प्रमाणित ही समझा जाना चाहिए।

---

१ जयपुर राज्य का इतिहास पृ ६३ —गहलोत
आमेर के राजा—पृ ३२-३३—देवीप्रसाद

२ अनाल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान, जि० २० पृ०-२८३—टॉड

राजा भारमल द्वारा केवल 'नहान' ही नहीं, अन्य कई मीणा मेवासियो से भी युद्ध करने का उल्लेख कपडद्वारे की ख्यात[1] मे इस प्रकार मिलता है—

'डयोढो' मारि 'ध्यावणो' मारयो, 'पापड' का पतळाया ।
जीत्यो राजा भारमल्ल, जद गढ 'जाटूडै' ढोल गुडाया ।।

एक अन्य लोक प्रचलित दोहे मे मीणो के इन सुदृढ स्थानो की तुलना अन्य प्रसिद्ध स्थानो से इस प्रकार की गई है—

जारूडो ज्यू जोधपुर, खोत्रो ज्यू अजमेर ।
'माच' तखत को बैठबो, सावू मागानेर ।।

डयोढ़ा, ध्यावणा, पापडदा, जारूडा आदि मीणा मेवासियो के प्रसिद्ध स्थान परपरा से चले आए हैं। माच और जारूडा सीहरा वश के प्रसिद्ध स्थान रहे ही हैं। उपर्युक्त दोहो मे उल्लिखित अन्य स्थान भी विभिन्न गोतो के मुख्यावास रहे है।

यह 'नहान' नामक स्थान अब 'नई' के नाम से जाना जाता है, जहा मीणो के इष्टदेव 'महादेव' के एक पुराने मदिर तथा एकाध कूए के अतिरिक्त कुछ भी अवशिष्ट नही है। 'नई के नाथ' नाम से विख्यात महादेव के वार्षिक मेले मे मीणे लोग वडे चाव से भाग लेते हैं। पुरातत्वज्ञ कार्लाइल ने 'नई' की सर्वेक्षण रिपोर्ट मे लिखा है कि 'दौसा' से दक्षिण-पश्चिम मे २० मील तथा 'लवाण' से उत्तर-पश्चिम मे ७ मील पर स्थित मीणो का यह सुदृढ स्थल ऊची पहाडी शृ खला के मध्य मे इस प्रकार स्थित है कि यह एकदम छिप सा गया

१. इसी ख्यात की एक प्रति जयपुर स्थित श्री महावीर भवन के अन्तर्गत आमेर शास्त्र भण्डार मे भी मिली है।

है तथा इसे विना किसी मार्गदर्शक के ढूढ निकालना अत्यधिक कठिन है। श्री कार्लाइल का विश्वास है कि यह स्थान ५०० वर्ष पहिले ही उजड गया था जहा तत्कालीन मीणा राजाओ के पुराने महलो के ध्वस्त खण्डहर मात्र विद्यमान है । श्री कार्लाइल ने इस स्थान की प्रशसा करते हुए लिखा है कि यह भारत भर मे उनके द्वारा देखे गए तीन विलक्षण स्थानो मे से एक है। वे लिखते है कि 'नई' के 'बावन कोट' से आशय मीणा राजा के ५२ सुरक्षित स्थलो से तथा छप्पन दरवाजो से मतलब छप्पन रास्तो से होगा जिनके द्वारा उसके क्षेत्र मे प्रवेश किया जा सके। पर हमारी मान्यता है कि बावन-छप्पन आदि सख्यायें लोकप्रचलित सख्यायें मात्र है और किवदन्ती मे इन्हे विना सोचे समझे रख दिया गया है। बावन कोट से आशय तो बावन बुर्जो मे ही है, क्योकि बावन बुर्जो वाले गढ बनाने की परपरा रही है। भटनेर (हनुमानगढ) के सुप्रसिद्ध गढ के आज भी बावन बुर्जे सुरक्षित है। किसी भी गढ के छप्पन दरवाजे होने की बात नही मानी जा सकती। यह केवल बावन के साथ मेल खाती हुई तुक मात्र होनी चाहिए। मुख्य गढ से बाहर निकलने के दरवाजे तथा बारियां तो चारो दिशाओ मे तथा अन्य मुख्य-मुख्य स्थानो मे ही होती थी। हा, गढ मे प्रवेश करने के लिए सेनाओ को रोकने की दृष्टि मे पहाडियो की चढाई पर हर मोड पर या अन्य दृष्टि से द्वार रखे जाते थे। ऐसे द्वार जिस गढ के अधिक से अधिक होते वही श्रेष्ठ तथा दुर्जय माना जाता। स्पष्ट है कि 'नई' के गढ के, यदि ऐसा कोई गढ रहा होगा तो, ऐसे द्वार नहीं थे क्योकि उनके चिन्ह भी वहा नहीं दिखाई देते।

कार्लाइल ने एक दोहा उद्धृत करते हुए यह कल्पना की है कि 'जगराम' नामक मीणा राजा था जो 'नई' का राज्य करता था—

ढूढाड के दो धणी, के जयसिंह के 'जगराम'।
वो तो मान महाबली, वो दूजो भगवान ॥

इस कल्पना की सत्यता की जाच करने के लिए हमारे पास कोई साधन नही है। हो सकता है 'जगराम' नामक कोई धार्मिक वृत्ति का प्रसिद्ध व्यक्ति मीणा समाज मे रहा हो। इन सब बातो से कार्लाइल इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि मीणे ढूढाड मे अत्यधिक शक्ति-सम्पन्न थे तथा एक बडे विस्तृत भूभाग पर इनका आधिपत्य था।[1]

'नहान' के 'गोमलाडू' वशीय राज्य की समाप्ति के अतिरिक्त कछावो द्वारा जीते गए कुछ और छोटे-छोटे राज्यो के नाम परपरागत श्रुति मे इस प्रकार गिनाए गए हैं—

१ देवन्द के काटाराव का राज्य काकिल के समय मे गया।

२ बंनाड के राव धूहड का राज्य पज्जूण कछावा के समय मे गया।

३. ब्यावरा का राज्य मलेसी कछावा के समय मे गया।

(इस राज्य को दबाने का एक और उल्लेख राजा भारमल के समय का भी प्राप्त है।)

ढूढाड के मीणे किस प्रकार कछावा राजपूतो से निरतर पाच-छै सौ वर्षों तक सघर्ष करते रहे, यह उपर्युक्त वर्णनो से स्पष्ट होगा। मीणो को दिए गए अनेक अधिकारो तथा राज्य के सचालन मे उन्हे प्राप्त महत्वपूर्ण पदो से भी मीणो के प्रभुत्व का आभास मिल सकता है। राजकीय कोष के रक्षक रहकर मीणो ने राजाओ को भी आखो पर पट्टी बाधकर अदर ले जाने तथा बाहर लाने की जो कथित परपरा निभाई है वह भी विचारणीय है। जयगढ, नाहरगढ आदि किलो

१, आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, जि० ६ (ईस्टर्न राजपूताना) पृ० १०९–१३—कार्लाइल

की सुरक्षा के साथ-साथ सभी महत्वपूर्ण स्थानो पर मीणो की नियुक्ति उनके वर्चस्व की परिचायक रही है। शायद इसी उद्देश्य से भू० पू० जयपुर राज्य मे 'बेडा मीणा बारा गाव' नाम से एक पृथक् विभाग था। इस विभाग का सबध उन बारह गावो के मीणो से था जिन्हे उनकी सेवाओ के उपलक्ष्य मे जयपुर राज्य से विभिन्न २४ गावो मे जमीने दी गई थी। सन् १६४१ मे इन जागीरदारो की सख्या ६१ थी जिनमे १५ जमादार तथा ४६ साधारण सेवक थे। इन्हे इस शर्त पर जमीनें दी गई थी कि हल पीछे (लगभग १२० बीघा का एक हल) एक आदमी राज्य-सेवा के लिए भेजा जाएगा। बढते-बढते जागीरदारो के भागीदार कई हजार होगए। ये लोग महलो तथा गढो मे चौकीदारी पर नियुक्त थे तथा अनुपस्थिति के लिए इन्हे जुर्माना देना होता जिसे 'तफावत' कहा जाता। ऐसी तफावत के (४४४५) रुपए सन् १६४१ मे मीणो मे बाकी बताए गए हैं।[१]

रणथम्भोर का 'टाट्टू' राज्य

सवाईमाधोपुर से ६ मील दूर रणथम्भोर का भारत प्रसिद्ध दुर्ग किसने बनवाया यह निश्चित नहीं है। इतिहासकारो ने इसे रण-थम्भनदेव नामक चौहान राजा का बनाया हुआ बताया है। पृथ्वीराज प्रथम का ११६० वि. का एक लेख यहा मिला है जिससे इसका उससे पूर्व बनाया जाना ज्ञात होता है। पर रणथम्भनदेव का तथाकथित राज्यकाल अधकार मे है।[२]

कविराजा श्यामलदास ने इसका तेरहवीं शताब्दी के मध्य मे किसी चौहान राजा द्वारा बनाया जाना लिखा है, जो शायद गलत है।[3]

---

१ जयपुर एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट १६४१ ई०

२ जयपुर राज्य का इतिहास-पृ -५०-गहलोत

३. वीरविनोद-पृ १२६४-श्यामलदास

मीणो की परम्परा के अनुसार यह किला 'टाट्ट' खाप के मीणो द्वारा बनाया गया था जिसकी साक्षी मे वे ये दोहे उद्धृत करते है—

राजा लूटै फौजा मोडै, नित उठ करै पौबारा ।
दो नगर टाट्टुआ का, किला रणतभवर गढ टट्टवारा ॥
टाट्ट ठाकर ठेठ का, आदू पीढी राज ।
पीपळदै हाथी दियो, मदभरतो गजराज ॥

मुनि मगनसागर ने टाट्ट राजा जुहारसिहजी की कन्या सारग-देव चौहान को विवाही लिखी है. पर इसका कोई प्रमाण नही दिया है । हम्मीररासो मे सोभनपुर के मीणा राजा के घर महिमाशाह तथा गभरू नामक सामतो का जन्म होना लिखा है जो बाद मे मुसलमान बन गए, तथा उसी महिमाशाह ने हम्मीर के यहा शरण ली थी—

यह हमीर नृप जैत के, अमर करण आचार ।
मीणा भारू बन्धु दोउ, भई नारि तिहि वार ॥[५]

हम्मीर की सेना मे सीहरा वश के मीणो के लडने का उल्लेख भी किया गया है । इन उल्लेखो से यह अनुमान लगाने के लिए विवश होना पडता है कि मीणो की इस भूमि मे बना यह दुर्ग भी मूल रूप से अन्य अनेक दुर्गों के समान ही मीणो का रहा होगा ।

मेवात के मीणा राज्य

मेवात के मेवो तथा मेवातियो का उल्लेख हमने पहिले किया है। पर वहा मेव तथा मीणे एक ही जाति के माने जाने की धारणा के बावजूद, वे पृथक्-पृथक रूप से आज भी रह रहे हैं। अत' मेवो के साथ ही मीणो के पृथक् सघर्ष की चर्चा करना भी उपयुक्त होगा । मेवात के

---

५. हम्मीररासो-छद ७७ (ना प्र सभा)-जोधराज

क्षेत्र मे दो स्पष्ट उल्लेख ऐसे प्राप्त है जिनमे मीणो द्वारा ऊपरी सत्ताओ से सघर्ष करने के प्रमाण मिलते हैं। पर ये उल्लेख मुसलमान शासको के प्रसग मे होने के कारण उसी अध्याय मे इनकी चर्चा की जाएगी।

हाडोती का मीणा राज्य

कोटा बूदी मे हाडा चौहानो का राज्य होने से पूर्व यह भूमि भीलो तथा मीणो के अधिकार मे थी—यह उल्लेख पहिले किया जा चुका है। ढूढाड मे कछावा राजपूतो तथा मेवात मे यादव, बडगूजर आदि जातियो द्वारा खदेडे जाने पर बहुसख्यक मीणो का दक्षिण की तरफ चम्बल के किनारो तथा और भी आगे मालवा के पठारो तक चले जाने का सकेत आर सी मजूमदार ने अपनी पुस्तक 'स्ट्रगल फौर एम्पायर' मे दिया है। इन्ही मे से एक दल बूदी की ओर गया और उसने वहा 'वादूघाटी' को अपने आवास के रूप मे चुना। यह घाटी पहाडियो से घिरी रहने के कारण आक्रामक राजपूतो से सुरक्षित थी। लगभग एक सौ वर्षो तक ये लोग निर्द्वन्द्व होकर यहा राज्य करते रहे।[1]

बूदी का ऊपाहरा राज्य

परम्परा के अनुसार बूदी मे राज्य करने वाले मीणे ऊपाहरा वश के थे। इस तथ्य की स्वीकारोक्ति हाडोती क्षेत्र के इतिहासकारो ने की है।[2] यह वश मीणो के सभी गोतो मे प्राचीनतम माना जाता है। ऐसी भी मान्यता है कि आमेर मे कभी इन्ही ऊपाहरो का राज्य

---

१ बूदी गजेटियर—सन् १९६४—पृ ३५

२ नैणसी की ख्यात—जि० १, पृ० १०६-९—अनु रामनारायण
वशभास्कर—जि० २, पृ० १६२७—सूर्यमल्ल
कोटा राज्य का इतिहास—जि० १, पृ० ५७—डॉ० मथुरालाल

था। यह ज्ञात नहीं कि ये कब बूंदी के क्षेत्र मे जा बसे, क्योंकि बारहवी शताब्दी मे तो आमेर मे सूसावत कुल के मीणो का आधिपत्य था ही।

चौहान देवसिंह ने, जो मैनाल प्रदेश मे बबावदा मे रहता था, अपनी एक लडकी का सबध मेवाड के महाराणा अरिसिंह से कर दिया और उसकी मदद से तेरहवीं शताब्दी के अत मे बूंदी के मीणा राव जैता को धोखे से मारकर बूंदी पर अधिकार कर लिया।[1]

मुहता नैणसी ने लिखा है कि हाडा देवा विपत्ति का मारा भैसरोडगढ से बूंदी मे जा रहा। कहते हैं एक ब्राह्मण, जिसकी लडकी मे वहा के मीणे विवाह करना चाहते थे, अपना दुःख सुनाने अपने यजमान देवा के पास भैसरोडगढ गया और उसकी सलाह से मीणो का विवाह–प्रस्ताव स्वीकार करके उनसे कहा कि मै आपकी बराबरी नही कर सकता इसलिए आपके सत्कार के लिए अपने यजमान हाडो को बुला लेता हू। मीणो ने यह बात स्वीकार कर ली। विवाह की खुशी मे मीणे मद पीकर सुध-बुध खो बैठे थे। अवसर पाकर देवा के साथियो ने काटो की छडे और मिट्टी की कुटिया (मडे) बनवाई और बारूद बिछवाकर ऊपर घास फैलादी। इसी स्थान पर मीणो का स्वागत कर उन्हे खूब शराब पिलाई और जब वे प्राय बेहोश हो गए तो कितनो को तो तलवार से काट डाला तथा शेष को आग लगाकर बारूद से जला डाला। जो गाव मे बच रहे थे उन्हे भी मार भगाया। इस प्रकार धोखे से देवा ने मीणो को समाप्त कर बूंदी पर अधिकार किया। जो मीणे बचकर भाग निकले वे 'बुंदेले मीणे' कहलाए।[2]

---

१. वीरविनोद—पृ० १०६—श्यामलदास

२. नैणसी की ख्यात– जि. १, पृ. १०५–अनु. रामनारायण

मुहता नैणसी ने आज से प्राय तीनसौ वर्ष पहिले इस घटना के जितने रूप सुने उन सभी को लिपिबद्ध किया है। उसने यह भी लिखा है कि देवा ने राणा की मदद से बूंदी पर अधिकार किया तथा चार मास तक पाचसौ सवार लेकर बचे हुए मीणो को भी मार डाला। ये लोग निर्बल थे और सदा मद मे मतवाले रहते थे।[1]

एक और किवदन्ती का जिक्र करते हुए नैणसी ने लिखा है कि हरराज डोड बूंदी के मीणो पर राज करता था और उनकी धरती मे बिगाड करता था। प्रतिवर्ष मालबन्दी के रुपए लेता और उनके गाव भी लूटता। हाडा देवा के पास एक घोडा था जिसे माडू का बादशाह लेना चाहता था पर देवा नही देना चाहता था। इसलिए वह भैसरोडगढ छोड कर बूंदी के मीणो के पास आ रहा। मीणो ने उसे हूडी (सूडी) नामक वेश्या के घर मे रहने को स्थान बताया। वेश्या से उस का प्रेम हो गया और उसने उसके उज्ज्वल भविष्य की बात समझ कर उसे कहा कि तुम एक दिन इस धरती के स्वामी बनोगे। एक दिन हथाई मे मीणो ने हरराज के तग करने की बात कही तो देवा ने कहा कि यदि वह हरराज से छुटकारा दिलादे तो उसे क्या दिया जाएगा। मीणो ने भूमि के कुल हासिल का आधा देने का वचन दिया। दीवाली के दिन हरराज आया तो मीणे सभी घरो मे जा छिपे पर देवा ने अपना घोडा आगे बढाया। हरराज यह देख कर लौट गया और देवा ने उसका पीछा किया। एक नाला पार करते समय हरराज का घोडा फस गया पर वह कूद कर पार निकल गया। यही हरराज तथा देवा की परस्पर बात हुई और हरराज ने फिर न आने का वचन दिया।

---

१ नैणसी की ख्यात–जि १, पृ. १०६–अनु रामनारायण

थोडे दिनो के बाद देवा ने हरराज से अपनी पुत्री का विवाह करने की घोपणा की। मीणो ने इस पर आपत्ति की तथा कहा कि लडकी का विवाह हम से करो। देवा ने हरराज के सगे सबधियो की सहायता से मीणो को बरात के बहाने बुलाकर धोखे से मार डाला और इस प्रकार बूदी पर अधिकार किया।[1]

देवा की बूदी–विजय की यह सवत् भी मतभेद का विषय रही है। एक विद्वान ने इसे सवत् १३९९ (सन् १३४२ ई०) माना है।[2] डा० मथुरालाल शर्मा ने इसे १२९८ सवत् (१२४१ ई०) माना है। जिमका आधार वशभास्कर का उल्लेख ही है।[3] 'हिद राजस्थान' के लेखक ने भी सभवत कर्नल टॉड की मान्यता के अनुसार ही सवत् १३९९ दे दी है। मेवाड के इतिहासकार श्री सोमाणी ने १२९८ वि० के उल्लेख को गलत बताया है पर सही सवत का उल्लेख नही किया है।[4] एक अन्य उल्लेख के अनुसार देवा के पडदादा विजयपाल का सवन् १३५४ का एक लेख बूदी के पास केदारनाथ महादेव के मदिर मे मिला है, अत देवा के राज्य का सवत् १३९४ के आस–पास ही पडना चाहिए।[5] कविराजा श्यामलदास ने राणा अरिसिह का सवत् १३८१ तथा १४०८ के बीच बताया है जब मुहम्मद तुगलक के चित्तोड–आक्रमण के समय महाराणा लक्ष्मणसिह तथा उनके पुत्र अरिसिह व अजयसिह जीवित थे।[6] पर गहलोत ने अरिसिह का

---

१. नैणसी की ख्यात–जि० १, पृ० १०७–अनु: रामनारायण
२ दी हिंद राजस्थान—पृ० ३०७
३. कोटा राज्य का इतिहास–जि० १, पृ० ५९—डॉ० मथुरालाल
वशभास्कर जि० २, पृ० १६२१–२६–२७—सूर्यमल्ल
४. महाराणा कुभा—पृ० २४—रामवल्लभ सोमाणी
५ बूदी का इतिहास—पृ० ४३—गहलोत
६ वीरविनोद–पृ० २९२–श्यामलदास

सवत् १३५४ मे ही मारा जाना लिखा है । स्पष्ट ही श्यामलदास का उल्लेख अधिक विश्वसनीय है। यदि अरिसिंह के साथ हाडा देवा की लडकी के विवाह की बात मान्य है तो कर्नल टॉड का दिया हुआ १३६६ का सवत् भी मान्य हो सकता है ।

कर्नल टॉड ने देवा द्वारा हरराज डोड के स्थान पर राव गागो खीची के आक्रमणो से मीणो को मुक्ति दिलाकर वूदी पर अधिकार करने की वात कही है । पर किसी विवाह-प्रसग की चर्चा नही की है । वशभास्कर का आधार लेते हुए डा० शर्मा ने लिखा है कि "मीणा मुखिया जैता ने देवा की पुत्रियो से अपने कवरो का विवाह-प्रस्ताव भिजवाया जिसे देवा ने स्वीकार नहीं किया । यह सम्वन्ध कोई आश्चर्यजनक तो नही था, क्योकि जो भूमि का स्वामित्व भोगते थे, वही क्षत्रिय कहलाते थे, पर मीणो की हीन प्रथाओ को देखते हुए देवा ने कहलाया कि यदि मीणे क्षत्रियो की सस्कृति अपनालें तो भाई जसकरण की पुत्रियो का विवाह कर दिया जाएगा । जैता ने यह प्रस्ताव मान लिया और तदनुकूल ऊमरथूण नामक गाव मे मडप सजाकर वरात के स्वागत के लिए एक वाडा वनाया और उसमे भूमि के नीचे वारूद विछाकर आग लगादी । अधिकाश मीणे जल मरे और वचे-खुचो को काट डाला गया ।[1]" डा० शर्मा ने इस घटना पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि इस प्रकार धोखा देना शायद राजपूतो की युद्धनीति रही हो क्योकि भीलों से कोटा तथा मीणो से सिरोही भी इसी प्रकार ली गई थी । वारूद के प्रयोग पर आपत्ति करते हुए उन्होने लिखा है कि वारूद का सर्वप्रथम प्रयोग भारत मे सवत् १५८४ मे हुआ जब वावर ने महाराणा सागा के विरुद्ध

---

१. वशभास्कर जि. २, पृ १६२४ —सूर्यमल्ल
कोटा राज्य का इतिहास—जि. १, पृ. ५८—मथुरालाल शर्मा

लडाई मे इसका प्रयोग किया। इसलिए इससे पूर्व बारूद के प्रयोग की बात विश्वसनीय नहीं है।[1]

बहुसख्यक मीणो का नृशम सहार करने की ग्लानि के कारण देवा ने अपने पुत्र समरसिंह को सवत् १३०० (१४०० ?) मे ही राज्य सौप दिया और स्वय सन्यास ग्रहण कर लिया।

बूदी का नामकरण बूदा मीणा के नाम से हुआ बताया जाता है। सस्कृत लेखो मे इसे बृदावती भी कहा गया है, पर सस्कृत के लेखो मे हर नाम को बलात् सस्कृत रूप देने की परम्परा रही है, अत उनके नामकरण विश्वसनीय नही माने जा सकते। खजूरी (बूदी जिला) गाव के सवत् १५६३ के लेख मे 'वृन्दावती' नाम दिया है, जब कि इससे पूर्व सवत् १४६० के महाराणा कुम्भा के राणकपुर शिलालेख मे 'बूदी' ही लिखा गया है। बूदी शहर के पास की सकडी घाटी 'बादू की नाल' के नाम से प्रसिद्ध थी जिसमे से कोटा, देवली तथा नसीराबाद को जाने वाली सडक गई है। बूदी शहर के उत्तर मे जैतसागर नामक बडा तालाब है जिसे मीणा जैता का बनवाया हुआ बताया जाता है। जैता बूदा का पोता बताया जाता है।[2]

इस प्रकार बूदी के मीणो की गणतन्त्रीय शासन–प्रणाली का अन्त हुआ और उसके स्थान पर एकतन्त्रवाद की स्थापना हुई। यह सत्ता बडी निरकुश थी जिसने हजारो मीणो, भीलो आदि जन-जातियो के निरीह प्राणियो का नृशस सहार किया।

---

१. कोटा राज्य का इतिहास जि १, पृ. ५६—डॉ मथुरालाल शर्मा

२. बूदी का इतिहास, पृ ३–४ —गहलोत

मारवाड की मीणा-परम्परा

हम पहिले यह उल्लेख कर चुके है कि मारवाड के जालोर, गोडवाड तथा नागोर क्षेत्रो मे मीणो का वाहुल्य और प्रावल्य महत्वाधिक वर्षो से रहा है। इन सभी स्थानो पर आक्रामक राजपूत जातियो के साथ स्थानीय मीणो का सघर्ष निश्चित ही हुआ होगा। यद्यपि राजपूतो का इतिहास इस सघर्ष का कोई विशेष उल्लेख नही करता और न उसको कोई महत्व ही देता है, पर भूमि के स्वामियो मे निरतर जूझते रहने की राजपूत शासको की वात लोक-परम्परा और ग्रथो मे आए स्फुट उल्लेखो से भली प्रकार जानी जा सकती है। यहा हम ऐसे ही कुछ महत्वपूर्ण उल्लेखो की चर्चा करना चाहेगे।

नाडोल

जैसा कि हम कह आए है टॉड, श्यामलदास प्रभृति राजस्थान के कई इतिहासकारो की मान्यता के अनुसार मेर, मेद, मेव, मीना आदि जातिया मूल रूप मे एक ही रही है।[1] इसलिए इनके पृथक्–पृथक् उल्लेखो को भी हम एक ही जनजाति द्वारा किए गए सघर्ष के रूप मे मानते हैं।

'नाडोल' पर चौहान राजा लाखण का अधिकार होने मे पहिले यह क्षेत्र पाली' की तरह की ब्राह्मणो के अधिकार मे था जो समय–समय पर विभिन्न शासको को कर दे दिया करते थे। शासको

---

१ वीरविनोद–पृ० १०५५–श्यामलदास (हमारी तहकीकात से इस देश (मेवाड) के मीने और मेरवाड़ा के मेर और खैराड के मीने व मेवात के मेवाती, सब एक ही खानदान से हैं जिनका तफसीलवार हाल हमने वगाल की एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल सन् १८८६ ई० के पहिले हिस्से मे छपवाया है।)

का सबध दिन प्रतिदिन के प्रशासन से नही था, क्योकि जिस प्रकार के उल्लेख तत्कालीन ग्रथो मे मिलते हैं उनसे यह पर्याप्त रूप से सिद्ध है कि नगर की रक्षा तक की चिन्ता वहा के निवासी ब्राह्मणो को ही थी। 'पुरातन प्रबध संग्रह' के 'लाखण राउल प्रवध' मे मेदो द्वारा नाडोल के लूटने का प्रसग उल्लिखित है। इसी सदर्भ मे यह वर्णन किया गया है कि किस प्रकार लाखण अपने साथी तथा स्त्री के साथ जीविका की तालश मे निकलने पर नाडोल नगर के वाहर देवी के मदिर मे रात भर रहा। नाडोल के ब्राह्मणो ने उसे नगर के भीतर चलने को कहा और सूचना दी कि रात को मेद लोग धाडा मारने के लिए आते है। रात को मेदो के आने पर लाखण तथा उसके साथी ने उनसे युद्ध किया जिसमे २० मेद घायल हुए या मारे गए। उन दोनो को भी गभीर चोटें आई। प्रात ब्राह्मण फिर आए और लाखण की स्त्री से पूछने लगे कि वे कहा जा रहे हैं। यह ज्ञात होने पर कि वे जहा निर्वाह हो सके वही जाना चाहेगे, ब्राह्मणो ने उन्हे वही रह कर मेदो से नगर की रक्षा करने के लिए कहा। लाखण द्वारा स्वीकार करने पर ब्राह्मणो ने उसके लिए 'ग्रास' नियुक्त कर दिया। लाखण ने कुछ और आदमी रखे तथा जब मेद लोग दौड' के लिए निकल जाते तो उनके गावो मे उपद्रव करवाता। इस पर मेदो ने कहलाया कि वे नाडोल की सीमा मे नही आयेंगे, वह उनके गावो मे नही आए। धीरे-धीरे लाखण ने और आदमी लिए तथा मेदो को कहलवाया कि मेरे करदाता गावो मे उपद्रव न करें।[1]

यह घटना सवत् १०३९ के आस-पास की है। डा० दशरथ शर्मा ने चौहान कालीन राजस्थान मे मीणो के वर्चस्व का उल्लेख करते हुए कहा है कि लाखण को साम्राज्य-स्थापन मे सहायता देने वाला

(१) पुरातन प्रबध सग्रह–पृ० १०१—मुनि जिनविजय

'अन्त्यज' भी मीणा भील अथवा बावरी ही रहा होगा।[1] यहा डा० शर्मा ने मीणो को अन्त्यजो मे गिना है। पर मीणो की गणना सदैव क्षत्रियो के समकक्ष की गई है और इनके हाथ का छुआ अन्न-जल सभी जातियो के लोग ग्रहण करते है। इसमे गोडवाड के मीणे अपवादस्वरूप अवश्य हैं क्योकि इन्हे मैले मीणे माना जाता है।

मण्डोर

'पृथ्वीराज रासो' मे मण्डोर के नाहरराय (नागभट्ट)[2] प्रतिहार पर पृथ्वीराज के आक्रमण का वर्णन करते हुए नाहरराय के मित्र पर्वतराय नामक मीणा मुखिया और उसके सिपाहियो का गौरवपूर्ण उल्लेख किया गया है। उन्होने पृथ्वीराज के साथ प्रशसनीय युद्ध किया था जिसकी पृथ्वीराज के राज्यकवि 'चद' तक ने मुक्त कण्ठ से स्तुति की है। वह लिखता है कि "मण्डोवर के नाहरराय की लज्जा रखने वाले, प्रतिहारो के राज्य-रक्षक, स्वामी के लिए युद्ध मे वज्र तुल्य, युद्ध मे लडकर कभी भी पराजित नही होने वाले, मेवासियो की भूमि को उजाड देने वाले और उन्हे मार कर उनके पशुओ को पकड कर ले जाने वाले, दिखने मे राजाओ के समान ही अपनी प्रतिज्ञा और विरुदो को प्रचार मे लाने वाले, वे तूणीरधारी वीर वृक्षो और पत्थरो को ऊपर-तले करके उनकी ओट मे बैठकर विप भरे सर्पों के समान ही चौहान (पृथ्वीराज) की राह देखने लगे।[3] अपने मित्रो (प्रतिहारो) की

---

1. अर्ली चौहान डायनेस्टीज-पृ० २५०-डॉ० दशरथ शर्मा
2. घटियाले के सवत् ६१८ के शिलालेखो के अनुसार नागभट्ट (नाहडराव) का समय सवत् ७३४ के आस-पास ठहरता है, पर सवत् १२०० से पूर्व नाडोल के चौहान रायपाल द्वारा अधिकार किए जाने से पहिले तक इस धरती पर प्रतिहारो का राज्य था, अत पृथ्वीराज के समय नाहरराय के स्थान पर अन्य किसी प्रतिहार राजा का होना भी सभव है।
3. पृथ्वीरज रासो-भाग १-पृ-१४६-५०-मोहनसिंह

रक्षा के लिए उस समय चार हजार मीणो-मेरो ने घाटा रोक कर पृथ्वीराज से युद्ध किया। हाथो मे धनुप और कमर मे तरकश लटकाये हुए वे बीहड वनो मे रहने वाले मीणा योद्धा शकुन के विना एक पाव भी नहीं रखते थे—

तीन पनच धनही करणि, वडे कटिनि तडीर।
सगुन विना पग ना धरै, विकट वननि हडीर॥"[1]

यद्यपि 'पृथ्वीराज रासो' का यह सस्करण जिसमे यह वृत्तान्त उद्धृत किया गया है सतरहवी-अठारहवी शताब्दी मे लिखा गया बताया जाता है, पर मीणो की प्रभुता चौदहवी शताब्दी तक चरम सीमा पर थी, इसमे सदेह नही किया जाना चाहिए। राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रो मे इनके छोटे-छोटे राज्य सोलहवी शताब्दी तक विद्यमान थे जिन्हे मुगल-सत्ता के प्रादुर्भाव के वाद ही पूर्णतया समाप्त किया जा सका।

पाली

राठौडो के पूर्वपुरुप राव सीहा सबसे पहिले मारवाड मे आए। जब वे द्वारका की यात्रा से लौट रहे थे तो पाली के पल्लीवाल ब्राह्मणो ने उनसे जाकर निवेदन किया कि मेर और मीणे उनके शहर को लूटते हैं तथा उन्हे दु खी करते है, अत उनसे रक्षा करें। राव सीहा ने पाली के ब्राह्मणों का निवेदन मान कर मेरो और मीणो को दबाया तथा कालान्तर मे ब्राह्मणो को भी समाप्त कर पाली पर अधिकार कर लिया। सीहाजी का समय सवत् १३१२ के आस-पास बताया जाता है, क्योकि उनका एक शिलालेख पाली के समीप 'बीठू' नामक गाव मे सवत् १३३० का मिला है जिसमे उनके पीछे उनकी स्त्री पार्वती सोलकणी का सती होना लिखा है।[2]

---

१ पृथ्वीराज रासो-भाग १-पृ-१४६-मोहनसिह
मारवाड का सक्षिप्त इतिहास-पृ-६१-६२-रामकर्ण आसोपा

राव सोहा को पाली के ब्राह्मणो द्वारा मेरो-मीणो से रक्षा करने के लिए जमीन देने तथा बाद मे सीहाजी द्वारा पल्लीवालो को मार कर पाली छीन लेने की बात अन्य इतिहासकारो ने भी स्वीकार की है।[1]

इस घटना की समता नाडोल के ब्राह्मणो द्वारा चौहान लाखण को दिए गए आमत्रण मे की जा सकती है। इससे यह सिद्ध है कि नाडोल की तरह पाली भी, जो एक ही जिले के भूभाग है मीणो के प्रभुत्व मे रही हुई है। पर इतनी सत्ता रखते हुए भी मीणो का राजपूतो के वशवर्ती हो जाना और धीरे-धीरे हीन अवस्था को प्राप्त हो जाना यह सिद्ध करता है कि इनमे सगठन-शक्ति तथा दूरदर्शिता का अभाव था और लूट-मार करने का परम्परागत कार्य ही इनका लक्ष्य था। यदि ऐसा नही होता तो अनेक राजपूत राज्यो के बीच कम से कम एकाध मीणा राज्य का अस्तित्व तो आज भी देखने को मिलता। यदि यह भी मान लिया जाये कि अनेक प्राचीन राजवशो की तरह मीणो को भी नाचीज बना दिया गया तो भी कही कोई छोटी-मोटी जागीर के नाम से भी उनका अवशेष नही रहना विस्मयजनक है। यदि मीणो के विवाह-सम्बन्ध राजपूतो मे होने लगते और वे एक दूसरे मे समा जाते तो सभवत राज्यसत्ता मे उनका भी चिह्न बच जाता।

भाद्राजूण

पाली और जालोर जिलो की सीमा पर बसे इस कस्बे मे मीणो का प्राबल्य रहा है। यहा के मीणे अनेक गावो से चौथ वसूल करते थे तथा बोलावा भी लेते थे। शायद यही के मेवासी मीणे नाडोल और पाली आदि शहरो को लूटते और उनसे चौथ वसूल करते थे।

---

१ कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया–जि. ३, पृ. ५२१

जोधपुर राज्य की ख्यात के अनुसार भाद्राजूण के हरराज नामक मीणे ने सवन १६४१ मे जोधपुर के गढ पर आक्रमण किया और उसे सोलह साथियो सहित मार डाला गया।[1] ओझाजी ने इस घटना का उल्लेख करते हुए केवल यही लिखा है कि हरराज सोलह साथियो को लेकर जोधपुर के किले पर चढ आया। यदि वे इस घटना की बारीकी पर सोचते तो यह सोचना चाहिए था कि सोलह साथियो से गढ पर चढ आने का उद्देश्य क्या था? गढो पर चढ आने (आक्रमण करने) वाले कम से कम सोलहसौ या सोलह के आगे एक शून्य लगाकर एक सौ साठ के साथ तो चढते ही। केवल सोलह साथियो को लेकर चढना तो निरी मूर्खता थी जिसकी आशा मीणो से नही की जा सकती, जिनका हजारो वर्षों का धन्धा ही आक्रमण करने का रहा है। चोरी करने के लिए भी किले पर सोलह आदमियो के साथ जाने की बात समझ मे नही आती। खेद है कि राजपूतो के इतिहासकारो ने भी मुस्लिम तवारीख-लेखको की तरह प्रतिपक्ष के तथ्यो को छिपाया और अपने स्वामी के गुणगान से ही इतिहास के पृष्ठ रग डाले। यदि इस घटना का उल्लेख उनके इतिहासो मे मिलता है तो इसके पीछे कोई विशेष महत्व की बात होनी चाहिए और वह यही हो सकती है कि हरराज जैसे प्रसिद्ध मीणा मुखिया को जोधपुर दुर्ग पर आक्रमण करते समय मार डाला गया। कई इतिहासकारो ने मोटे राजा उदयसिंह द्वारा हरराज के मारे जाने का उल्लेख भी किया है, पर गढ पर चढ जाने की बात को दबा लिया है।

ढूढाड की ही तरह मारवाड मे मीणो का राजपूत जाति से निरन्तर सघर्ष चलता रहा था। जोधपुर राज्य के लिखित प्रमाणो के आधार पर भी इस सघर्ष का बीसवी शताब्दी तक चलते रहना सिद्ध है। कुछ उदाहरणो से यह तथ्य स्पष्ट हो सकेगा।

---

(१) जोधपुर राज्य की हस्तलिखित ख्यात, जि १, पृ. ९८

सन् १८२३ मे नाथो के बढते हुए प्रभाव के कारण जोधपुर मे आए दिन दीवान बदले जाते थे जिससे राज्य-प्रबन्ध शिथिल हो गया और मेरवाडे की तरफ के मीणो और मेरो ने लूट-मार तथा उपद्रव प्रारभ कर दिये । अग्रेजी सरकार ने जोधपुर की सेना की सहायता से उन्हे कुचल कर शात किया ।[1]

सन् १८३५ मे मारवाड और सिरोही की हद पर भीलो तथा मीणो ने लूटमार शुरू की । १८८२ ई० मे जालोर, गोडवाड आदि के मीणो ने डकैती तथा उपद्रव किए । सन् १८८३ मे सर प्रताप ने मुखिया लोगो को दण्ड दिया और शेष को खेती के काम मे लगा दिया ।[2]

केवल मीणे ही नही कई स्वच्छद राजपूत भी मीणो के साथ थे और सत्ता का विरोध करते थे । भीनमाल के लोयाने का राजा सालसिह, देवल राजपूत, मीणो का मुखिया था और १८८३ ई० के आस-पास उनकी सहायता करता था ।[3] १८६८ ई० तक जागीरदारो द्वारा मीणो की सहायता करने के उल्लेख मिलते है । यह स्थिति १८८५ ई० तक चलती रही, जब कि मेरवाडे के केवल २१ गावो पर जोधपुर का स्वामित्व रखते हुए भी अग्रेजो ने मीणो-मेरो के उपद्रव को दबाने के लिए उन्हे अपने प्रबध मे ले लिया ।[4] आए दिनो के इन उपद्रवो को शात करने के लिए १८८३ ई० मे मीणो को खेती मे लगाने के लिए परगनो के हाकिमो और अधीक्षको के पास विशेष आज्ञा भिजवाई गई ।

---

१ मारवाड का इतिहास-जि १, पृ-४२६--रेऊ
२ " " " ४३०, ४७१ रेऊ
३ मारवाड का इतिहास-जि० १, पृ० ४७६—रेऊ
४ मारवाड का इतिहास-जि० १, पृ० ४७६—रेऊ

मेवाड के मीणे

मेवाड के जहाजपुर और छप्पन के क्षेत्रो के मीणो के शौर्य की कथायें बहुत सुनी जाती हैं। छप्पन का इलाका मेवाड के दक्षिण मे पर्वतो से घिरा हुआ है और यही सकट पडने पर महाराणाओ ने छिप कर शत्रु से अपनी रक्षा की है। जैसा कि पहिले कह आए हैं मेवाड की भूमि के मूल निवासियो मे मीणे और भील ही प्रमुख हैं। मीणो (मेदो, मेरो, मेवो) के नाम से ही इस भूमि का नाम 'मेवाड' कहलाया जाने की मान्यता भी है। अत: इस क्षेत्र के शासको से भी यहा के आदि भूस्वामियो का सघर्ष होना स्वाभाविक ही है।

गुहिलोत बाप्पा रावल द्वारा चित्तौड पर अधिकार करने से पूर्व चित्तौड के किले का स्वामित्व भोग चुकने वालो मे मान मोरी नामक राजा भी था। लोगो की यहा तक धारणा है कि चित्तौड का किला किसी चित्राग मोरी द्वारा बनाया गया था। यद्यपि विद्वान लोग इन मोरियो का सबध प्रसिद्ध मौर्य वश से जोडते हैं पर यह भी सभव है कि मेवाड तथा कोटा के पहाडी भागो मे किले बनाकर राज्य करने वाले ये मोरी राजा किसी आदिवासी 'मोरी' जाति से सबधित हो। वास्तव मे आदिवासी जातियो का सही इतिहास नही प्रस्तुत किया जाने के कारण ऐसे विषय मे निश्चयात्मक रूप से कुछ कहा नही जा सकता। मीणो के गोत्रो मे भी 'मोरो' नामक गोत्र बताया जाता है। दौसा (जयपुर) के पास 'मोरा' नामक स्थान का भी सबध इसी जाति के नाम से बताया जाता है। जिस दिन मेर, मेव, मेद आदि जातियो का सही इतिवृत्त तैयार होगा उसी दिन भारतीय इतिहास की प्रारभिक शताब्दियो का अन्धकार विदीर्ण होगा।

जहाजपुर के क्षेत्र मे मीणो-मेरो के निरतर सघर्ष करते रहने के प्रमाण मिलते हैं। महाराणा लाखा ने भी इनसे युद्ध कर इन्हे

विजित किया था।[1] महाराणा कुभा के समय भी इन लोगो के विद्रोह करने पर कुभा द्वारा दण्डित किये जाने का उल्लेख है। कुभलगढ प्रशस्ति तथा कुंभा लिखित गीतगोविन्द की मेवाडी टीका मे इसका स्पष्ट उल्लेख है।[2]

महाराणा कुभा द्वारा पराजित मेरो के मुखिया मुनीर का उल्लेख कुभलगढ-प्रशस्ति मे आता है। 'अमर काव्य वशावली' मे भी "मनीर हनवान् वीरो" पद दिया गया है।[3] सगीतराज मे भी इसका वर्णन है।

यद्यपि आम धारणा के अनुसार महाराणा प्रताप को भीलो तथा मीणो ने मुगलो के साथ युद्ध करने मे सहायता दी थी,[4] पर हाल ही मे प्राप्त एक डिंगल गीत के अनुसार प्रताप को मीणो से युद्ध भी करना पडा था। देशभक्ति के हामी लोगो को मीणो का यह पक्ष रुचिकर भले ही न लगे पर जिस भूमि की रक्षा करने के लिए प्रताप ने मुगलो से संघर्ष किया उसी भूमि की रक्षा करने के निमित्त यदि आदिवासी मीणो ने आक्रमाक राजपूत वश के राणा प्रताप से

---

१. महाराणा कुभा-पृ० ६७—रामवल्लभ सोमाणी—

२. महाराणा कुभा-पृ० ६८—रामवल्लभ सोमाणी

३. "मन्नीर वीरमुदवीवहदेषनीर। यो वर्द्धमानगिरिमाशु विजित्य तास्मन्"—कुभलगढ प्रशस्ति—महाराणा कुभा—पृ० ६८—रामवल्लभ सोमाणी

४. "हिन्दी शब्दसागर-५वा खण्ड-पृ० २७५८—"मीना—राजपूताने की एक प्रसिद्ध योद्धा जाति। इस जाति के लोग बहुत वीर होते है और युद्ध मे इनकी बहुत प्रवृत्ति होती है। किसी समय ये बहुत बलशाली थे और प्राय लूटमार करके अपना निर्वाह करते थे। महाराणा प्रताप को अपने युद्धो मे इनसे बहुत सहायता मिली थी।

युद्ध किया हो तो कोई आश्चर्य की बात नही होनी चाहिए। राजस्थान मे मीणा जाति ही एक ठेठ आदिवासी जाति है जिसने अपने अधिकारो की रक्षा के लिए निरतर संघर्ष जारी रखा तथा शताब्दियो तक शासक वर्ग को सुख-चैन की नींद नही सोने दिया। राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक-सभी दृष्टियो मे शोषित और पीडित होने पर भी मीणो का शौर्य और साहस अदम्य रहे है।

महाराणा द्वारा मीणो के दमन की चर्चा करते हुए डॉ० देवीलाल पालीवाल ने लिखा है कि 'मेवाड के दक्षिणी भाग के रहने वाले पर्वतीय लोग भील जाति के लोगो से भिन्न है और मीणा कहलाते हैं। मीणा जाति के लोग आस-पास के इलाको मे सदैव ही अशांति, उत्पात एव लूटमार मचाते रहते थे। प्रताप को बाह्य आक्रमण का मुकावला करने के साथ-साथ आतरिक शान्ति की दृष्टि से मीणा लोगो के उत्पातो का भी सामना करना पडा था।'[1] इस तथ्य की साक्षी का एक डिंगल गीत उपलब्ध है जो इस प्रकार है—

उचरतु वाट वाणियो आखै, कतवारी वाखाण करै
माहरो धणी हुओ मारखणो, ताक रया चोरडा तरै
अग पहरै लो नू आगरडू, घोडलडे पाखरडू घाल
पातल राण चढै परवाते, झटकू बाद भड़कू झाल
झाल भड़कू जीखू मारै, पीपू मारग बडकू पाड
ठाकरडै गही ठीगाई, धीगाई कुण माडै धाड
भौ भागौ है काकस भाभत, सुणो वात सेणा री
खू मारणै जागवियू खाडू, माराडू मीणा री[2]

1. प्राचीन डिंगल काव्य मे महाराणा प्रताप पृ० ६-डा० पालीवाल
2. „ „ „ ३३-६६ „

महाराणा राजसिंह के समय हुए मीणा-विद्रोह का वर्णन करते हुए ओझाजी ने लिखा है कि 'मेवाड के दक्षिणी हिस्से का एक भाग 'मेवल' नाम से प्रसिद्ध है जहा जगली मीना जाति की आवादी अधिकतर है। वि स १७१६ (सन् १६६२) मे मीना लोगो ने सिर उठाया, जिससे महाराणा ने उन पर सैन्य भेजकर उनमे से वहुतो को कैद कर लिया, कई एक को मार डाला और उनका वल तोड दिया। फिर मानसिंह (सारगदेवोत) आदि सरदारो को इस विजय के उपलक्ष्य मे सिरोपाव देकर इस अभिप्राय से वह प्रदेश उनके अधीन कर दिया कि वे उनको दवाये रखें।' [1] राजप्रशस्ति महाकाव्य मे भी इस घटना का उल्लेख है। [2]

कुभलगढ की सीमा तक फैले मेरवाडे के मेरो ने भोमट के भीलो के साथ मिलकर महाराणा भीमसिंह के समय भयकर उपद्रव किया। मेरो की सैनिक क्रान्ति को कुचलने के लिए अग्रेजी सेना को उदयपुर तथा जोधपुर की सेनाओं की मदद लेकर प्रयत्न करना पडा। [3] युद्धप्रिय और स्वतन्त्रता प्रेमी मेर जव कभी शासक की शक्ति

---

१ उदयपुर राज्य का इतिहास, जि २, पृ ५४३—ओझा

२, एकोनविंशत्यब्दे शते सप्तदशे गते।
मेवल देशमतनोत्स्वकीय त वलान्नृप ॥ ३१ ॥
मीनान्निर्जलमीनाभान् रुध्वा बध्वा....करान्।
खण्डयामासुरधिक मीनासैन्य महाभटाः ॥३२॥
श्रीराण राजसिंहेन्द्रो मेवलन्त्वखिल ददौ।
स्वीयराजन्यधन्येभ्यो वासोहयधनानि च ॥३३॥
(राजप्रशस्ति महाकाव्य, सर्ग ८)

३ उदयपुर राज्य का इतिहास, पृ ७१६—ओझा

क्षीण होती देखते तभी उपद्रव कर स्वतन्त्र हो जाते। जब जब उन्होने मेवाड से स्वतन्त्र होना चाहा तभी मेवाड के महाराणाओ ने उन पर चढाइया कर उनका दमन किया। [1]

एक बार विद्रोही मेरो ने 'झाक' (मेरवाडा) के अग्रेजी थानेदार को मार डाला और कई थाने उठा दिये। रियासती सेनाओ के साथ हुई रामगढ की लडाई मे हथूण का खान तथा उनके साथ के २०० मेर बहादुरी से लडकर मारे गये। मेरो को भविष्य मे किसान बनाने के विचार से कई स्थानो पर जमीनें देकर बसाया गया। [2]

सवत् १९०८ मे लुहारी के मीणो ने सरकारी डाक लूट ली और अजमेर के अग्रेजी इलाके मे डाके डाले। जहाजपुर के हाकिम मेहता अजीतसिह तथा सहायतार्थ जालन्धरी के सरदार अमरसिह शक्तावत को सेना सहित भेजा गया। अजीतसिह ने छोटी-बडी लुहारी पर कब्जा किया। बहुत से मीणे खेत रहे। बाकी मनोहरगढ तथा 'ढण्ड का खेडा' की पहाडियो मे जा छिपे तथा उनका पीछा करने पर तीन-चार हजार मीणे आगे आये। जयपुर-टोंक तथा बूदी के चार-पाच हजार मीणे उनकी सहायतार्थ आ पहुँचे और झाडियो की आड से तीरो की बौछार करने लगे। अग्रेजो ने टोंक, बूदी तथा जयपुर के राज्यो पर दबाव डाला कि वे मीणो को न आने दें तथा अपनी सेनायें भेजें। बीचबचाव करने पर जहाजपुर के मीणो ने अपराधियो को सुपुर्द कर दिया। [3]

---

१. उदयपुर राज्य का इतिहास पृ ७०९—ओझा
२. ,, ,, पृ ७११ ,,
३. वीरविनोद भाग–२, प्रकरण १८—श्यामलदास

राजपूतो के साथ हुए मेवाड के मीणों के निरतर सघर्ष का उल्लेख करते हुए कर्नल टॉड ने मीणो के कुछ प्रमुख गावो के नाम गिनाये है—ऊटवण, कोलूर, राडूर, रेवाडी तथा माचल। वे लिखते हैं कि 'मीणो के इन गावो मे से प्रत्येक मे ही रोमाच–लेखक के लिए उनके हमलो, आपसी झगडो तथा पडोसी राजपूत सरदारो के साथ हुए सघर्षों की कथाओ मे पर्याप्त सामग्री मिल सकती है'। कर्नल टॉड ने मीणों तथा पिराई के राजपूतो मे हुए एक झगडे का वर्णन (ऊटवण का झगडा) करते हुए आगे लिखा है कि राजपूत ऊटवण पर हमला कर मीणो के मुखिया की माता को पकड कर ले गये जहा बदी अवस्था मे ही दुखी होकर उसने जहर खाकर आत्महत्या करली। उस वृद्धा के पुत्र ने अपने धनुर्धारियो के साथ कोलूर की पहाडी पर जाकर भाई-बन्धुओ को एकत्र किया और पिराई मे उत्सवरत राजपूतो पर आधीरात को हमला कर ४६ राजपूतो की लाशें बिछाकर उस वृद्धा का बदला चुकाया।[1]

इतिहास लेखको के अलावा जनश्रुतियो मे भी मीणो तथा राजपूतो के सघर्ष के अनेक आख्यान सुरक्षित है। मेरवाडा के मेर-रावतो ने मेवाड के महाराणाओ को किस प्रकार नाको चने चबाये यह बात किसी से भी छिपी नही रही है।

आथूण के खान (दाऊदखा ?) चीता–मेर की धाक से मेवाड की प्रजा किस प्रकार कापती थी इसके विषय मे एक दोहा प्रचलित है —

सेज न सोवै सुन्दरी, धाप न खावै धान।
देबारी दीवाण री, (जठै) खटकै दूदो खान॥

---

१ पश्चिमी भारत की यात्रा, पृ. ५६—टॉड

भीमटा रावत नामक एक वीर को किस प्रकार भयग्रस्त राणा ने चूक कर मरवा डाला, इसकी साक्षी का एक और छंद इस प्रकार है —

चूक कियो चीतौड़ राणा, हार पड़ग पर हठ लागो।
सीयाणा मे सापलो माच्यो, भीमटो मूवो नै मेवाड रो भौ भागो ॥

कहते हैं कामलीघाट मे देवगढ के पास चेता (गाव) मे भीमटा रावत का राज्य था। मेरो की मान्यता है कि हुमायू की दी हुई अढाई दिन की बादशाही का भिश्ती राजा यही भीमटा था। इन अविश्वसनीय बातो की ओर ध्यान न भी दें तो भी भीमटा रावत के बहु-प्रचलित गीत उसकी वीरता को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त होने चाहिए।

भीमटा के समकालीन ही बदनोर के वैराटगढ का स्वामी करणसी रावत हुआ बताते है। स्वयं की पुत्रियो को मार डालने वाले रावत लोग पडोसी मेवाड़ तथा मारवाड़ के राजपूतो और अन्य लोगो की लडकिया उठाकर ले आते और उनसे शादिया करते बताए। एक जनश्रुति मे मेवाडी औरतो के फूहडपन की बात कह कर उन्हे आगे से न लाने की बात कही गई है —

खाय न जाणै पहर न जाणै, ओढ न जाणै हाडी।
करणसी जी कहै सुण भीमटा रावत, आपा नह परणा मेवाडी ॥

देवगढ के पास 'काछवली' (गाव) के हीरा रावत की वीरता के दोहे भी प्रचलित हैं —

दोपारै फळिया जडै, काठा जडै किंवाड।
महला री खिडकी जडै, आयो हीरो ओनाड ॥
हीर जोध कलियाण का, सबळा मता किया।
मोड्या दळ मुगला तणा, पाड'र पमग लिया ॥

जहा मेवाड के राणाओ से मेरो के युद्धरत रहने की बातें कहीं जाती हैं, वही मेरो द्वारा कई राणाओ तथा अन्य सरदारो को सहायता या शरण देने की बातें भी सुनी जाती है—

सौळे सावत, सूरमा, सुणी बरमावाड[1] बात ।
राण पुचायो रावता, थाको अधको बधियो आग ।।

कहते हैं उपर्युक्त प्रसग मे मेरो ने राणा को ३ महीने, ६ दिन, १४ घडी शरण दी थी । झाक गाव मे पारसोली के ठाकुर देवीसिंह को, अनाकर मे राणा भीमसिंह को, काछबली मे जोधपुर के रायसिंह को तथा रायपुर (मारवाड) के ठाकुर अर्जुनसिंह को शरण देने की बात कही गई है ।[2]

लगातार निकट रहने के कारण मेरो-राजपूतो का सघर्ष स्वाभाविक था । कर्नल टॉड ने लिखा है कि 'मारू-मेवाड के ठाकुर ठिकानो मे मे कोई भी ऐसा नही है जिसका पुरखा रावत मेरो के हाथ से नही मारा गया हो ।' इसकी साक्षी मे उन्होने रिया के भोपालसिंह की सवत् १८३५ की माघ कृष्णा तृतीया भोमवार के दिन, अपनी स्त्री का सिर हाथ से काटने के बाद, मेरो के मुकाबले मे हुई मृत्यु विषयक एक लेख का वर्णन भी किया है ।

मेवाड के शासको द्वारा मेरो के दमन के लिए किए गए प्रयत्नो का उल्लेख करते हुए कर्नल टॉड लिखते हैं कि राणाओ ने मेरो का दमन करने के लिए मेरवाडा मे सब जगह छोटे-छोटे दुर्ग बना रखे

---

१ टॉडगढ
२, ये सब जानकारिया टॉडगढ के श्री कानसिंह रावत से प्राप्त हुई हैं ।

हैं।[1] 'मेरवाडा के पहाडी लोगो का दमन करके जिस दिन उदयपुर-राजमहल के प्रांगण मे उन लोगो के अस्त्र-शस्त्र इकट्ठे हुए वह दिन मेवाड के इतिहास का युगारम्भ कहना चाहिए।' इस प्रकार परास्त मेरो के मुखियाओ द्वारा स्वामिभक्ति की शपथ खाने पर महाराणा द्वारा स्वर्णकेयूर तथा दुपट्टे भेंट किये जाते थे। यह प्रत्यक्ष है कि स्वामिभक्ति की शपथ से प्रेरित न होकर भयजन्य मन स्थिति से ही यह आदर-सम्मान दिया गया था—

अडसी राणा सू अड गया, अड्या जद मोती घाल्या कान।
रावत राजा राव नै, दीधा पटा दीवान॥

मेवाड की भूमि पर मेरो-रावतो के शौर्य के प्रतीक आज भी विद्यमान हैं। सादडी मे राव भीमटा को भैंरूजी के नाम से पूजा जाता है। छापली (दवेर से ६ मील दूर) के खाखाजी रावत द्वारा प्रदत्त खाखा-डोळी ही आज की 'काकरोली' बताई जाती है। मेरवाडा के रावतो के पास आज भी काकरोली के महन्तो के भेजे निमन्त्रण प्राप्त होते बताये। पर राणाओ का भय भी मेरो के मन मे न समाया हो ऐसी बात नही है। जनश्रुति के अनुसार चूडा सीसोदिया द्वारा आतंकित मेरो की स्त्रियो ने उसे 'माटी' बनाकर सिर पर धारण किया और इसकी स्मृति मे पुरुषाकृति चूडा (केश-विन्यास) सिर पर धारण किया।[2] चूडा के इस बैर-भाव का कारण मेरो द्वारा राठौडो के साथ किया गया भाईचारा बताया जाता है। राव रणमल राठौड से वचनबद्ध होने के कारण मेरो ने राठौडो का साथ दिया बताते हैं।

---

१. टॉड राजस्थान (हिन्दी)—पृ. ८६३

२ यह कथन विश्वसनीय नहीं है क्योकि 'चूडा' शब्द राजस्थान की अन्य जातियो तथा क्षेत्रो मे भी प्रचलित है।

कर्नल टॉड ने लिखा है कि मेर लोग राजपूतो के आत्मविग्रह के कारण प्रवल हो गये। जव मेवाड के राणा आक्रमण करते तो मारवाड के सामत इन्हे शरण देते। अग्रेजो ने ये शरण-स्थल वन्द कर दिये और इन्हे सन् १८२१ मे परास्त कर दिया गया तथा इनकी एक पृथक् सेना सगठित कर उन्होने अपने अधीन करली।

मारवाड के राठौड धाडी मेरो के दलो को अपने इलाको मे से गुजरते समय सम्मान सहित 'घूघरी' देते और इस प्रकार अपने गावो की रक्षा करने के अतिरिक्त उनसे भाईचारा भी वनाये रखते।

इस वीर मेर-रावत जाति की वदना करते हुए विरुदवाचक ने ठीक ही कहा है—

रण छैला रण वावळा, कुळै सुधारण काज।
राणी जाया रावता, थानै साख साख सुभराज ॥

राजस्थान के इतिहास मे जहा-जहा आक्रामक जाति ने अपने पैर जमाने के प्रयत्न किए हैं वहा-वहा मीणा-मेर-मेव-मेद नामधारी इन आदिवासी भूमि-पुत्रो ने उनका डट कर मुकावला किया है। यह तथ्य इस अध्याय मे वर्णित अनेक दृष्टातो से प्रमाणित किया जा चुका है। हर नए राजपूत राज्य की स्थापना मे इस वीर पर भोली जाति के अगणित शूरो का रक्त वहाया गया है। जयपुर, उदयपुर, वूदी, अलवर, मारवाड आदि वडे राज्यो के अतिरिक्त अनेक अपेक्षाकृत छोटे राज्यो का इतिहास भी मीणो के सघर्ष की वात कहता है। इसकी पूरे विस्तार से चर्चा करना सभव नही है, अत हम कुछ उल्लेख मात्र यहा कर रहे हैं।

करौली मे यादवो का शासन पर्याप्त प्राचीन काल से चला आ रहा है, पर इस क्षेत्र के मीणे सदैव प्रवल रहे हैं। मीणो के

कई विशिष्ट गोत्र करोली के आस-पास पाए जाते है। 'भिर' गाव के भिरवाळ मीणे उनमे से एक हैं। करौली के राजा गोपाललाल, जो अकबर के समकालीन थे, ने मीणो का दमन किया और करौली शहर की रक्षा के लिए शहरपनाह बनाई।[1]

सिरोही का राज्य मीणो से छलपूर्वक लिए जाने की बात किवदन्तियो मे कही गई है।[2] सिरोही को मीणो का देश बताते हुए उनके धनुप-बाणो की तारीफ विद्वानो ने की है।[3]

उदयपुर के रावल करण के पुत्र माहप ने डूगरिया मेर को मार कर डूगरपुर बसाया। मेर जाति मीणा जाति का ही एक अग है यह सभी विद्वान मानते हैं।[4]

बासवाडा मे महीर जाति के नाम से महीरवाडा का क्षेत्र है जहा महीर या मेर मीणा रहते आए हैं। डूगरपुर-बासवाडे का क्षेत्र प्राय एक ही माना जाता है, अत मीणो का इस भूमि मे भी आधिपत्य होना चाहिए।[5]

भू० पू० प्रतापगढ राज्य के 'काठळ' नामक परगने मे भी मीणे रहते थे। बीका सीसोदिया ने मीणो के सरदार को मार डाला तो उसकी स्त्री, जिसका नाम देऊ था, सती हो गई। देऊ की अन्तिम

---

१ वीरविनोद–करौली की तवारीख–श्यामलदास

२ कोटा राज्य का इतिहास, जि० १, पृ० ५८–मथुरालाल

३ मेमोयर्स ऑफ दी जयपुर एग्जीबीशन–१८८३, जि० १, पृ० ४ थॉमस एन० हेण्डले

४ वीरविनोद–पृ० १००५–श्यामलदास

५ ,, १०२६ ,,

इच्छा के अनुसार उसके नाम को स्थायित्व देने के लिए उस स्थान पर राजधानी बना कर 'देवलिया' नाम दिया गया। यह घटना संवत् १६१७ वि की है। देवलिया प्रतापगढ के संस्थापक राव बीका ने ७०० गांवों पर अधिकार किया जिनमे से ४००'चौड' के थे जिनको 'देवलिया वाले देश' कहते है, और ३०० पहाडी के जिनमे मेरो के १०० गाव है।[1]

कविराजा श्यामलदास ने लिखा है कि नैणसी मेहता ने देवलिया के मीणो को उस समय (अठारवी शताब्दी मे) 'मेर' बताया है, पर उनकी निजी धारणा से राजस्थान के मीणे, मेरवाड़ा के मेर और मेवात के मेव-मेवाती सब एक ही खानदान के है।[2]

---

१ वीरविनोद–पृ० १०५५—श्यामलदास

२ ,, १०५५ ,, —जर्नल ऑफ दी रोयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, सन् १८८६, भाग–१

अध्याय ७

मुगल काल

मुगल सम्राटो के राज्यकाल मे राजस्थान प्रदेश प्राय सुशासित रहा। राजस्थान के प्रायः सभी राजा उनकी सेवा स्वीकार कर चुके थे और शाही सरक्षण पाकर वे धीरे-धीरे भौतिक दृष्टि से भी सम्पन्न और समृद्ध बनते जा रहे थे। इस सरक्षण का लाभ उठाकर उन राज्यो के शासक राजपूतो ने अपने भीतरी उपद्रवो को भी कुचल दिया था। जगलो तथा पहाडो मे बसे हुए जो आदिवासी पहिले अपनी स्वच्छद प्रकृति के कारण शासको के लिए सिरदर्द बने हुए थे वे सब मुगल सत्ता का सहारा पाए हुए राजपूतो द्वारा एक बार शान्त रहने के लिए विवश कर दिए गए। आमेर के राजा भारमल, करौली के राजा गोपाललाल, जोधपुर के राव चद्रसेन तथा उदयसिंह आदि ने इसी समय अपने-अपने राज्यो मे मीणो का दमन किया, जिसका वर्णन हम अन्यत्र राजपूतो के सम्बन्ध मे कर चुके हैं।

मुगलो से मीणो के सीधे सम्पर्क के बहुत थोडे तथ्य उपलब्ध हैं। मेवात तथा मेरवाडा के क्षेत्र ही मुगल शासको के सीधे सम्पर्क मे आए, अत इन्ही क्षेत्रो के मेवो और मेरो के कतिपय वर्णन हम यहा प्रस्तुत कर रहे हैं।

राव बादा और टोडरमल मेर [1]

मेवात की लोकगाथाओ मे टोडरमल तथा बादाराव की यश-गाथा बडे चाव से गाई जाती है। राव बादा ब्याड़वाळ जाति का मीणा मुखिया था तथा थानागाजी (अलवर) तहसील के नडैठ नामक

---

१. वरदा—वर्ष ११—अक २ (१९६८)—महावीरप्रसाद शर्मा

स्थान पर रहता था। नडैठ अथवा नहुडा की भूमि को आज भी 'रावधरा' कहा जाता है। बादशाह अकबर ने इन्ही बादाराव को 'राव' का खिताब दिया बताते है।[1] मेवो के विवाहादि अवसरो पर मिरासी लोग टोडरमल-बादाराव का गीत गाते है। दरियाखा-शशिवदनी का गीत भी बडे चाव से गाया-सुना जाता है। दरियाखा टोडरमल मेव का पुत्र तथा शशिवदनी बादाराव की पुत्री बताई जाती है।

कामा से चार मील पूर्व अजानगढ का जमीदार टोडरमल निम्नलिखित दूहा कहा करता था—

पाच पहाड के राज ही, और पूरो तेरो दल्ल।
आधे अकबर बादशाह, आधे टोडरमल्ल॥

किसी ने अकबर से यह शिकायत करदी कि टोडरमल आपकी बराबरी करता है। इस पर अकबर ने उसको बुलाया और कारण पूछा तो उसने कहा कि पाच पहाडो का मैं जमीदार हू और उसकी उपज आधी मेरी तथा आपकी है। इस पर अकबर प्रसन्न हुआ और उसने टोडरमल को जागीर दी तथा सेना मे ऊचा पद दिया।[2]

एक और बात 'लाली' की है जो रायभान मेव के पुत्र जोधसिंह की स्त्री थी। उसने पुत्र–जन्म पर छठी के दिन अजानगढ मे 'अलख का कूआ' पूजने की जिद की, जहा बादशाह के भेजे गए शासक अहलादासिंह नामक चौहान की सेना ने डेरा डाल रखा था।[3] सिपाहियो द्वारा मजाक करने पर मेवो और बादशाही फौज मे युद्ध

---

१ बूदी गजेटियर (१९६४) पृ ३०–३१
२ आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, जि २०, पृ २९-३० (१८८२-८३)–कनिंघम
३ आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, जि २०, पृ २९-३० (१८८२-८३)–कनिंघम

हुआ और घटना के प्रमुख नायक जोधसिंह तथा अलहादसिंह दोनों अनेक साथियो सहित मारे गए। लाली अपने पति के साथ सती हो गई। यह घटना मेवो के साहस और शौर्य की साक्षी भरती है।[1]

जनरल कनिंघम ने लिखा है कि 'मुसलमान राज्य की प्रारम्भिक सदियो मे मेवो का बडी निर्दयतापूर्वक सहार किया गया। पशुओ की तरह उनका पीछा करके हजारो की सख्या मे उन्हे मौत के घाट उतारा गया। ६५८ हि मे नासिरुद्दीन के मत्री उलूगखा ने 'काहपायह' अर्थात् मेवात की पहाडियो पर हमला किया। मेवो को हिन्दू, बदमाश, चोर, धाडवी आदि कहा गया और ऐसा मानकर तलवार के घाट उतारा गया। हर सिर के लिए एक चादी का टका दिया जाता तथा एक जीवित कैदी के लिए दो। उन्हे हाथी के पैरो तले कुचलाया गया, दो टुकडे किए गए, सिर से पाव तक एक सौ से ऊपर लोगो की चाबुको से चमडी उधेडी गई। मुसलमान इतिहासकारो ने भी लिखा है कि ऐसी निर्दयता किसी ने कभी भी नही सुनी होगी।'

मुसलमान शासको की यह परम्परा मुगलकाल मे न्यूनाधिक मात्रा मे रही होगी, यह आभास कराने के लिए अकबर के नाम से एक कहावत प्रचलित है जिसमे मेवासियो से व्यवहार करने का निर्देश है—'पहले लात पीछे बात'। इससे स्पष्ट है कि मेवो के साथ सदियो तक ऐसा ही वर्ताव होता रहा।

---

१ इस घटना से सबधित निम्नलिखित दोहे कहे जाते हैं—

सुसर बसै पहाड में, और बाप बसै पाली।
कूओ पूजू अलख को, तो नावजाद लाली॥
रायभान के जोधसिंह, जागी तेरी तेग।
कूआ पुजादे अलख का, नातर फिर ना चढियो सेज॥
मू छडिया फर-फर करै, हसै बतीसू दत।
अब घो घापीयो नही, मेरो बडो जुझारू कत॥

अकबर ने मेवो को शात करने के लिए करीव एक हजार मेवो को डाक विभाग मे नियुक्त किया था जिन्हे 'डाक मेवराह' कहा जाता था। प्रारभिक मुस्लिम शासको द्वारा उन्हे अपने अनुकूल वनाने के लिए धर्म-परिवर्तन की जो नीति अपनाई गई थी उसे मुगल शासको ने भी शायद अपनाए रखा जिससे अधिक से अधिक सख्या मे मेव लोग मुसलमान वनते गये और इसी कारण मुसलमान वादशाहो के प्रति उनकी समानधर्मा सहानुभूति उत्पन्न हुई होगी।

क्यारा का मेवाळ राज्य—

अलवर जिले की थानागाजी तहसील के 'क्यारा' नामक गाव मे, जो प्रतापगढ से भानगढ जाने वाली सडक के वाई ओर स्थित है, कभी 'मेवाळ' गोत्रीय मीणो का राज्य था। यहा मुगल वादशाह अकवर के समय मे मोकलसी नामक मेवाळ मीणा राजा था। कहते हैं शाही सेना ने उसे हराकर क्यारा नगर को उजाड दिया। तभी से उधर किसी का विशेष अनिष्ट हो जाने पर 'क्यारा पूरा हो गया' कहावत प्रसिद्ध हो गई है।[१] अब इस मेवाळ नगरी मे एक शिखर मन्दिर के खण्डहर ही दिखाई देते है और शेष सब कुछ नष्ट हो गया है।[२]

'क्यारा' के सरपच श्री रामनाथ मीणा ने, जो स्वय 'मेवाळ' गोत्रीय है, क्यारा की उपर्युक्त घटना की विस्तृत जानकारी देते हुए बताया है कि राजा अक्षयपाल के पुत्र लोहपाल के दो बेटे मोकलसी

---

१ 'क्यारो पीग्यो' नामक कहावत शेखावाटी क्षेत्र मे भी प्रचलित है जिसका सम्बन्ध भी इसी घटना से होना चाहिए। अन्य कथानक उसके साथ जोडे हुए प्रतीत होते हैं।

२ अलवर राज्य का इतिहास–पृ १४–पिनाकीलाल

तथा करणसी नामक थे। मोकलसी ने क्यारा मे राज्य किया तथा करणसी ने राजोरगढ के पहाड पर काखवाडी नामक किला बनवाया। ये लोग ढूढाड मे कूकस से उठ कर ऍटली (भानगढ) होते हुए क्यारा मे आए। १५७२ सवत् मे उन्होने नया क्यारा आबाद किया और इसके उजडने के बाद १२ गावो मे जा बसे। क्यारा गूजरो से छीना हुआ बताते है। राजोरगढ भी पहिले मेवाल मीणो का था, जिसे 'पौ का खेडा' कहते थे। नडंढ के राव बादा ने, जो मेवालो का सगा था, धोखा देकर क्यारा को उजाडने का कुकृत्य किया बताते हैं। बादशाह की सेना ११ वर्षों तक मुकाबला करने पर भी जो काम नहीं कर पाई वह मीणा समाज के ही घरभेदी द्वारा सम्पन्न हुआ।

जिस प्रकार अकबर ने राव का खिताब देकर मीणा मुखिया को सम्मानित किया उसी प्रकार बाद के मुगल सम्राटो ने भी मीणो को शात करने के लिए उपाय किये होंगे। बादशाह शाहजहा के मन्सबदारो की सूची मे 'ख्वाजह मीना' नामक एक छै सौ जात, तीस सवार के अधिकारी का उल्लेख आता है, जो शायद कोई मीणा ही रहा होगा।[1]

औरगजेब ने मेवात के मेवो को सुदूर खानदेश मे गढो तथा पहाडी नाको की रक्षा के लिए नियुक्त किया जहा उनके लगभग ५० पहाडी गाव हैं। ये लोग वाणी के कठोर तो हैं पर दृढ़, ईमानदार और वीर हैं।[2]

मुगल सत्ता के तिरोहित होते समय मीणे पुन प्रबल हो उठे थे और मेवात तथा मेरवाडे मे उन्होने स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए संघर्ष

१. वीरविनोद, पृ ३७८—श्यामलदास
२ एपिग्राफिया इण्डिका—४ पृ. ३३८
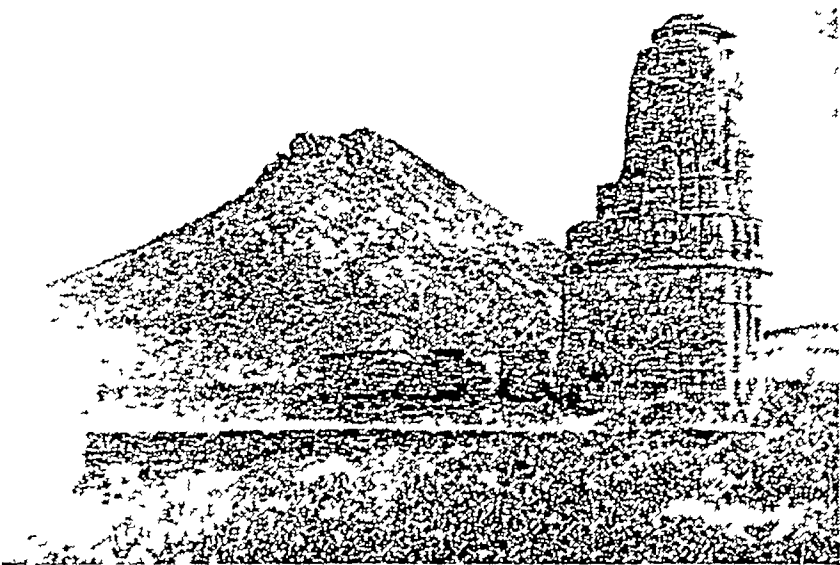
क्यारा (थानागाजी अलवर) मे मेवाळ राजाओ द्वारा निर्मित एक शिव-मन्दिर जो प्राचीन नगर के खण्डहरो के बीच स्थित है ।
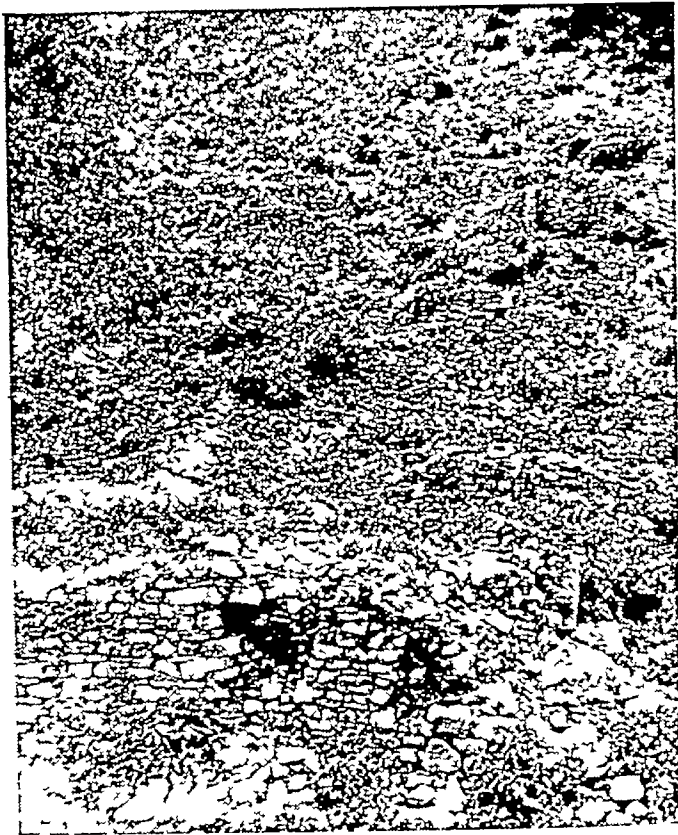
राव बादाजी ब्याडवाळ के नडैंढ स्थित प्राचीन स्थान की रक्षा—प्राकार जो अब पत्थरो का ढेर मात्र रह गई है ।

प्रारभ कर दिया था। इसी समय जोधपुर के राठोड वीर दुर्गादास तथा महाराजा अजीतसिंह ने बूदी के हाडो की मदद से मेवाड़ को लूटा।[1]

विद्रोही राजपूत सरदार भी मीणो की मदद से उत्पात मचाते थे। सन् १८०९ मे जयपुर के महाराजा जगतसिंह के समय जयपुर राज-परिवार के ईश्रोसिंह (?) ने मीणो की मदद से लूटमार मचानी प्रारभ की थी, जिसे हाथी के पैरो तले कुचला गया।[2]

अग्रेज विद्वान 'रनेल' ने मेवातियो को उत्तरी भारत के शासको द्वारा पडोसी राज्यो मे उपद्रव हेतु नौकर रखे जाने की वात कही है।[3]

मेरवाडे के मेरो का काठात खानदान भी औरगजेब के समय मुसलमान धर्म मे दीक्षित हुआ वताते हैं। मेरवाडे के मेर सदैव एक राजनैतिक शक्ति के रूप मे माने जाते रहे हैं। पर सगठन के अभाव मे वे सदा पडोसी राजपूतो के हाथो मे खेलते रहे। फिर भी मेरवाडा ही एक ऐसा स्थान है जहा मीणो की राज्य-सत्ता को स्वीकार कर उसे कायम रखा गया, अन्यथा शेष सभी स्थानो पर उन्हे कुचल कर साधारण जन मे मिला दिया गया। कुल मिला कर मुगल काल मे मीणो का दमन किया जाने के कारण वे अपेक्षाकृत रूप से शात ही बने रहे।

अध्याय ८

मराठा काल

कर्नल टॉड ने लिखा है कि मेर (मीरो) मुगलो के शासन काल मे एक बार सिर नवा कर फिर सिर उठाते ही चले गए। यहा तक कि जब मराठा जाति इस प्रदेश मे आई तब से मेर लोगो ने फिर से शक्ति-सचय करके अपने शासक राजपूतो के सग अत्याचार-उपद्रव करना प्रारभ कर दिया। टॉड ने यह भी लिखा है कि यह राजपूतो के लिए शर्म की बात थी कि वे इन क्षीणबल ? पहाडी लोगो से डरते थे। टॉड की इस उक्ति मे अग्रेजो का दर्प बोल रहा है क्योकि उन्होने मेरो को परास्त कर, जागीरें, जमीनें तथा नौकरिया आदि देकर शात कर दिया था।

सन् १७६१ मे पानीपत मे मराठो की हार के कारण मीणो ने सिर उठाया। इन मेवाती मीणो को मराठो ने 'मेवासी' कहा है।[1] इसी प्रकार वडनगर (गुजरात) के कमाविसदार केशव वीसजी ने वडोदा राज्य को सूचित किया था कि पालनपुर का नवाव और मेवासी उठ खड़े हुए हैं तथा वीसनगर की शाति भग हो गई है।[2]

सन् १७७८-७९ के बीच सियाजीराव प्रथम तथा फतेह-सिह के शासन मे, विशेषकर गुजरात मे, मराठा शासको के लिए मेवासी मीणे अशाति के कारण बने रहे।

---

१. वडोदा स्टेट रेकार्ड्स्-१-पृ० ८४
२. सिलेक्सन्स फ्रोम वडोदा रेकार्ड्स

इन सकट के दिनो मे मेवासी लोगो ने भी अपनी परपरा के अनुकूल ही किसी न किसी दल के साथ साठ-गाठ आरम्भ की। केसरखा राठौड ने २४-१-१७९७ को फतेहसिह राव को सूचित किया कि अग्रेजो ने कई इलाको पर अधिकार कर लिया है और तिलकवाड पर भी अधिकार करने वाले हैं तथा राजपीपला के राजा सहित सभी मेवासियो ने उनका साथ दिया है।[1] धीरे-धीरे मेवासियो के आक्रमण अधिक भयकर तथा बहुसख्यक होने लगे। सोनगढ से खाडोजी बाबूराव ने मानजी राव को ३०-५-१७९२ को लिखा कि मेवासियो के हमले अमूमन होने लग गए है। सखेड के गणपतराव गायकवाड द्वारा गोविदराव गायकवाड को २२-१०-१७९७ को लिखे गए एक पत्र से ज्ञात होता है कि उनकी सख्या कभी-कभी काफी अधिक हो जाती थी। उसमे ४०० मेवासियो द्वारा तिलकवाड को लूट लेने की बात लिखी है।[2]

इन तथ्यो से यह प्रकट होता है कि मेवासियो ने राजपूताना मे अपनी धरती से उठ कर गुजरात की अधिक उपजाऊ धरती की ओर रुख किया था। यहा भी इन्होने शासको की शक्ति का परीक्षण किया तथा विद्रोह करना प्रारभ कर दिया। मराठो ने इनके साथ भी वही चाल खेली जो उन्होने भील, गिरासिया आदि लोगो के साथ अन्यत्र खेली थी। पर इसके बावजूद मीणा लोग अपनी स्वच्छद प्रकृति का प्रदर्शन करते रहे और उपद्रव तथा लूट-मार से बाज नही आए।[3]

---

१ सिलेक्सन्स फ्रोम बडोदा रेकार्ड्स २-२१६

२ वडोदा स्टेट रेकार्ड्स—३-४३१-३२

३ न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी—२-पृ० ४०६

राजपूताने मे भी बूदी के पहाडो मे रहने वाले मीणो ने मराठा फौजो को तग करना प्रारभ किया। उन्होंने पशुओ के लिए चारा तथा फौज के लिए रसद एकत्र करने वाले लोगो को लूटना शुरु कर दिया।[1] सन् १८०९ मे मराठा फौज के कैप्टेन ब्राउटन ने मीणो के अत्याचारो का आखो देखा हाल अपने पत्रो मे लिखा है। वे लिखते हैं कि मीणो के डर से मराठा सेना को सदैव तत्पर और सतर्क रहना पडता है तथा प्रतिशोध के लिए भयकरतम कृत्य करने के लिए उतारू पहाडी मीणो से सारी सेना भयग्रस्त रहती है।[2]

इस स्थिति का परिणाम यह हुआ कि पशुओ के लिए थोडा सा चारा भी मिलना मुश्किल हो गया और महादाजी के सेनानायको मे ऐसा असतोष व्याप्त हुआ कि वे अपने पशुओ को लेकर सीधे देवली चले गए और महादाजी को कहला भेजा कि जब तक मीणो को काबू मे नही किया जाता वे देवली से नही हिलेंगे। इस स्थिति से बचने के लिए महादाजी ने सुरसा गाव के मीणा मुखिया से मिल कर समझौता किया जिसके अनुसार ५०० मीणे मराठा फौज मे भर्ती किए गए और वहा एक पृथक् मीणा टुकडी का गठन किया गया। इन लोगो का कार्य यही था कि ये जगलो मे चारा-दाना आदि एकत्र करने वाले मराठा दलो की रक्षा करें। यह चाल मराठो की आजमाई हुई चाल थी जिसके अनुसार लूटमार करने वाले दलो को ही गावो की चौकीदारी सौंप दी जाती थी। आमेर के कछावा राजाओ ने भी इसी युक्ति को काम मे लेकर मीणो को

---

१ लेटर्स रिटन इन ए मराठा कैम्प—पृ० १३७—३८—ब्राउटन
२. ,, — १६५—६६ ,,

गढो, महलो तथा कोषागार तक की चौकीदारी सौप दी थी। सेखावाटी क्षेत्र मे चौकीदार मीणो के पीछे भी यही स्थिति रही है।

महादाजी ने स्वच्छद प्रकृति वाले मीणो को सेना मे भर्ती कर दूरदर्शिता का परिचय नही दिया, पर वह ऐसा करने मे विवश था क्योकि उसके सरदारो ने प्रच्छन्न रूप से बगावत हो कर दी थी। दूसरे, महादाजी अपने वचन पर टिका भी नही रह सका। भर्ती किए गए मीणो को जो रुपया देना तय हुआ था वह नहीं दिया गया। फलत मीणो ने महादाजी को स्पष्ट कह दिया कि उसने रुपए शीघ्र नही दिए तो वे लोग छोडकर चले जायेंगे और अपने तरीके से रुपया वसूल कर लेंगे।[१] महादाजी ने इस चुनौती को सुनी-अनसुनी कर दिया जिससे मीणे सेना छोड कर चल दिए और पूर्ववत् उपद्रव करने लगे। ये लोग असहाय सेनाओ पर भी दिन व रात दोनो मे ही टूट पडते थे। बैप्टिस्टे नामक पुर्तगाली कमाण्डर, जो मराठा फौज मे था, एक बार बुरी तरह मीणो से घिर गया और उसके हथियार छीन लिए जाते यदि कोटा के जालिमसिंह द्वारा बीच-बचाव कर मराठा फौज को रास्ता नही दिलाया जाता।[२]

महादाजी ने दुर्दमनीय मीणो के इस व्यवहार का तथा मीणो द्वारा दी गई तकलीफो का बदला लेने के लिए दो हजार मराठा घुडसवारो का एक दल गठित किया और शिविर के पास ही दो मीणा गावो को लूटने का आदेश दिया। मराठा राज्य के उत्तराधिकारी राजा देशट्ठख ने स्वय इस आक्रमण की सरदारगी की। इस आक्रमण से मीणो की क्षणिक चुप्पी और मराठा सैन्य-

---

१ न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी–२–४०८

२ लेटर्स-रिटन इन ए मराठा कैम्प–पृ–२६४–ब्राउटन

शक्ति के थोथे प्रदर्शन के अलावा कुछ परिणाम नही निकला क्योकि मीणो ने मराठो को तब तक तग करना जारी रखा जब तक १८५८ ई० के आस पास अग्रेजो ने मराठो को समाप्त नहीं कर डाला। यह स्पष्ट है कि मराठो का ऐसा कोई भी राजनीतिज्ञ नही था जो मीणो की इस प्रबल शक्ति का दमन कर सकता, जिसके कारण सारी मराठा सेना सदैव भयत्रस्त रहती थी।

मेवात मे भी मराठो ने मेवो पर अत्याचार किए। उन्हे जिन्दा दीवालो मे चिनवाने की बात कही जाती है।[1] पर इन अत्याचारो का इच्छित प्रभाव पडा हो ऐसी बात नही है। स्वच्छदता उनके रक्त मे भरी थी और वे निरतर उसका प्रदर्शन करते रहे।

---

१ आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इडिया–जि० २०, पृ० ३०—कनिंघम

अध्याय ९

अंग्रेज काल

साम्राज्य बनते और बिगडते गए पर मीणो की परम्परागत वृत्ति मे कोई विशेष अन्तर नही आया। उनमे से जो जागीरो, जमीनो तथा नौकरियो के लोभ मे आ गए वे तो थोडा व्यवस्थित जीवन अवश्य बिताने लगे पर शेष सभी आयुधजीवी ही बने रहे। अधिकाश सख्या ऐसे ही लोगो की थी। सुदृढ़ मुगल शासन मे उनकी इस लूट-मार की वृत्ति को अधिक प्रोत्साहन नही मिल पाया था, पर मुगल सत्ता के पतन के साथ ही उनके हौसले पुन बुलन्द हो गए और उन्होने पूर्ववत् अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया। मराठो को किस प्रकार उन्होने नाको चने चबाए इसका हाल हम पढ चुके हैं। मराठो के बाद अग्रेजो ने जिस प्रकार रजवाडो को अपनी नीति से दबा दिया उसी प्रकार मीणो का भी शमन करने मे सफलता प्राप्त की। फिर भी यह कार्य उनके लिए भी इतना सरल नही था। उनके द्वारा सही गई उन तकलीफो के कुछ विवरण हमे प्राप्त हैं जिनका उल्लेख यहा किया जा रहा है।

दिल्ली के तत्कालीन (सन् १८७२) अग्रेजी राज्य मे स्थित शाहजहापुर के मीणो की चतुराई, दिलेरी, अनुशासन तथा लूट-मार की आदतो से तग आकर ब्रिटिश शासको ने मीणो के उस क्षेत्र को प्रशासकीय दृष्टि से पृथक् किया और 'सुपरिण्टेण्डेण्ट ऑफ मीणा डिस्ट्रिक्ट्स' नाम से एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति की। मेवाड, बूदी व जयपुर के महाराजाओ तथा सावर दरबार से प्राप्त फौजो की सहायता से उक्त अधिकारी ने मीणो को कुचलने का काम जारी

रखा। इसका परिणाम यह हुआ कि मीणो ने तग आकर खेती प्रारम्भ कर दी और कुछ लोग मीणा रेजीमेन्ट' नामक अ ग्रे जी फौज मे भर्ती हो गए।[1]

सन् १८०७ ई. मे भी दिल्ली के अंग्रेज रेजिडेंट मिस्टर 'सेटोन' द्वारा मेवाती मुखियाओ के साथ एक समझौता किया गया था जिससे उनकी लूट-मार तथा उपद्रव की प्रवृत्तियो पर थोडी रोक लगी। पर दण्डात्मक उपायो का उन पर कभी अनुकूल असर नही हुआ।[2]

इतना ही नहीं १८०७ ई तक अंग्रेजी जिलो के लोग मेवातियो से इतने भयग्रस्त थे कि रेवाडी की फौजी छावनी के सिपाही भी बिना किसी सहायक दल के बाहर निकलने का साहस नही करते थे। मेवातियों ने रेवाडी के किले तक पर आक्रमण किया था, यद्यपि वह उस छावनी से केवल तीन ही मील पर था, जहा भारी सख्या मे फौजो का पडाव था।[3]

सन् १८५७ के विद्रोह मे भी मीणो ने अग्रेजो को उखाडने के प्रयत्न किए थे। मीणे लोग राजपूतो की अपेक्षा अ ग्रेजो से अधिक घृणा करते थे इसका सबूत १८५४ ई की उस घटना मे प्राप्त है जिसमे लुहारी (मेवाड) के मीणो ने बूदी, टोंक तथा जयपुर के मीणा बन्धुओ की मदद से मेवाडी सेना का मुकाबला किया था। कविराजा श्यामलदास ने लिखा है कि उन्होने स्वय लुहारी के गोकुल तथा गाडोली के भुवना पटेल को पूछा था कि उन्होंने राजपूतो को कैसे मारा। इस

१. इण्डियन एण्टीक्वेरी–जि ३–पृ ८५–८७–फ्रैण्ड ऑफ इण्डिया (१८७२ ई)
२. आर्क्योलोजिकल सर्वे–जि २०–पृ ३०–कनिंघम
३. इण्डिया गजेटियर–जि. १, पृ ९९–एडवर्ड थोर्नटन

पर वे बोले कि काली अगरखी होने से लीलियो (अग्रेजो) के धोखे मे मार डाला ।[१]

जहाजपुर के मीणो को शात करने मे अशक्त होकर मेवाड के महाराणा ने १८५४ ई मे गवर्नर जनरल सर हेनरी लॉरेन्स से उनके उदयपुर आगमन के समय शिकायत की थी ।[२]

कविराजा ने लिखा है कि सवत् १६१५ की साढ सुदी ८ (१८५८ ई) को बागियो की एक फौज बू दी की तरफ आई जिसे देख कर रावराजा ने दरवाजे बन्द कर लिये और तोपो के फायर किए जिससे डर कर बागी चले गये । उन्ही दिनो खैराड के मीणो न उपद्रव प्रारम्भ किया जिन्हे खूब सजा देकर सीधा किया ।[३]

सन् १८५५ मे खैराड के मीणो का बदोबस्त करने के लिए एक अग्रेजी छावनी डालने की जरूरत समझी गई । जयपुर, अजमेर, बू दी और मेवाड की सरहदो के सगम पर देवली मे वह छावनी डाली गई और मीणो की निगरानी के लिए रियासती थाने भी तैनात किए गए ।[४]

अजमेर के अग्रेज सुपरिन्टेण्डेण्ट मिस्टर वाल्टर ने झाक, शामगढ, लुलुआ आदि गावो के मेर मुखियाओ के साथ समझौता किया, जिसमे उनके द्वारा लूटमार न करने की शर्त रखी गई थी, पर उस शर्तनामे को परवाह नही करते हुए मेरो ने उपद्रव जारी रखे और

---

१ वीरविनोद–पृ १६५५–श्यामलदास
२. वीरविनोद, पृ १६५२—श्यामलदास
३ वीरविनोद, पृ. १२०—श्यामलदास
४. वीरविनोद, पृ १६५५—श्यामलदास

सन् १८१९ ई मे नसीराबाद की छावनी से फौजो ने आकर उन पर हमले किये जिनमे मेर परास्त हुए और कुछ लोग पास के घने जगलो मे चले गए।[1] नवम्बर १८२१ मे उपद्रव ने फिर जोर पकडा और मेरो ने अग्रेजी थाने लूट लिए और पुलिस अधिकारियो को मार डाला। तीन महीनो तक मेरो के गावो का दमन ब्रिटिश तथा रियासती फौजो द्वारा चलता रहा और जनवरी १८२१ मे स्थिति काबू मे आई।[2]

तत्कालीन कैप्टेन टॉड ने महाराणा के नाम पर मेरवाडा के मेवाड अधिकृत भाग का शासन सभाला और टॉडगढ का किला बना कर वहा ६०० बन्दूकधारियो की फौज खडी की। उदयपुर के महाराणा ने १८२३ ई. मे मेरवाडा के ७६ गाव १० वर्ष के लिए बन्दोबस्त किये जाने के लिए अग्रेज सरकार को सौंपे और उसके खर्च के लिए १५,०००) वार्षिक देना स्वीकार किया। १८२४ ई मे मिस्टर वाइल्डर ने ऐसा ही समझौता जोधपुर राज्य मे किया और १५,०००) वार्षिक व्यय उनसे लिया। इन शर्तनामो की अवधिया बढाई जाती रही और मेरवाडा को अग्रेजो ने अपने आधिपत्य मे ही बनाये रखा।

कर्नल हॉल नामक अग्रेज अधिकारी ने मेरो के दीवानी और फौजदारी मामलो का निपटारा उन्ही के पचो द्वारा सलटवाने की नीति अपनायी। उसके बाद कर्नल डिक्सन ने भी सन् १८४२ ई. तक मेरवाडा के मेरो को शान्तिप्रिय बनाने के लिए जी-तोड प्रयत्न किये। इसका परिणाम यह हुआ कि १८५७ ई मे मेरो

---

१ अजमेर मेरवाडा सेटलमेट रिपोर्ट, पृ. २५ (१८७५ ई)—टाउचे
२ वही

ने अग्रेजो के बीबी-बच्चो को शरण देकर बागियो द्वारा मारे जाने से बचाया।

मेरवाडा के मेर इस प्रकार खेती आदि धन्धो तथा नौकरियो मे लगा दिये जाने के कारण पहाडियो पर और जगलो मे बने अपने मेवासे छोडकर खुले मे बस गये। कई मुसलमान बने हुए चौहान मीणो को उनके गावो के इस्तमुरारदार कायम किया गया। राजावसी, नानसर, केकडी और अजयसर के चौहान मीणे उनमे से हैं।[1]

सन् १८५७ ई मे मेवात के मेवो ने अग्रेजो के विरुद्ध बगावत की थी। जयपुर के महाराजा रामसिंह ने दिल्ली की ओर कूच करते हुए मेवातियो के गावो को दण्डित किया और उनमे छिपाये हुए तीस यूरोपियनो को मुक्त करवाया। इस सेवा के उपलक्ष्य मे उन्हे अग्रेज सरकार की ओर से कोटकासिम का अग्रेजी जिला इनाम स्वरूप दिया गया।[2]

राजू रावत, जिसने १२ वर्षों तक अग्रेजो का मुकाबला करने के बाद फासी पर चढकर मृत्यु प्राप्त की, मेरवाडा मे गीतो का नायक बना हुआ है।

अग्रेजो ने उच्चपदस्थ मीणो को पदविया भी दी। साम्राज्ञी विक्टोरिया के राज्यारोहण के अवसर पर निम्नलिखित व्यक्तियो को पदविया दी गयी—

१ बरार के रावत भारमल को राव का खिताब दिया गया।

---

१ अजमेर सेटलमेट रिपोर्ट, १८७५ ई पृ ४६–४७

२ नोट्स ऑन जयपुर, पृ १२ (१९१६ ई.)–लेखक आर. ए. ई. बेन

२. ककरा के रावत उमा को राव का खिताब दिया गया।

३ दवेर के ठाकुर हीरा को ठाकुर रावत का खिताब दिया गया।

४ हयून के बुद्धाखा तथा चाग के फतहखा को खान के खिताब दिए गए।[1]

इस प्रकार साम–दाम–दण्ड–भेद की अग्रेजी नीति मे अन्य रजवाडो की तरह मीणे भी शात कर दिये गये और जो बाज नही आये उन्हे अपराधी जातियो मे सम्मिलित कर कठोर कानूनो मे सत्रस्त कर दिया।

---

१ वीरविनोद, पृ २१८४—श्यामलदास

अध्याय १०

मीणा समाज और संस्कृति

मीणा जाति मूल रूप मे आदिम जनजाति है । शोषित और पीड़ित जातियो का अध्ययन करने वाले विद्वन्मण्डलो ने भी इसे अनुसूचित जनजाति माना है, जो उपयुक्त है। आदिकाल से ही इनका इतिहास इसका साक्षी है कि ये लोग बीहड जगलो तथा पर्वतो मे रह कर आत्मरक्षा करते हुए अपना जीविकोपार्जन करते आये है । कुल-परम्परा का निर्वाह करते हुए इन्होने अपने छोटे-छोटे राज्यो की स्थापना की और उन्हे सघवद्ध कर व्यवस्थित भी किया । तत्कालीन भारतीय राजनीति मे मत्स्यभूमि के मीणो का सघ एक प्रबल और मान्य शक्ति के रूप मे गिना जाता रहा था । फिर भी प्राय स्वेच्छाचारी और आयुधजीवी होने के कारण इनकी सस्कृति अधिक विकसित नहीं हो पाई। यह बात इनके ऐतिहासिक इतिवृत्त से स्पष्ट हो जाती है । वास्तव मे अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए किये जाने वाले सघर्ष और उसके निमित्त अपने आपको सनद्ध करने मे मीणो को इतना अधिक श्रम व समय लगाना पडा कि जीवन के अन्य उच्च लक्ष्यो के प्रति इनका ध्यान आकर्षित नही हो सका । लेकिन महाभारतकालीन मत्स्यराज विराट के जिस वैभव का वर्णन किया गया है उसे देखते हुए यह भी मानना पडता है कि किसी समय इनकी सभ्यता और सस्कृति उच्चस्तरीय थी । हो सकता है कि राजवर्गीय अल्पसख्यक मीणे सम्पन्न और सुसस्कृत हुए हो तथा बहुसख्यक आदिवासी अपने तौर-तरीको को ही अपनाए रहे हो । नागरिक जीवन से

दूर रहने तथा वनो-पर्वतो मे अभावो से घिरे रहने के कारण सभवत ये सास्कृतिक दृष्टि से पिछड़े रहे हो ।

यहा हम मीणा समाज और सस्कृति के विशिष्ट पक्षो की कुछ स्थूल चर्चा करना चाहेगे ।

आकृति तथा गठन

मीणा स्त्री-पुरुषो का कद लम्बा, गठीला, नाक प्राय तीखी और बड़ी, चेहरा गोल भरा हुआ, आखें लाल-मोटी और होठ मोटा होता है । इनके गठन से यह नहीं कहा जा सकता कि ये आर्येतर जाति के हैं। भील आदि जातियो से इनकी भिन्नता स्पष्ट है । कुछ इतिहासकारो ने इन्हे शक माना है । इनका रंग भी गोरा सावला होता है। काले रग के मीणे देखने मे नही आते । पहाडो और वनो मे रहने पर भी भीलो की तरह इनका रग काला नही है, यह इनके मूल स्रोत की भिन्नता प्रकट करता है ।

आवास

मीणो के घर प्राय पहाडियो पर अथवा घने जगलो मे आसानी से न पहुँच पाने वाले स्थानो पर होते थे । इन रक्षा-स्थानो को मीणो के 'मेवासे' कहा जाता था । इन्ही मेवासो के इर्द-गिर्द इनके कच्चे-पक्के मकान होते थे । ऐसे मकानो का समूह 'पाल' कहलाता था । प्रायः एक पाल मे एक ही गोत्र विशेष के लोग रहते थे । यदि दूसरे गोत्र के लोग रहते तो भी प्रधानता एक ही गोत्र की होती और उस पाल का नामकरण उसी गोत्र के नाम से होता । प्रारभ मे मीणो की ऐसी १२ पालें रही थीं, पर बाद मे वे अनेक हो गईं । आदिवासियो मे भीलों की भी ऐसी पाले होती हैं

जिनके पालपति को गमेती कहा जाता है। गमेती की आज्ञा के विना कोई भी पाल मे प्रवेश नही कर सकता। राजपुरुष को भी उसकी आज्ञा लेनी होती थी। आज वह स्थिति नहीं है।

मीणो के इन आदिम आवासो मे सुखसुविधा के अधिक साधन नही रहते होगे। पर जो लोग खेतिहर हो गए अथवा नौकरी आदि अन्य व्यवसायो मे चले गए उनके आवास समय और स्थिति के अनुकूल रहे होंगे। गावो मे बसे हुए आज के मीणा परिवारो के आवास अन्य ग्रामीणो की तरह ही हैं। शाहजहापुर के मीणो के विषय मे कहा जाता है कि उनके आवासो मे इस प्रकार के गुप्त रास्ते थे जिनसे वे वचकर निकल जाते। उनके साहसपूर्ण कार्यों के लिए सदैव सनद्ध रहने वाले पशुओ के लिए भी घर के एक भाग मे स्थान सुरक्षित था। प्राय हर घर से सटा हुआ पशुओ तथा ढोरो का बाडा होता था, क्योकि मीणो का पशुधन बडा विख्यात रहा है। मत्स्यराज विराट की एक लाख गायें महाभारत मे वर्णित है। मासा-हारी होने के करण भी इनका पशुपालक होना आवश्यक था। पशुओ मे गायें, भैसें, भेड-बकरी मुख्य हैं। खेती के लिए बैल तथा सवारी के लिए ऊट भी रखते हैं। प्राचीन समय मे घोडे भी रखे जाते थे।

वेष-भूषा

वनवासी होने के कारण मीणो को वेष-भूषा के लिए अधिक ध्यान देने की आवश्यकता नही थी। सिर पर पगडी, रूमाल, या केवल एक पोतिया, शरीर पर अगरखी या नगे वदन ही तथा नीचे घुटनो तक की एक धोती ही पर्याप्त थी। वनचर होने कारण उनके पैर स्वाभाविक रूप से काटो आदि के अभ्यस्त होकर कठोर बन जाते थे जिनसे उन्हे जूतो की परवाह नही होती थी। स्त्रिया घाघरा, कुरती-काचली और ओढनी धारण करती।

समय पडने पर घाघरे का 'काछडा' मार लिया जाता और ओढनी से कमर कस ली जाती। खेत मे अथवा युद्ध मे स्त्रिया इसी वाने मे काम करती और उनके मेहनतकश हाथो से हसिया और तीर एक ही वेग से चलते। युद्ध मे अपने पुरुषो को भोजन-पानी आदि देते रहने का कार्य मीणा स्त्रिया ने वडी खूबी से निभाया है।

सम्पन्न अवस्था मे मीणे मध्यकालीन सस्कृति के अनुकूल कानो मे मोती, हाथो-पैरो मे कडे, गले मे मुक्तामाल तथा वदन पर बागा, पायजामा आदि धारण करते थे। स्त्रिया भी सभी प्रकार के आभूषण पहनती थी। आज साधारण तौर पर स्त्री-पुरुष पैरो मे चादी के कडे पहिनते, स्त्रिया चादी के दूसरे आभूषण और लाख तथा हाथीदात की चूडिया पहिनतीं एव सिर पर बोर गु थाती हैं। ढूढाड की मीणा स्त्रिया नथ नही पहिनती बतायीं। शृ गार के लिए स्त्री-पुरुष गोदना भी करवाते हैं। पुरुष किसी देवता की छबि अथवा फूल आदि अपने हाथ पर एव स्त्रिया गाल, हाथ, पैर, ठोडी आदि पर बिंदिया, फूल, बिच्छू, पनिहारी आदि गुदवाती हैं। पति और पत्नी एक-दूसरे का नाम भी हाथो पर गुदवाते हैं।

सपन्न मीणे अपने कानो मे सोने की मुर्किया, गले मे बलेवडा तथा फूल-पत्ती, कमर मे कणकती, हाथो मे चादी के कडे और दायें पैर मे भी कडा धारण करते है जो एक सामाजिक प्रतिष्ठा की निशानी हैं। स्त्रिया हसली, सोने का तिमणिया, मोगरी, पू ची, वगडी, गजरा, बाजूबद, कणकती, कडला, टणका, नेवरी, आवळा आदि पनहती हैं।

✓जमीदार तथा चौकीदार मीणो मे वेश-भूषा का अतर लक्षित होता है। इसी प्रकार स्थान-भेद के कारण मेवाड, मारवाड

खैराड आदि के मीणो की पोशाको मे भिन्नता स्वाभाविक है । मेव और मेर मीणो के मुसलमानधर्मी होने के कारण उनमे दाढी रखने की प्रथा है । दाढिया हिंदू मीणे भी रखते है पर उनकी तथा मुसलमानी शैली की दाढियो मे भी अतर स्पष्ट है ।

चौकीदार मीणे साफे पर काला या लाल जाडिया बाधते हैं और हाथ मे लाठी रखते हैं । उनकी स्त्रिया लाल रग का घाघरा-लूगडा और काचली धारण करती हैं ।

मीणो की स्त्रिया यद्यपि खेतो मे काम करती हैं पर राजस्थान की रिवाज के अनुसार उनमे पर्दे की प्रथा है । चौकीदार मीणे राजपूतो की शैली पर पर्दे का पालन करते है । चौकीदार वर्ग की सपन्न मीणा स्त्रिया लूगडी पर एक सफेद चद्दर लपेट कर राजपूत स्त्रियो की तरह पर्दा करती हैं ।

खान-पान

यद्यपि मीणे मासाहारी हैं तथा शराव का भी खुल कर प्रयोग करते है पर दूसरे खान-पान मे अन्य ग्रामीणो से कोई अन्तर नहीं देखा जाता । भोजन मे देशी गेहू, जौ, मक्का, बाजरा तथा छाछ-दही प्रमुख होते है । खाने के बर्तन साधारणत पीतल तथा मिट्टी के ही होते हैं । कई मीणे खरगोश का मास नही खाते । मारवाड के मीणे पहिले गायभक्षी भी थे । पर अब काफी वर्षों से उनमे यह रिवाज नही है । मीणे प्राय हुक्के का प्रयोग करते हैं । आजकल बीडी का चलन भी है । अफीम केवल बूढे लोग ही लेते हैं । स्त्रिया भी कहीं-कही तम्बाकू पीती दिखाई देती हैं ।

धार्मिक मान्यतायें

मीणे मूल रूप मे शैव तथा शाक्त है । महादेव इनके इष्टदेव हैं । मीणो के बनवाये हुए अनेक शिव मदिर इनके प्राचीन

स्थानो मे देखने को मिलतें हैं । आज भी प्राय. मीणा लोग शिव की आराधना करते हैं । टोडा-बीलोत, मंगी-कूदा, बयारा, राजोर, खोह, आमेर, माची, नई आदि प्राचीन स्थानो पर मीणो के बनवाये शिव मदिर विद्यमान हैं। इनमे से कुछ ध्वस्त हो गये हैं और कुछ मे अन्य मूर्तियो की प्रतिष्ठा भी की गई है। वैसे अन्य हिन्दू-देवताओ के प्रति भी इनकी आस्था है। हनूमान, भैरव, शीतला आदि को भी ये लोग मानते हैं और राम-कृष्ण के अवतारो को पूजा भी करते है। हर मीणा गोत्र की एक अधिष्ठात्री देवी है। इनकी देवियो के पृथक्-पृथक् नाम हैं, जैसे—बाकी, ब्यावरण, दात, पपळाद, आसावरी, जीण, कालिका, चौथ, श्यावड, बणजारी, बडवासण, गुडवाय, पाली, विरासणी आदि। पर मीणो मे धार्मिक कट्टरता नही पाई जाती। धर्म के लिए किए गए युद्धो की बात इनके इतिहास मे नही देखी गई। पर जब शपथ ग्रहण कर लेते हैं तो प्राण देकर भी उसका निर्वाह करते हैं। खैराड के मीणे 'महादेव' की शपथ को सर्वोपरि मानते हैं। देवी के नवरात्र मे भैंसों तथा बकरो की बलि भी दी जाती है।

मनोरजन–उत्सव–मेले

मीणो की 'हथाई' ही पुरुषो का एकमात्र मनोरजन-स्थल है। यही बैठ कर वे गाव-गली तथा समाज की बातें करते हैं। पुराने जमाने मे यही युद्ध की, शाति की और राजनीति की चर्चायें भी होती थी। ऐसी ऐतिहासिक हथाइया आज भी देखने को मिलती हैं। हथाई का महत्व देखते हुए मीणा लोग किसी उपयुक्त स्थान पर हथाई के लिए पर्याप्त लम्बा-चौडा चबूतरा बनवाते थे। कहीं-कही पहाडी चट्टानो से भी हथाई का काम लिया जाता था। मैजोड तथा बूज (थानागाजी तहसील) मे प्राचीन समय की प्रसिद्ध हथाइयां बताई जाती हैं।

मीणे प्राय उत्पवप्रिय होते हैं। नाच-गाना इन्हे प्रिय है। अशिक्षा के कारण मीणा स्त्री-पुरुष शहरो मे मेलो के अवसरो पर असस्कृत गीत गाते तथा नाचते जाते हैं। ऐसे अवसरो पर ये मदिरा पीकर मतवाले हो जाते हैं। मेवात तथा ढूढाड मे श्रीमहावीरजी, करौली की कैलादेवी, चाकसू की शीतला, बरवाडा की चौथ माता घाटा-बैनाडा के कल्याणजी, लालसोट की पपळाद माता, नई के महादेवजी, नटाटा के पीपा भोमिया, टहला के पास नाराणी माता, गोनेर के जगदीशजी, सिकराय मे रामनवमी, आमेर मे लखेग्का, रायसर मे बाकी माता आदि के मेले मीणो मे प्रचलित हैं। सिरोही, जालोर, मेरवाडा आदि के मेलो का जिक्र हम यथास्थान कर आये हैं। मेवात मे डेहरा (अलवर) से ८ मील दूर पश्चिमोत्तर मे चूहडसिह का मेला लगता है। यह मेला मेव पुरुष तथा नाई मीणा जाति की स्त्री से उत्पन्न चूहडसिह नामक मन्न के नाम पर भरता है।

राजस्थान के प्रचलित त्यौहार तीज, गणगौर, दशहरा, होली, दीवाली आदि भी ये चाव से मनाते हैं। मेरवाडा के मेर होली के अवसर पर 'अहेर' (शिकार) क्रीडा भी करते थे। वैवाहिक तथा मृतक सस्कारो के अवसर पर मीणो के विरुदवाचक इनके पूर्वजो का यशगान भी करते हैं। ऐसे अवसरो पर ये लोग बडी उदारतापूर्वक याचको को अन्न-वस्त्र, सोना-चादी, पशु आदि का दान किया करते थे। इन अवसरो के अतिरिक्त भी मीणे विरुदो का श्रवण किया करते थे जिसे 'जयमाळ' कहा जाता था। जयमाळो के समय मद्य-पान भी होता था।

ढूढाड के बारह मेवासियो, पचवारा के पाच मेवासियो आदि के गीत, दोहे-वार्ते आदि बडे चाव से कही-सुनी जाती हैं।

राव मेदा मीणो का प्रसिद्ध वीर नायक हुआ है। बादाराव की प्रशस्तिया भी बडी प्रचलित है। मेवात मे टोडरमल-बादाराव, दरियाखा-शशिवदनी, लाली आदि की प्रसिद्ध लोकगाथायें गाई जाती है। ऐसी अनेक लोकगाथायें और भी है जो अभी लोकसाहित्य के सग्राहको की दृष्टि मे नही आ पाई है।

मीणो की उत्सवप्रिय प्रवृत्ति ने इन्हे अनेक बार कर्तव्य-विमुख कर शत्रुओ से परास्त होने को विवश कर दिया है। यह स्वभाव उनके आदिवासी समाज होने की एक निशानी है। उत्सव के समय ये लोग सब सुधि भुला कर एकरस हो जाते हैं और मद्य का सहयोग इन्हे और भी उन्मत्त बना देता है।

मेलो के अवसरो पर ये लोग अलगोजा, चग बासुरी आदि बजाते हैं और नये रगीन कपडो मे सजते हैं।

विवाहादि सस्कार

जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी सस्कारो मे विवाह तथा मृतक सस्कार ही प्रधान है। वैसे पुत्र–जन्म पर भी आनदोत्सव होते है। विवाह फेरो द्वारा पुरोहित ही कराते हैं। पर नाते की प्रथा भी प्रचलित है। अधिकतर मीणे अपने समाज मे ही विवाह करते हैं। पर अन्य जाति की स्त्रिया भी रख ली जाती हैं जिनसे उत्पन्न सतान आजकल मीणा समाज से पृथक् ही रखी जाती हैं। सुरेतवाळ मीणे इसी प्रकार के विवाहो से बने हैं। अनेक विद्वान कई गोत्र के मीणो की उत्पत्ति भी राजपूत पुरुषो तथा मीणी स्त्रियो के सगम से मानते हैं। पर मीणे अपने आपका राजपूत वशो से प्रकट होना मानते हैं। इस विषय मे विस्तार से चर्चा की जा चुकी है।

प्राय' छोटी अवस्था मे ही शादिया हो जाती है। कई बार तो गोद के बच्चे-बच्चियो को भी वैवाहिक बधन मे बाध दिया जाता

है। पुराने समय मे राजनैतिक तथा सामाजिक कारणो से ऐसा किया जाता था पर आज उस परम्परा का पालन अशिक्षा का परिणाम ही है। मेव, मेर आदि के रूप मे मुसलमान बने हुए मीणे भी फेरो के माध्यम से पुरोहितो द्वारा विवाह सम्पन्न करवाते थे, पर अब वे निकाह आदि अपनाने लगे है। मुसलमान तथा हिन्दू मीणो मे भी आपमी विवाह होते थे। मुमलमान मीणे की लडकी हिंदू घर मे जाने पर मृत्यु के बाद जलाई जाती थी जब कि हिन्दू मीणी मुसलमान मीणे की पत्नी बनने पर दफनाई जाती थी। इस प्रकार धर्म का प्रतिबध वैवाहिक सबधो मे बाधक नही हो पाता था। टोडरमल मेव के पुत्र दरियाखा तथा बादाराव मीणे की पुत्री शशिवदनी का वैवाहिक सबध ऐसे रिश्तो मे अतिम कहा जाता है। पर इसके कोई पुष्ट प्रमाण नही हैं। चौहान राजपूतो से बदल कर क्यामखानी बने मुसलमानो के सबध राजपूतो मे नही होते थे पर मीणो मे ऐसे सबध प्राय. होते थे। मेरवाडा के चीतो और बराडो मे धर्म भेद होते हुए भी विवाह सबध होते थे।

तलाक की प्रथा भी प्रचलित थी। पुरुष अपने दुपट्टे का टुकडा फाड कर स्त्री को दे देता जिसे लेकर तथा जल भरे दो घडे लेकर वह मन चाही दिशा मे चली जाती। जो उसके घडे उतार लेता वही उसका पति बन जाता। 'हण्डूकडी' नामक एक ऐसी ही प्रथा सवाई-माधोपुर जिले के मीणो मे बताई जाती थी जिसमे जल भरे घडे लेकर जाती हुई कुमारी के पीछे दौड कर घड़ा उतार लेने वालो मे सर्वप्रथम के साथ उसका विवाह कर दिया जाता था। यह स्वयवर के समान ही एक प्रथा है जो अवश्य ही आदिवासी जातियो की रीति से मिलती है।

नाते के समय स्त्री के पूर्व पति तथा पीहर वालो को कुछ रुपया देने की प्रथा भी है, जिन्हे क्रमश. खत या कागळी तथा मायस कहा जाता है ।

मीणो की एक विशिष्ट प्रथा यह है कि ये भी गूजरो की तरह दीपावली के दिन श्राद्ध-क्रिया करते है, जब कि अन्य हिन्दू आश्विन मे करते हैं। यह दिन और यह प्रथा मीणो के इतिहास मे अत्यत महत्वपूर्ण तथा अविस्मरणीय रहेगी। इस दिन ढूढाड का सर्वप्रथम मीणा राज्य 'खोह' आक्रामक राजपूतो द्वारा अवसर का लाभ उठाकर नि शस्त्र मीणो पर हमला करके हस्तगत किया गया। पितरो को तर्पण देने के निमित्त नि.शस्त्र होने की प्रथा अनेक अवसरो पर इनके लिए घातक सिद्ध हुई है ।

अधविश्वास

अन्य ग्रामीणो की तरह मीणो मे भी कई अधविश्वास घर किए हुए है। जादू-टोना, भूत-प्रेत, जतर-मतर आदि के प्रति इनकी श्रद्धा है। प्राचीन मीणो मे शकुन के प्रति काफी श्रद्धा थी। विना शकुन के ये लोग कहीं भी प्रवास नही करते थे। प्राय इतिहास-कारो तथा कवियो ने मीणो के शकुनो की बात जोर देकर कही है। प्राचीन समय मे 'दौड' करने वालो को अदृश्य को जानने की इच्छा स्वाभाविक रूप से होनी चाहिए थी। शकुनी का समाज मे उन दिनो भी वडा आदर होता था और आज भी है। हमारा प्राचीन कृषि-शास्त्र शकुनो की मान्यताओ पर बहुत कुछ आधारित था। शकुन वास्तव मे लवे अनुभव के निचोड रूप मे पीढियो से समाज मे परम्परागत रूप से चले आते रहे हैं, तथा भारतीय ज्योतिष का यह एक विशिष्ट अग ही वन गया है ।

मीणो के अधविश्वासो के कुछ और दिलचस्प उदाहरण बताये जाते हैं। एक कहावत मीणा समाज मे प्रचलित है—'मीणा माळवे जासी, कछावा हळ बासी'। कछावो द्वारा सत्ता हथिया लेने पर प्राचीनकाल मे मालवा के पठारो की तरफ चले जाने वाले मीणो को स्मृति की सूचक यह कहावत अशिक्षित समाज मे अन्ध-विश्वास बन गई है और लोग इसे भविष्यवाणी मान कर चलते है। ऐसी ही एक अन्ध मान्यता यह है कि कछावा जयसिह द्वारा मीणो की बुद्धि होम दी गई थी इसलिए मीणो मे कोई वुद्धिमान (पढा-लिखा) नही हो सकता। कहते हैं महाराजा जयसिह ने जब यज्ञ किया तो उस समय 'मीणे' का पुतला बना कर जलाया गया था। इन मान्यताओ मे कितना तथ्य है, कहा नही जा सकता। पर रियासती समय मे मीणो को उच्च शिक्षा की सुविधा नही थी।

मीणों के सत

मीणा समाज मे भी हर युग मे शूरवीर और सत होते आए है। सनो मे ऐसा एक उल्लेखनीय नाम 'घाटम ऋषि' का है जिसे 'घाटम चोर' कह कर भी वर्णन किया गया है। कहते हैं कि ये पहिले चोरी आदि का धन्धा करते थे, पर हृदय–परिवर्तन के कारण प्रभु–भजन मे लग गए। बालमीकि आदि भक्तो के हृदय–परिवर्तन की भी ऐसी ही भारतीय परम्परा रही है। 'भक्तमाल' मे 'घाटम' का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि एक दिन अपने धन्धे से ग्लानि होने के कारण वे दुखी होकर एक सत के पास गए जिन्होने उन्हे हरिभजन करने तथा आरती के समय मदिर मे जाकर दर्शन करने की राय दी। घाटमजी ने इस निश्चय का कडाई से पालन किया। एक दिन आरती का समय समीप आने पर मदिर की दूरी देख कर उन्होने राजा की घुडसाल से एक काला घोडा चुरा लिया तथा उस पर चढ कर आरती के समय जाकर भगवान के दर्शन किए। कहते हैं राजा के

सिपाही जब घोडे की तलाश मे आए तो उनके देखते-देखते घोडा काले से सफेद हो गया जिसे देखकर वे चमत्कृत हुए। उन्होने राजा को सारी घटना सुनाई तो राजा ने घाटम को बडा आदर दिया और उनके निवास के लिए आश्रम भी बनवा दिया जिसे 'घाटम घाट' कहा जाता है।[1] कहते है सेऊ-सम्मन नामक प्रसिद्ध भक्त कवि इनके पुत्र थे।

दादू पथी ब्रह्मदास चारण लिखित 'भगतमाळ मे 'घाटम का घोडा पलट किय अूजळ कारे' कह कर उपर्युक्त घटना का वर्णन किया गया है। इसमे घोडा चुराने का कारण गुरु-भेंट का उद्देश्य बताया गया है। इसमे घाटम की सत्यवादिता की सराहना की गई है।[2] आज भी मीणा समाज मे कई सत स्त्री-पुरुष है जिनकी समाज मे मान्यता है।

सती-प्रथा

प्राचीन समय मे राजपूतो की भाति मीणो मे भी कन्याओ को मारने तथा मृतक पति के साथ विधवाओ के सती होने की प्रथा थी। महाभारत काल मे विराट राजा के साले कीचक के परिवार की स्त्रियो के सती होने के वर्णन मिलते हैं। खोह के राजा आलणसिंह की रानी उनके साथ सती हुई बताते हैं। अन्य अनेक दृष्टात भी मिलते हैं। महाराजा जसवतसिंह द्वितीय के समय मे जोधपुर क्षेत्र मे एक मीणा स्त्री अपने पति की मृत्यु के बाद उसके साथ सती हुई थी जिसका एक डिंगल गीत भी चारण कवि अरजणदानजी सादू, गाव मिरगेसर, ने सहानुभूतिपूर्वक

---

१. भक्तमाल भाषा-पृ० २५२—कृष्णस्नेही

२. भक्तमाळ-पृ० ५३—स० उदयराज अूजळ

रचा है।[1] गीत का नायक बाली तहसील का जोधा नामक मीणा था तथा सती होने वाली मीणी का नाम 'फूलकी' था। जोधा की मृत्यु एक साड के मारने के कारण जोधपुर के अस्पताल मे हुई थी।

कौम मेणो जोधियो गाम पूनाडियो, ताडिये मारियो हाक ताही।
जणै री पीड पाटा करेवा जोधपुर, मेलियो उणी नै रेल माही ॥१॥
बात बीती परी, हरि रा हाथ री, किणी रौ दूनी मे जोर काही।
फूलकी नाव री उणे री भारज्या, धिनौधिन सती हुई इळा माही ॥२॥
पीर मे फूलकी सासरे फूलकी, सुरग मे फूलकी फूल बाई।
कापडा पति रा आवता जेज ह्वी, काठ चढता करी नह जेज काई ॥३॥
मोद माहे बधी घणा रग मैणकी, टैणकी ओढणी देह ताई।
सोना रा थाळ पणा मोटा घरे बाजिया, थाळको तुहाळी भली ठाई ॥४॥
जणै री जात मे एक धाबे सात ह्वै नातरा, जोवजो ठाकरा भूठ काही।
राज री बात मोटी घणी रावता, जात री बात रौ जोर नाही ॥५॥

यद्यपि चारण कवि ने सती की स्तुति तो की है पर राजपूतो की तुलना मे मीणी को हेय माना है जो शायद अन्य कारणो से प्रेरित होकर किया है।

मद्यपान की प्रथा

मीणे मद्य-पान के शौकीन रहे है। आज भी इनके समाज मे शराब का खुलकर प्रयोग किया जाता है। प्राय मीणे अपने घरो पर तथा जगलो मे शराब निकाल लिया करते थे। रियासतो के समय तक लुके-छिपे शराब निकाली जाती थी। राज्य की ओर से कडाई बरतने पर भी ये अपनी इस स्वतन्त्रता को छोडना नही

---

१ यह गीत लेखक के विद्वान मित्र श्री सोभागसिंघ सेखावत, राजस्थानी शोध-सस्थान, चौपासनी (जोधपुर) से प्राप्त हुआ है।

प्रायः अनभिज्ञ लोग समूचे मीणा समाज को इसी दृष्टि से देखते हैं। उन्हे पता नहीं कि आज बहुसख्यक मीणे कृषिकर्म, उद्योग-धन्धो तथा नौकरियो मे लगे हुए है। उनमे से अनेक उच्च राजकीय पदाधिकारी भी हैं। प्राचीन ढूढाड मे भी मीणे ऊचे पदो पर थे। राज्य के सर्वाधिक विश्वासभाजन होने का गौरव उन्हे प्राप्त था। मीणो की चारित्रिक दृढता के प्रमाण रूप मे एक घटना का उल्लेख किया जाता है जिसमे किले के पहरेदार मीणे ने बिना आज्ञा के फूल तोडने के तनिक से बाल अपराध पर कुपित होकर अपने लडके का सिर तलवार से काट डाला। एक बार मीणो के स्थान पर राजपूतो को किले मे रखे कोष की रक्षा का भार देने पर कई कीमती आभूषण गायब हो गये थे। राजपूतो की तुलना मे मीणो की ईमानदारी प्रमाणित होने पर पुन मीणो को ही कोष की रक्षा का भार दिया गया।

चौथ वसूल करने वाले मीणो के क्षेत्र मे यदि कोई चोरी हो भी जाती तो या तो चोरी का माल ढूढकर लौटा दिया जाता अन्यथा चोरी के माल का मूल्य चुका दिया जाता, जब कि अनेक प्रकार के उचित-अनुचित कर लेने वाले गावो के राजपूत शासको ने इस सम्बन्ध मे अपना दायित्व कभी नही निभाया।

मीणों की वास्तुकला

प्राचीन मीणो की वास्तुकला मे उनके दुर्ग और देवभवन ही मुख्य है। मीणो के दुर्गों मे दो से तीन तक एक पर एक रक्षा-प्राकार और भीतरी भाग मे एक साधारण जलाशय तथा निवास के लिए दो चार मामूली कमरे-कोठरिया आदि ही होते थे। वैसे मीणो द्वारा मूल रूप मे बनाये गये सभी दुर्गों का रूपान्तर विजेताओ द्वारा किया जा चुका है। अतः निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा
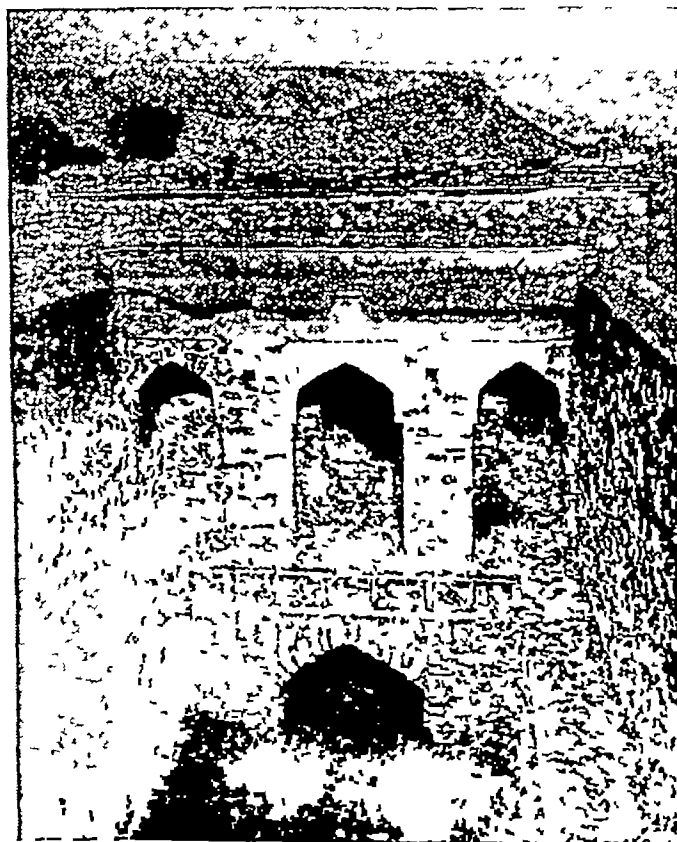
स्योगुण मीणो के प्रधान स्थान—बूज—की एक बावडी

मीणाकालीन देव मंदिरो के शिलाखण्ड जो भूगर्भ
से निकाले गए है (भाडारेज)

सकता। जयपुर मे कुतुलगढ़ तथा आमागढ़ आदि की बनावट को देखते हुए उपर्युक्त धारणा बनाई गई है। इन दुर्गों के बारे मे पुष्ट जनश्रुति के होते हुए भी कछावो के इतिहासकार इनके कछावा शासको द्वारा निर्मित होने का दावा करते है। मीणो के प्राचीन सुदृढ स्थानो पर पडे खण्डहरो को देखकर इस विषय का और अध्ययन अपेक्षित है।

मीणो के देवभवनो मे शिवमदिर ही प्रमुख हैं। सभी मीणाकालीन शिवमदिर शिखरबध शैली के बने हुए हैं जिनके गर्भगृह की छतें दसवीं-ग्यारहवी शताब्दी मे प्रचलित प्राचीन हिन्दू वास्तुकला के अनुसार एक पर एक तिरछे पत्थर रखकर बनाई गई है। गोद गुम्वदो का प्रचलन मुस्लिम प्रभाव के कारण बाद की सदियो मे अपनाया गया बताया जाता है। गर्भगृह मे कोई उठा हुआ पीठासन नही पाया जाता जिसका आशय है कि वहा शिवलिंग स्थापित हुआ होगा। गर्भगृह के बाहर चौकोर सभामडप के पहिले दोनो ताको मे शिवपरिवार की मूर्तिया स्थापित रहती हैं जिनमे दुर्गा तथा गणेश ही प्राय देखने मे आते हैं। गर्भगृह की पत्थर की चौखट पर दोनो ओर दो परिचारिकाये तथा नीचे के भाग मे दो सिंहमुख उत्कीर्ण रहते हैं। मदिर की बाहरी दीवालो पर विभिन्न कलात्मक मूर्तिया वनी होती है जिनमे पौराणिक प्रसग होते है। मेरो (मीणो) के स्थापत्य से प्रभावित सौराष्ट्र के शिखरबध मदिरो की बात विद्वानो ने कही है।

जनतान्त्रिक प्रणाली

मीणे स्वभाव से ही जनतन्त्रवादी रहे हैं। इनकी राज्यसत्ता कुल–परम्परा वाली तथा जनतन्त्रात्मक ही थी। एक बार जयपुर के किसी राजा ने विशेष अवसर पर मीणो को बुलाया, और एक

मीणाकालीन देव मदिरो के शिलाखण्ड जो भूगर्भ
से निकाले गए हैं (भाडारेज)

सकता। जयपुर मे कुतुलगढ तथा आमागढ आदि की बनावट को देखते हुए उपर्युक्त धारणा बनाई गई है। इन दुर्गों के बारे मे पुष्ट जनश्रुति के होते हुए भी कछावो के इतिहासकार इनके कछावा शासको द्वारा निर्मित होने का दावा करते हैं। मीणों के प्राचीन मुख्य स्थानो पर पडे खण्डहरो को देखकर इस विषय का और अध्ययन अपेक्षित है।

मीणो के देवभवनो मे शिवमदिर ही प्रमुख हैं। सभी मीणाकालीन शिवमदिर शिखरबध शैली के बने हुए हैं जिनके गर्भगृह की छतें दसवीं-ग्यारहवी शताब्दी मे प्रचलित प्राचीन हिन्दू वास्तुकला के अनुसार एक पर एक तिरछे पत्थर रखकर बनाई गई है। गोल गुम्बदो का प्रचलन मुस्लिम प्रभाव के कारण बाद की सदियो मे अपनाया गया बताया जाता है। गर्भगृह मे कोई उठा हुआ पीठासन नही पाया जाता जिसका आशय है कि वहा शिवलिंग स्थापित हुआ होगा। गर्भगृह के बाहर चौकोर सभामडप के पहिले दोनो ताको मे शिवपरिवार की मूर्तिया स्थापित रहती हैं जिनमे दुर्गा तथा गणेश ही प्राय देखने मे आते हैं। गर्भगृह की पत्थर की चौखट पर दोनो ओर दो परिचारिकायें तथा नीचे के भाग मे दो सिहमुख उत्कीर्ण रहते हैं। मदिर की बाहरी दीवालो पर विभिन्न कलात्मक मूर्तिया बनी होती है जिनमे पौराणिक प्रसग होते है। मेरो (मीणो) के स्थापत्य से प्रभावित सौराष्ट्र के शिखरबध मदिरो की बात विद्वानों ने कही है।

जनतान्त्रिक प्रणाली

मीणे स्वभाव से ही जनतन्त्रवादी रहे हैं। इनकी राज्यसत्ता कुल-परम्परा वाली तथा जनतन्त्रात्मक ही थी। एक बार जयपुर के किसी राजा ने विशेष अवसर पर मीणो को बुलाया और एक

पालकी उनके प्रतिनिधि के लिए भेजी। पर मीणो मे मे कोई भी पालकी मे नही बैठा और सभी ने अपनी-अपनी जूतिया पालकी मे रख दी। यह घटना जहा उनकी सगठन-शक्ति तथा जनतान्त्रिकता की द्योतक है वहीं देशकाल के अनुरूप निर्णय-भावना के अभाव की परिचायक भी है। मीणा समाज की सभी विशेषताओ तथा दुर्बलताओ की जानकारी के लिए उनके सामाजिक तथा सास्कृतिक सर्वेक्षण की अपेक्षा है।

चारित्रिक विशेषतायें

याचको को मुक्तहस्त से दान देने की प्रथा मीणा शासको तथा अन्य सम्पन्न व्यक्तियो ने निभाई है। राव मेदा द्वारा राठोडो के याचको को रथ मे बैठा कर स्वय उसे खीच ले जाने की वात कही जाती है। उन्होने अपनी रानी तक का दान कर दिया था जिससे याचक अत्यन्त प्रभावित हुए। पहाडो पर रस्सा बाधकर नाच दिखाने वाली काजरी को शाहजादी से छीनी हुई सवा लाख की पायल भेंट करने की बात भी सुनी जाती है। मऊ जाते हुए मारवाड के प्रवासियो को भोजन देने, नित्य अजलि भर मुद्राओ का दान करने आदि की अनेक गाथायें भी कही जाती हैं।

अतिथि-सत्कार की भावना भी इनमे बहुत सराहनीय रही है। भारतीय सस्कृति का यह विशिष्ट गुण इन आदिवासी जातियो की ही देन है। घर आने पर पिता के वैर तक को भुलाकर वे शत्रु का स्वागत करते थे।

वचन निभाने का गुण भी मीणो का अपना है। अपनी आन के लिए मर मिटने के अनेक दृष्टांत इनके इतिहास मे प्राप्य

हैं। सुरक्षा का वचन देने पर इन्होने यात्रियो, काफिलो आदि को सकुशल पहुँचाया है और हर प्रकार की क्षति की पूर्ति की है।

निश्छलता मीणो को विरासत मे मिली है। आदिम जातियो का स्वाभाविक भोलापन मीणो मे आज भी मिलता है। इसी भोलेपन के कारण राजपूतो तथा मुसलमानो ने इन्हे अनेक वार छला है। प्राय मीणा-राज्य धोखे से ही समाप्त किये गये हैं। भोलेपन का एक विशिष्ट उदाहरण ढूढाड के मीणो का है जिन्हे 'मामा' सबोधन से राजी कर कछावो ने न केवल सत्ता हथियाई अपितु सैकडो वर्षो तक इन्हे दवाये भी रखा।

अध्याय ११

मीणों का सामाजिक और राजनैतिक पुनर्जागरण

यदि आपने पिछले दस अध्यायो मे वर्णित मीणा जाति के उत्थान-पतन के क्रम की घटनाओ को ध्यानपूर्वक पढा है तो आप यह जान गए हैं कि जो जाति कभी राष्ट्रीय महत्व का एक प्रबल सगठन थी वह किस प्रकार अध.पतन को प्राप्त हो गई है। जो कभी भूमि का निर्बाध स्वामित्व भोगते थे उन्हे किस प्रकार पद-दलित कर चोर-डाकू बनने पर विवश कर दिया गया है। शिक्षा और सस्कारो से दूर रखकर जिस जाति को कुत्सित दृष्टि से देखा जाए, जिसकी प्रगति के सारे मार्ग राज और समाज के निर्दयी हाथो द्वारा अवरुद्ध कर दिए जाएँ उसे जीवित रहने के लिए यदि कुकृत्य भी करने पडे हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। फिर भी सामाजिक दृष्टि से शून्य राज्यतत्रीय और सामती शासको ने उलटी दिशा मे ही विचार और कार्य चालू रखा। भारत भूमि को ग्रसित करने के लिए उतारू विदेशी शासको ने भी उसी दुष्कर्म को प्रोत्साहन दिया और स्वय आगे होकर ऐसे काले कानूनो की रचना की जिससे समूची जाति के निरीह प्राणियो का जीवन दूभर हो उठा। 'अपराधी जाति अधिनियम' १८७१ वही काला कानून था। इस कानून को अग्रेजो तथा उनके अधीनस्थ देशी राज्यो ने समय-समय पर सख्त से सख्त बना कर अपने मार्ग के कण्टको को साफ करना चाहा। सन् १८६७, १९११ तथा १९२३ मे इसके सशोधन किए गए। सन १९२३ का

सशोधित स्वरूप १६२४ मे उन सभी राज्यो मे लागू हुआ जिनमे तथा-कथित अपराधी जातिया पाई जाती थी। मीरगा जाति का नाम इस सूची मे उल्लेखनीय है। सन् १६५० की गणना के अनुसार इस सूची मे बावरियो की ३१७६७ सख्या के बाद मीणो की २०२५२ सख्या ही दूसरे स्थान पर थी। उक्त अधिनियम की कठोरता का आभास उन प्रावधानो से हो सकेगा जिनमे इन तथाकथित अपराधियो का सुख-चैन से रहना तो दूर, पेट भरना तक दूभर हो गया था। इस कानून के अधीन अपराधी घोषित जाति के सभी व्यक्तियो का पजीकरण अनिवार्य था। उनकी पहिचान व अगुलियो की छापें पुलिस द्वारा ली जाती। उन्हे निश्चित स्थानो पर ही रहना होता, निर्धारित समयो पर उपस्थिति दर्ज करानी होती, बाहर जाने के लिए अनुज्ञा–पत्र लेना होता तथा जहा जाते वहा के पच तथा अन्य निर्दिष्ट अधिकारी द्वारा आने–जाने के समय आदि का विवरण अकित करवाना होता। इन बातो का उल्लघन करने पर एक से तीन वर्ष तक की सजा और ५०० रुपए जुर्माना देना होता। पुलिस के उच्च अधिकारी बिना किसी कारण के भी किसी को तीन से ६ माह तक की सजा दे देते थे जिसकी कोई अपील नही थी।

सन् १८७१ से १६११ तक यह अधिनियम कठोरतर होता गया। १६१६ के बाद कुछ ढिलाई प्रतीत हुई तथा १६२४ मे इनको सुधारने के लिए बस्तिया बसाने, शिक्षा देने तथा आर्थिक सहायता करने के प्रावधान भी रखे गये। पर यह सब दिखावटी लीपापोती मात्र थी ताकि समाज-सुधारको को यह बताया जा सके कि यह कानून सुधार की दृष्टि से ही बनाया गया है। इस प्रावधान के अनुसार शिक्षा देने का एक हास्यास्पद उदाहरण सन् १६४६–५० मे प्रकाशित आयगर रिपोर्ट मे दिया गया है, जिसके अनुसार पुलिस

के एक सिपाही को ही दस रुपए मासिक का भत्ता इसलिए दिया जाता था कि वह मीणो पर अत्याचारपूर्ण नियन्त्रण रखने के साथ-साथ उन्हे शिक्षित भी करे। समाज-सुधार के लिए भी तत्कालीन शासन पुलिस के अलावा किसी का विश्वास नही करता था।

'अपराधशील जनजाति अधिनियम जाच समिति' ने बहुत बाद मे सन् १९४८ मे यह ठीक ही कहा था कि "यदि वे राज्य जहा अपराधी जातिया बसती थी, उनकी भलाई के लिए अच्छे उपाय काम मे लेते तो अब तक इस समस्या का समाधान हो चुका होता। बिना सुधार-कार्य के अधिनियम को चालू रखने का परिणाम यही होगा कि ये लोग अपने प्रति किए जाने वाले अन्याय को अधिकाधिक महसूस करेंगे और समाज तथा राज के पक्के शत्रु बन जायेंगे।"

कितने आश्चर्य की बात है कि अधिनियम उन अबोध शिशुओ को भी अपराधी मान लेता था जिन्होने इस जाति मे जन्म लेने का दुर्भाग्य प्राप्त किया था। डा० के. एन काटजू ने इस पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि "अपराधी जातियो के अबोध बालको को भी अपराधी मान लेना परमात्मा का अनादर करना है।"

अधिनियम का सहारा लेकर किस प्रकार पुलिस इन्हे तग करती, इनसे बेगार लेती, पुलिस थानो के पास ही इन्हे रहने के लिए मजबूर करती, यह भुक्तभोगी ही जान सकते हैं। रात को ग्यारह बजे तथा दिन के तीन बजे इन्हे हाजिरी देने के लिए कहा जाता जिससे रात की नीद और दिन का काम हराम हो जाता और भूखे पेट रहकर जीवन की यातना सहनी पडती। ऐसी स्थिति मे पुलिस से साठ-गाठ कर चोरियो मे कुशलता प्राप्त करने का ही मार्ग उनके लिए खुला था। इसी अपवित्र गठबधन का प्रमाण

शाहजहापुर, नीमकाथाना आदि प्रसिद्ध स्थानो को वह समृद्धि है जो इस अधिनियम से प्रभावित जाति के लोगो मे है।

सामान्यत इस अधिनियम की तथा विशेषत धारा २३ के दानवी प्रावधान की कटु आलोचनायें सभी राजनीतिज्ञो तथा समाज-सुधारको ने की थी। श्री एम. एस, अणे ने कहा था कि यह धारा केवल अपराध-वृत्ति को वढाने मे ही सहायक हुई है। सन् १६३६ मे अखिल भारतीय आदिमजाति सेवक सघ के उपाध्यक्ष श्री ए वी ठक्कर ने कहा था कि पुलिस वाले अपराधी जाति के लोगो को राक्षसो के समान समझते हैं और इसीलिए मामूली से मामूली अपराधो के लिए कठोर से कठोर दण्ड देते है। उस समय काग्रेस के नेता मन्त्रिमडलो मे थे। अतः उनसे भी अपील की गई कि वे इस अधिनियम की कठोरता को मिटायेंगे तथा समाज के इस पीडित और उपेक्षित वर्ग की उन्नति के लिए आवश्यक कदम उठायेंगे।

श्री नेहरु ने भी सन् १६३६ मे आध्र के नैलोर नामक स्थान पर इस अधिनियम की निन्दा की और यह माग की कि इस अधिनियम को कानून के पृष्ठो से फाड कर फेंका जाए। समूची जाति को अपराधी घोषित करने के सिद्धात को उन्होने असभ्य और न्याय-व्यवस्था के मान्य सिद्धान्तो के प्रतिकूल बताया।

इस प्रकार देश के चितको द्वारा इतनी कटु आलोचना होने पर भी सन् १६४७ तक इसके सुधार मे कोई उल्लेखनीय प्रगति नही हुई। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के वाद सन् १६४६ मे इस अधिनियम की जाच के लिए एक समिति गठित की गई जिसने अपने प्रतिवेदन मे इसे भारतीय सविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारो के विपरीत वता कर समाप्त कर दिए जाने की सिफारिश की। इस अधिनियम के रद्द

होने के कारण ही इन अपराधी जातियो को विमुक्त जाति की सज्ञा दी गई।

अधिनियम की कठोरता की ओर मीणा ममाज के प्रबुद्ध लोगो का ध्यान नही गया हो ऐसी वात नही है। सन् १६२४ मे जव इसे लागू किया गया तो उसके तुरन्त वाद ही समाज के पढे-लिखे और सेवाभावी लोगो को इसकी निरकुशता खटकने लगी। जिन दिनो राज्य के विरोध मे एक शब्द भी निकालना वहुत वडे साहस की अपेक्षा रखता था तथा जिसके परिणाम अत्यन्त घातक हो सकते थे, उन दिनो भी (सन् १६२४ मे) श्री छोटूराम झरवाल, महादेवराम पवडी व जवाहरराम मारणोताल आदि जयपुर के कुछ मीणो ने साहस करके 'मीणा जाति–सुधार कमेटी' के नाम से एक सस्था का निर्माण किया और आस-पास के क्षेत्रो मे सगठन वनाने की दृष्टि से दौरे भी किये। सन् १६२८ मे प्रकाशित एक पुस्तिका से मीणा–सुधार आदोलन की गतिविधियो की जानकारी मिलती है। इस सस्था के सदस्यो ने विशेष कर ढूंढाड क्षेत्र के गावो मे घूम कर सामाजिक कुरीतियो को हटाने तथा शिक्षा का प्रसार करने की दिशा मे जनमत जागृत किया। शराव पीना, अश्लील गीत गाना, असास्कृतिक नृत्य करना आदि कुरीतियो को इन्होने अपना लक्ष्य वनाया तथा चटशालायें खोलने के प्रयत्न भी किये। अपराधी जाति अधिनियम की दिशा मे इनकी कोई विशेष उपलब्धि नहीं रही।

उधर राजकीय स्तर पर भी सद्भावनापूर्ण उच्चाधिकारियो के प्रयत्नो से मीणो को कुछ राहत मिलने लगी थी। इनमे विदेशी अधिकारी ही प्रशसनीय कहे जा सकते हैं। श्री एफ सी क्वेन्टरी नामक पुलिस अध्यक्ष ने मीणो के सुधार मे दिलचस्पी ली।

के रूप मे मीणो के अतीत गौरव की गाथायें लिख कर समूचे समाज मे जातीय गौरव का भाव उत्पन्न किया। इन्ही मुनिजी ने राजस्थान तथा वाहर के प्रातो मे भी भ्रमण कर विश्रृंखल मीणा जाति को एकजूट करने का श्लाघ्य प्रयत्न किया। सन् १९४४ की १६–१७ अप्रैल को इनकी अध्यक्षता मे 'नीमकाथाना' (सीकर जिला) में मीणो का प्रथम ऐतिहासिक सम्मेलन हुआ जिसके परिणाम दूरगामी निकले। इस सम्मेलन मे प्रजामडल के तत्कालीन गण्यमान्य नेताओ का पूरा सहयोग मिला। इनमे स्थानीय काग्रेसी कार्यकर्ता श्री वशीधर शर्मा का नाम अग्रगण्य है। इस सम्मेलन मे भी अपराधी जाति अधिनियम की कडी टीका की गई। इसकी प्रतिक्रिया राज्य सरकार पर होनी स्वाभाविक थी, जिससे सम्मेलन मे भाग लेने वाले प्रमुख मीणो को गिरफ्तार कर लिया गया। श्री लक्ष्मीनारायण झरवाळ भी इनमे से एक थे। तोरावाटी क्षेत्र के भोडकी तथा नयाबास स्थानो मे उक्त कानून के विरुद्ध सत्याग्रह भी किए गए।

इन्ही दिनो मुनि मगनसागर की अध्यक्षता मे मत्स्य क्षेत्र (अलवर जिला) के प्रसिद्ध स्थान शाहजहापुर मे भी एक सम्मेलन आयोजित किया गया।

विपरीत राजकीय प्रतिक्रिया के बावजूद सुधार आदोलन चलता रहा और साथ ही पुलिस के अत्याचार भी वढते रहे। दिसम्वर सन् १९४५ मे नीदड-बैनाड (जयपुर) मे श्री राजेन्द्रकुमार अजेय, जिन्हे मीणा समाज मे जन-जागृति लाने का श्रेय प्राप्त है, की अध्यक्षता मे एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन मे उदयपुर मे जनवरी १९४६ मे होने वाले देशी राज्य लोक परिषद् के अधिवेशन मे मीणा समस्या से सबधित प्रस्ताव स्वीकार करने की माग की गई। उदयपुर मे श्री नेहरू की अध्यक्षता मे हुए उस सम्मेलन

मे श्री नेहरू का ध्यान इस ओर गया और एक प्रस्ताव स्वीकार किया गया। उसी समय उदयपुर मे ही श्री ठक्कर बापा की अध्यक्षता मे आदिवासी सम्मेलन भी हुआ जिसमे मीणा समस्या पर विचार किया गया। श्री लक्ष्मीनारायण झरवाळ ने उन सम्मेलनो मे भाग लिया।

सन् १९४४-४५ मे ही एक और सम्मेलन 'जयपुर राज्य मीणा क्षत्रिय महासभा' के तत्वावधान मे हुआ जिसकी अध्यक्षता श्री रामवृक्ष मीहुरा ने की। इस सम्मेलन मे भी मीणो की सामाजिक कुरीतियो पर ही अधिक बल दिया गया। प्रजामडल के नेताओ का सहयोग प्राप्त होने के कारण मीणो को थोडा साहस बढने लगा था और उन्होने अपराधी जाति सबधी काले कानून का विरोध भी धीरे-धीरे चालू कर दिया था।

ढूढाड क्षेत्र मे तो यह लहर प्रवाहित होने लगी थी पर मेरवाडा, बैराट, मेवाड आदि क्षेत्रो के मीणो मे कोई जागृति के प्रयत्न नही हुए थे। मुनि मगनसागर का ध्यान इस ओर गया और उन्होने जून सन् १९४४ मे पडिहार मीणो का एक सम्मेलन अपनी अध्यक्षता मे आयोजित किया। इस सम्मेलन मे मीणो की समस्याओ पर चर्चा करने के अतिरिक्त उनमे व्याप्त वर्गभेद को समाप्त करने सबधी निर्णय भी लिए गए। स्मरण रहे पडिहार मीणे अन्य मीणों के साथ बेटी-व्यवहार नही करते थे।

इसी प्रकार सन् १९४६ मे श्री लक्ष्मीनारायण झरवाळ की अध्यक्षता मे पुष्कर तीर्थ पर मेरवाडा के रावत मीणो का एक सम्मेलन हुआ जिसमे भी वर्गभेद-समाप्ति के निर्णय लिए गए। इस सम्मेलन के अवसर पर पुष्कर मे 'मत्स्यावतार' की मूर्ति

स्थापित की गई। सम्मेलन मे भाग लेने वाले प्रमुख व्यक्तियो मे स्वामी कर्णपुरी, अरिसालसिंह छापोला तथा कानसिंह रावत के नाम उल्लेखनीय हैं।

इन सारे प्रयत्नो के पीछे 'जयपुर राज्य मीणा सुधार समिति' नामक एक सस्था की सेवा उल्लेखनीय रही। इसी समिति की चेष्टा से सर्वश्री हरिभाऊ उपाध्याय, ज्वालाप्रसाद शर्मा, हीरालाल शास्त्री, जयनारायण व्यास तथा रामकरण जोशी प्रभृति वरिष्ठ तथा कर्मठ नेताओ का सहयोग भी मिल पाया। उक्त सुधार समिति के अथक परिश्रम के फलस्वरूप निम्न परिणाम सामने आये:—

१ १ जून १९४६ के गजट सख्या ५५४७ पृष्ठ ५१ कॉलम ४७२८ एम. बी. के अनुसार दादरसी का कानून समाप्त किया गया। २ बालिग होने पर सजायाफ्ता किसी व्यक्ति को अपराधियो के रजिस्टर मे पंजीबद्ध नही किये जाने तथा ३. स्त्रियों को हाजिरी देने के लिए नही बुलाये जाने के निर्णय किए गए।

इन्ही दिनो सन् १९४६ मे सुधार समिति के तत्कालीन मत्री व अध्यक्ष ने एक सयुक्त वक्तव्य प्रसारित किया जिसके फलस्वरूप तत्कालीन जयपुर राज्य के गृहमन्त्री श्री अमरसिंह ने उन्हे बुलाकर सुधार सम्बन्धी वार्ता की। इसी वार्ता के अनुसार १० अगस्त, सन् १९४६ के असाधारण गजट मे कुछ सुधारो की घोषणा की गई। यह घोषणा १५ अगस्त, १९४६ के 'जयपुर न्यूज लेटर जि ४, सख्या १७' मे प्रकाशित हुई। इस घोषणा को अस्पष्ट भाषा से सहमत न होने के कारण सुधार समिति के लोगों ने पूर्ण नागरिक अधिकारो की माग की। ६ जून, १९४७ को जौहरी बाजार मे अपराधी जाति कानून का पुतला जलाया गया

और सामूहिक रूप से सभी मीणो ने हाजरी देना बन्द किया। पुलिस ने करीब १५० लोगों को पकड़ कर सजा दिलवाई पर वह हाजरी का नियम लागू कराने मे असफल रही।

फलत सुधार समिति का सहयोग लेकर राज्य सरकार ने मीणो को सुधारने के लिए जगह-जगह पुलिस-सम्मेलन किये जिनमे मीणा-सुधार समिति के कार्यकर्ताओ ने भी भाग लिया। मीणो की भलाई के लिए तीन लाख रुपयो की एक योजना बनाई गई और गृहउद्योग, खेती, शिक्षा, समाज-सुधार आदि के कार्यक्रम रखे गये।

ठीक इसके बाद भारतीय स्वतन्त्रता-प्राप्ति की घोषणा हो गई और वह योजना यो ही धरी रह गई। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि जिन लोगो से चोरिया छुडवाई गई थी और जिन्हे जमीनें देने का आश्वासन दिया गया था वह पूरा नही हुआ और वे लाचार होकर पुनः चोरी करने लग गये। चौकीदारी के बदले मे भी जो जमीनें मीणों को दी हुई थी उनमे काश्त करने देने तथा वाजिब लगान लेने की शर्त न मानकर उनकी जमीने जब्त करली गई, जिससे असन्तोष फैलने लग गया।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद रियासतो का विलीनीकरण होने के कारण 'जयपुर राज्य मीणा-सुधार समिति' का क्षेत्र व्यापक बनाया गया और उसका नाम 'राजस्थान मीणा-सुधार समिति' रख दिया गया। इससे पूर्व भी नाभा और पटियाला रियासतो की सीमाओ पर इस समिति के तत्वावधान मे सम्मेलन हुए थे। समिति के प्रमुख कार्यों मे रजिस्टरो मे नाम दर्ज होना बद करवाना, औरतो की हाजरी बद करवानी, सवारी व हथियार रखने का प्रतिबन्ध हटवाना, चौकीदारी छुडवाना, शराबखोरी के खिलाफ प्रचार करना,

चोरी की आदत छुडवाना, बच्चो की शिक्षा का प्रचार करना तथा मत्स्य राज्य मे भी अपराधी जाति अधिनियम की समाप्ति करवाना, आदि प्रमुख हैं। समिति के प्रमुख कार्यकर्ताओ मे सर्वश्री राजेन्द्रकुमार अजेय, लक्ष्मीनारायण झरवाळ तथा भूथालाल नाढला के नाम उल्लेखनीय हैं।

उक्त समिति के अतिरिक्त भी अनेक समाज-सुधारक सस्थाओ ने अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार कार्य किया। उन सस्थाओ के नाम इस प्रकार है.—१ मीणा पचायत, जयपुर २ जयपुर राज्य मीणा-सुधार सभा, ३ मीणा क्षत्रिय महासभा, जयपुर, ४ राजस्थान आदिवासी मीणा सुधार सभा, ५ राजस्थान मीणा परिषद्, ६. राजस्थान विमुक्त जाति सेवक सघ, जयपुर ७ राजस्थान आदिम जाति सेवक सघ, जययुर, ८ मध्यभारत मीणा सुधार सभा, ग्वालियर, ९. मीणा विकास समिति, इन्दौर, १० हाडौती आदिवासी मीणा सामाजिक सुधार मण्डल, बूदी, ११ हाडौती मीणा सुधार सघ, बूदी, १२ मीणा अपराध निवृत्ति समिति, सीकर तथा १३. अखिल भारतीय मीणा आदिवासी सभा, अलवर। मेवो तथा मेरो ने भी अपनी सभायें सगठित कर जातीय सुधार का कार्य किया।

सस्थाओ के अतिरिक्त कई पत्र-पत्रिकाओ ने भी मीणो मे जागृति उत्पन्न करने के प्रयत्न किये। मत्स्य समाचार पत्रिका (गगापुर-सवाई माधोपुर से सन् १९५६ मे प्रकाशित), मीना वीर (सर्व भारतीय मारण क्षत्रिय समाज, छत्तारी-बुलदशहर उ प्र. सन् १९३८), स्वतन्त्र मीना (अखिल भारतीय मीणा जातीय महासभा, दिल्ली), के अतिरिक्त मेरवाडा के रावत मीणो का एक पत्र भी अजमेर से प्रकाशित हुआ है। मीणा सुधार
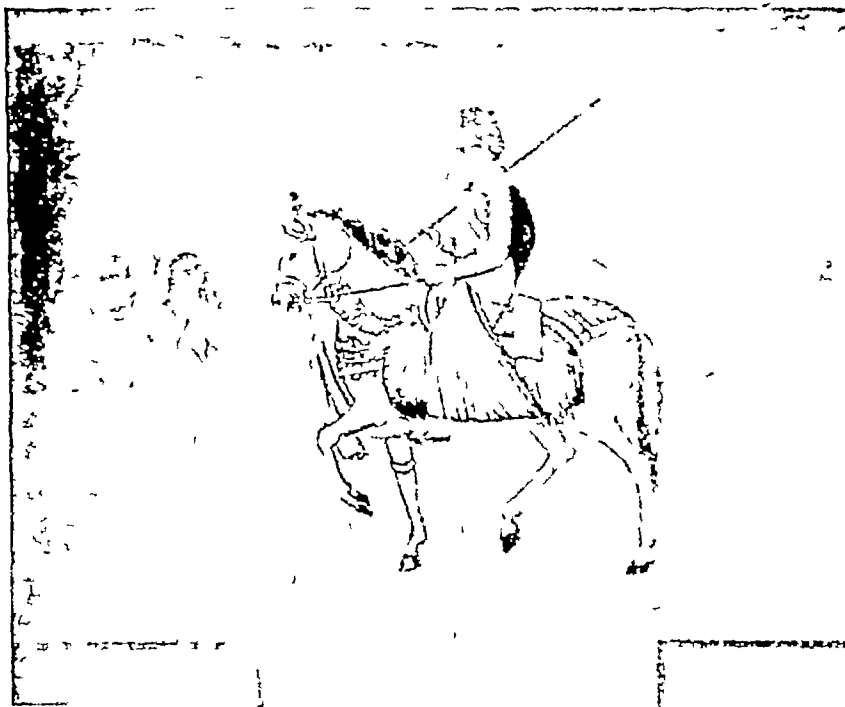
गुणावता (जयपुर-दिल्ली राज मार्ग) गाव मे खीवा भोमिया जिनके मीणा जाति के होने की मान्यता है

सवाईमाधोपुर जिले के 'घोडो का बिनेगा' गाव मे हुए सम्मेलन

सन् १९४७ मे अपराधी जाति अधिनियम के विरुद्ध प्रदर्शन करने वाले मीणा कार्यकर्ताओ का एक दृश्य

समिति, जयपुर की ओर से भी 'मुक्त मानव' नामक एक बुलेटिन प्रकाशित हुआ।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद जो निर्भीकता का वातावरण देश मे व्याप्त हुआ और हर नागरिक को समान अधिकार देने का सिद्धात स्वीकार किया गया उससे मीणा समाज मे जागृति का नया दौर प्रारम्भ हुआ। सन् १९४७ के बाद के कतिपय महत्वपूर्ण सम्मेलन, उनके स्थान और उपलब्धिया आदि निम्न प्रकार हैं —

१ सन् १९४७ मे ग्राम बडवा—तहसील दौसा मे श्री ज्वालाप्रसाद शर्मा की अध्यक्षता मे हुए सम्मेलन मे देवी के दी जाने वाली पशुबलि को समाप्त करने के लिए लगभग एक हजार स्वयसेवको ने सत्याग्रह किया और सफलता प्राप्त की।

२ सन् १९४७ मे ही जयपुर मे तीजो के मेले के अवसर पर एक सम्मेलन हुआ जिसमे मीणो द्वारा गाये जाने वाले अश्लील गीतो तथा नृत्यो को बद करवाने का प्रयत्न किया गया।

३ सन् १९४७ मे दूदू (जयपुर) क्षेत्र के मीणो का एक सम्मेलन पडित शिवविहारी तिवाडी की अध्यक्षता मे हुआ जिसमे पुलिस के नृशस व्यवहार की भर्त्सना की गई।

४ सन् १९४९ मे चाकसू (जयपुर) मे शीलमाता के स्थान पर एक वृहद् सम्मेलन श्री भूथालाल नाढला की अध्यक्षता मे हुआ जिसमे चमारो और मीणो मे सौहार्द्र उत्पन्न करने के प्रयत्न किए गए और 'मीणा पचायती धर्मशाला' का निर्माण करवाया गया। इस सम्मेलन मे लगभग पचास हजार मीणे एकत्रित हुए।

५. सन् १९५२ मे 'राजस्थान मीणा महा पचायत' के तत्वावधान मे पालडी (तहसील जयपुर), पापडदा (तहसील दौसा), सूरवाल (तहसील सवाई माधोपुर), बामनवास (तहसील सवाई माधोपुर) पीलोदा (तहसील नादोती), झारेडा (तहसील हिण्डौन), टोडा-भीम, सिकराय, मानपुरा (तहसील सिकराय) तथा उकडूद (तहसील महुवा) मे श्री शिवबक्स करौल, श्री ग्रारिसालसिंह तथा श्री गोविन्दराम की ग्रध्यक्षता मे सम्मेलन हुए। राणोली (टोंक) मे स्वामी वल्लभानदजी की ग्रध्यक्षता मे भी एक सम्मेलन हुग्रा। इन सभी सम्मेलनो मे समाज-सुधार संबधी चर्चायें की गई।

६ सन् १९५५ मे मलवास (दौसा) मे एक तीन दिवस का सम्मेलन श्री भूथालाल नाढ़ला की ग्रध्यक्षता मे हुग्रा जिसमे राजस्थान के बाहर के प्रतिनिधियो ने भी भाग लिया।

७ सन् १९५६ मे दौसा मे श्री छुट्टनलाल की ग्रध्यक्षता मे हुए सम्मेलन मे जातीय सगठन को मजबूत बनाने तथा राष्ट्रीय ऐक्य को बढावा देने के उपायो पर चर्चा होने के ग्रतिरिक्त सामाजिक समस्याग्रो पर भी विचार हुग्रा।

८ सन् १९५७ मे ग्राम गुढा (बस्सी-जयपुर) मे श्री रामनारायण पटेल की ग्रध्यक्षता में हुए सम्मेलन मे मीणो मे व्याप्त ग्रध-विश्वासो को दूर करने के लिए उपायो पर विचार किया गया।

९, सन् १९५९ मे एक विशाल ग्रादिवासी मीणा सम्मेलन जयपुर मे हुग्रा जिसमे गदे गीत न गाने तथा शराब न पीने की सामूहिक प्रतिज्ञा की गई।
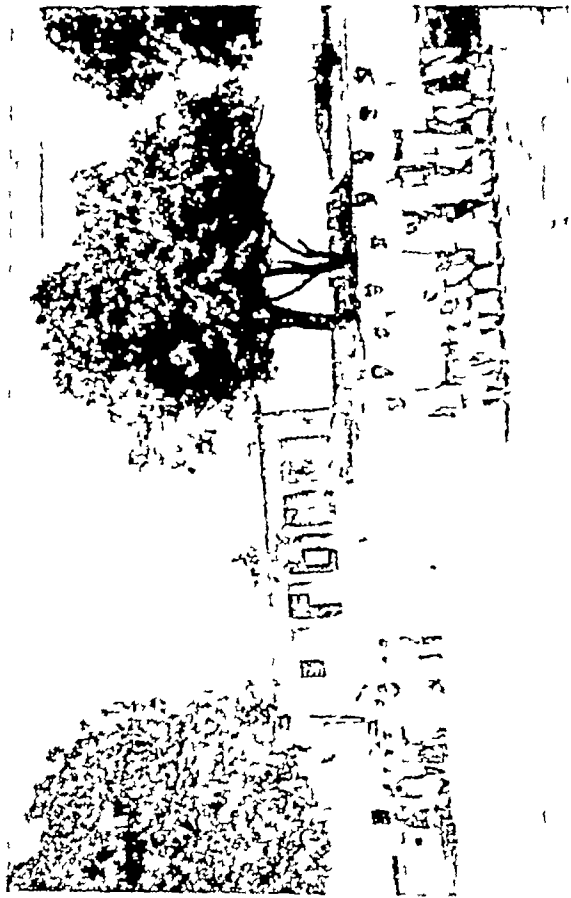
सन् १९४९ मे चाकसू (जयपुर) मे हुए सम्मेलन के अवसर पर सस्थापित मीणा पचायती धर्मशाला के सामने खडे हुए प्रमुख कार्यकर्ता

सन् १९६६ मे बस्सी (जयपुर) मे हुए सम्मेलन के अवसर पर मीणा जाति के जागाओ (नीचे से पहली पक्ति) तथा अन्य कार्यकर्ताओ को श्री भूथालाल नाढला (दाये) सबोधित कर रहे हैं।

सन् १९६६ मे जयपुर मे हुए सम्मेलन के अवसर पर एक अन्य गोष्ठी मे कुँवर छुट्टनलाल (दाये) भाषण दे रहे हैं।

१० सन् १६५६ मे पीपलू (टोंक) मे एक आदिवासी मीणा सम्मेलन हुआ ।

११ मन् १६६१ मे भ्रर (जयपुर) मे श्री छुट्टनलाल की अध्यक्षता मे हु एक मम्मेलन मे मीणों का इतिहाम प्रस्तुत करने के लिए प्रम्ताव पाम किया गया ।

१२ मन् १६६० मे जयपुर मे मीणा प्रतिनिधि सम्मेलन बुलाया गया जिनमे भारत-चीन युद्ध मे मीणो के सहयोग पर विचार किया गया ।

१३ सन् १६६३ मे जयपुर स्थित रामनिवास वाग मे राजस्थान मीणा परिषद् के तत्वावधान मे इतिहास समिति की साधारण सभा हुई ।

१४ सन् १६६४ मे जामडोली (जयपुर) मे मीणा इतिहास के लिए धन-सग्रह करने पर विचार हुआ ।

१५ सन् १६६४ मे गाव लालगढ (वस्सी-जयपुर) मे मीणो की सामाजिक कुरीतियो को हटाने सम्वन्धी प्रस्ताव पास किए गए ।

१६. सन् १६६५ मे छारडा (दौसा) मे श्री वशीलाल पगारिया की अध्यक्षता मे एक सम्मेलन हुआ जिसमे पारस्परिक सौहार्द्र उत्पन्न किया गया ।

१७ सन् १६६६ मे जयपुर मे मीणा समाज के विधानसभायी सदस्यो, जिला प्रमुखो, प्रधानो तथा अन्य प्रतिनिधियो का एक सम्मेलन विधान सभा सदस्य कैप्टेन छुट्टनलाल की अध्यक्षता मे हुआ जिसमे इतिहास-निर्माण सवधी प्रस्ताव पारित किया गया ।

१८ सन् १९६६ मे बस्सी मे मीणा जाति के जागाओ का एक सम्मेलन हुआ जिसमे मीणा–इतिहास के लिए सभी गोत्रो के वश-वृक्ष तैयार करने का निर्णय लिया गया।

१९. सन् १९६६ मे रामनगर (लालसोट–जयपुर) मे हुए एक सम्मेलन मे मीणो की सामाजिक कुरीतियो को दूर करने तथा मीणो का इतिहास प्रस्तुत करने के प्रस्ताव पारित किए गए।

२० सन् १९६६ मे अलवर मे श्री हरिकिशन भू० पू० एम एल ए की अध्यक्षता मे एक सम्मेलन हुआ जिसमे मेवो के मुखिया चौधरी भी कई जिलो से आकर सम्मिलित हुए। इसमे मेवो तथा मीणो का भेद मिटाने सबधी चर्चा की गई। इसी सम्मेलन मे 'मीणा–मेव महा पचायत' की स्थापना की गई जिसका मुख्यावास दिल्ली मे रखा गया तथा अध्यक्ष पद पर श्री हरिकिशन को चुना गया।

उपर्युक्त कई सम्मेलनो मे सर्वश्री मोहनलाल सुखाडिया, किसान नेता चौधरी कुम्भाराम आर्य, नाथूराम मिरधा, रामकरण जोशी, भीखाभाई, रामकिशोर व्यास आदि वरिष्ठ नेताओ ने भी अपने विचार प्रकट किए।

मीणो द्वारा सामाजिक जागृति के लिए किए गए इन प्रयत्नो के अतिरिक्त काग्रेस सरकार ने भी इस शोषित जाति के लिए विशेष व्यवस्था की। यद्यपि सन् १९५० के राष्ट्रपति के आदेश मे जो अनुसूचित क्षेत्र घोपित किए गए थे उनमे राजस्थान की केवल भील जाति को ही लिया गया था, पर अनुसूचित क्षेत्र के विस्तार की माग को देखते हुए सन् १९५६ मे मीणो को भी अनुसूचित जातियो मे मान लिया गया। सन् १९५५ में मीणो की ओर से सर्व श्री किशनलाल

सन् १९६६ मे कैप्टन छुट्टनलाल की अध्यक्षता मे हुए सम्मेलन के प्रतिनिधि जिनमे अनेक विधान समायी, जिला प्रमुख, प्रधान तथा अन्य विशिष्ट कार्यकर्ता हैं ।

वर्मा, लक्ष्मीनारायण भरवाळ, रामचन्द्र जागीरदार, सावर्नसिंह, अरिसालसिंह तथा गोविन्दराम ने एक मेमोरेण्डम भी प्रस्तुत किया था।

अनुसूचित जनजातियो के कल्याण-कार्यों के लिए केन्द्र व राज्य सरकार ने करोडो रुपयो की योजनाये बनाई। मीणा जाति के लिए भी इन योजनाओ मे पर्याप्त द्रव्य व्यय किया गया। इन योजनाओ मे विविध प्रकार के कार्य किए गए। शिक्षा के लिए छात्रवृत्तिया देने, छात्रावास सचालित करने, भवनो का निर्माण करने तथा स्वयसेवी सस्थाओ को अनुदान देने का कार्य किया गया। आर्थिक विकास के लिए तालावो व बाधो का निर्माण, सिचाई के लिए कूए, कुटीर उद्योग तथा भूमि देकर बसाने और कृषि-औजार खरीदने के लिए सहायता देने के कार्य किए गए। स्वास्थ्य-सेवाओ मे पीने के पानी के कूए बनाए गए। इनके अतिरिक्त कानूनी सहायता देने तथा सडकें आदि बनाने के कार्य भी किए गए।

इन योजनाओ के कारण मीणो के कई छात्रावास सचालित हो रहे हैं तथा छात्रवृत्तिया भी दी जा रही है।

राजनैतिक जागृति के लिए भी मीणा समाज को अनुसूचित जन-जाति मान लिया जाने के कारण निर्वाचित सस्थाओ मे प्रतिनिधित्व मिला है। विधान सभा तथा लोकसभा मे अनुसूचित जन जातिया के सुरक्षित स्थानो पर राजस्थान का बहुसख्यक मीणा समाज अपने प्रतिनिधि भेजने मे सफल हुआ है। इसी प्रावधान से आज राजस्थान की विधान सभा मे मीणो के दशाधिक प्रतिनिधि है तथा लोकसभा मे भी मीणा प्रतिनिधि का स्थान है।

'राजस्थान पचायत (सशोधन) अधिनियम' के अनुसार पचायतो मे अनुसूचित जाति या जन जाति के किसी प्रतिनिधि के निर्वाचित न

होकर आने की स्थिति मे ऐसे प्रतिनिधि के सहवृत करने का प्रावधान किया गया है। इस समय मीणा समाज के सैकडो पच, सरपच, प्रधान, प्रमुख आदि हैं।

इस प्रकार जनता की निर्वाचित सस्थाओ मे मीणो को प्रतिनिधित्व मिलने से युगो से शोषित और पीडित इस जाति की यातनाओ का अन्त हुआ है। शासन मे भी मीणो को अपना पूरा भाग मिले इसके लिए मीणा समाज के प्रतिनिधियो को एकजूट होकर प्रयत्न करना चाहिए। प्रजातत्र का मूल सूत्र सघबद्ध होना ही है। कभी सघबद्ध होकर ही मीणो ने अपनी गौरव-ध्वजा फहराई थी। आपसी द्वेष, वैमनस्य आदि के कारण जो महान जाति विश्रृङ्खलित हो गई थी, उसे आर्थिक और राजनैतिक आधार पर पुनर्गठित कर सर्वतोमुखी उन्नति के प्रयत्न किए जाने चाहिए। यह कार्य मीणा समाज के उन प्रमुख नेताओ का है जिनके इगित पर आज भी समाज के हजारो व्यक्ति एकत्रित होते हैं और जिनके प्रति उनके हृदय मे आदर तथा स्नेह है।

कुछ प्रमुख मीणा वंश-वृक्ष

[मीणा जाति के जागाओं की वहियों से सकलित तथा पाद-टिप्पणियों के अतिरिक्त यथाप्राप्त उद्धृत]

बारवाल वंश

बैफलावत वंश
अनगपाल (प्रथम)
(तिजारो) तेजपाल—महीपाल—मुकन्दपाल—लाखण रावत—
जोरू रावत—चनणा रावत—धन रावत—गोरावत,
खीव रावत, धर्मरावत (घोण)
नौराजदे
बाकू
खाटूराव (मेवासी हुआ—'खाटू, खडेलो' बसाया)
तब से खाटूराव के पोते कहलाये
२३४
वीसू रावत—बीसू रावत,—गगन रावत—आलणदे रावत—
(पालीमाता ने प्रसन्न होकर ७५० घोडे दिए)
भोबू रावत, भौंरपाल रावत, किलाण रावत
(पापडदो)
जाहड
(नयावास, कल्याणपुरो, किशोरपुरो
प्यारीवास, मलवास
खानवास रावास, नाळावास,
कल्लावास, टूटयास, लाडपुरो,
जगरामपुरो, टोडो)
साहड
(पापडदो
चतरपुरो)
चाच्यो
(खोहरी
नायलो
काशीपुरो
शकरपुरो)
पून्यो
दौसा,
डागरवाडो,
राळावास,
मोरण,
मैंजेवळो)
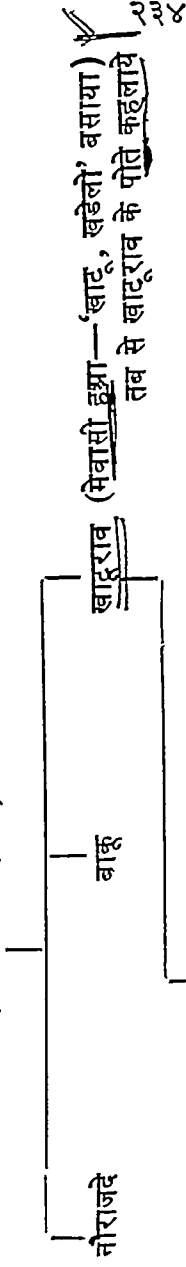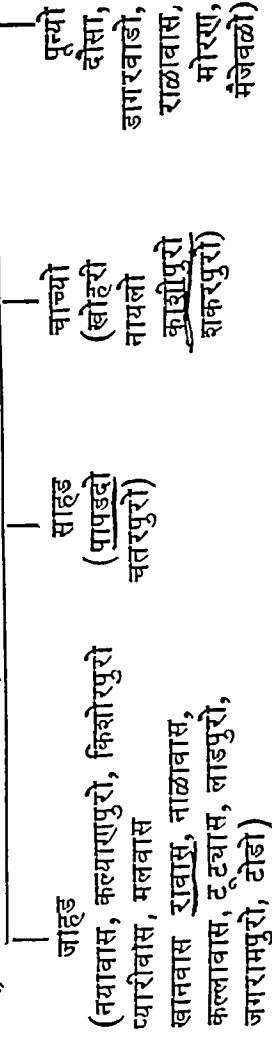
टिप्पणी— इसकी उत्पत्ति चन्द्रवशी तवर क्षत्रियो से है। इसका निकास दिल्ली-हस्तिनापुर से है। खाटूराव का राज्यकाल सवत् ९९२ वि कहा जाता है।

खाटा राव खलक मे मालम, जालम खेलै दाव।
पतसाही दरबार मे, खटकै तेजोराव ॥
न्याव नगारो बाधियो, दावाबध दोरा।
आघो जस सुधारण बैफळावत, आघो जस ओरा ॥
कासीपुरै अर कुसळपुरै दीखी, पापडदै अधिकाई।
हीरो निपजै हेम को, लिया राववास रोताई ॥
काकड बाज्या घूघरा, फळसै वाज्या ढोल।
ओठो बावड रै खाटू का तेजा, थारो अमर रह जागो कुळ मे बोल ॥

डोभवाल वंश

बेनपाल
|
उदयपाल
|
- राव
- महाराव (गढ बयाना से आकर पचवारे मे गाव 'डोभ' बसाया)
  |
  मल्लो रावत—महल रावत—घाट्ट रावत—गहल रावत—
  दूदो रावत—लखमधर रावत—बालू रावत—बहादुर रावत—
  सागो रावत—सहज रावत—मालण रावत—बीजसी—छत्तो—
  खीवसी
  |
  - करमसी (ढोलावास)
    |
    राजसी—सुरजन—पिथोरो—भीमसी—खैराज—अजयपाल—अज्जू—कूभो—हडपो—[1] (मेवासी हुआ—गाव ढोलावास सवत् १६००)
  - सी
  - बन्नो
  - देवसी
  - जोगू
  - घाट्ट
  - गागो
  - छाजल

टिप्पणी— यह वश यदुकुल से उत्पन्न है। ये चद्रवशी क्षत्रिय हैं और इनका उद्गम मथुरा-बयाना-तिमनगढ से है। इनकी कुलदेविया अन्जनी माता तथा खलगाई माता हैं।

१ हडपा मेवासी के विषय मे निम्न दोहा प्रसिद्ध है—

हडपा नै हेवड हडी, गारथ राख्या गोड। मुखा सरावै मालदे, रग दे छै राठोड ॥

गोठवाल वंश

साह
- नीवू रावत
  - कुलध रावत
    - मोटू रावत
      - डोडू रावत
        - कुलचदो रावत (इसके १२ पुत्र हुए जिन्होने १२ खेड वसाये)
          - लाखणसी (छारेडो–पचवारा)
            - सागो रावत
              - राजू
                - तेजो
                  - भींवसी
                    - भूरो
                      - कल्लू
                        - महलग
                          - लाहाडो (मेवासी–गाव छारेडो–पचवारा)
- ग्रावू रावत
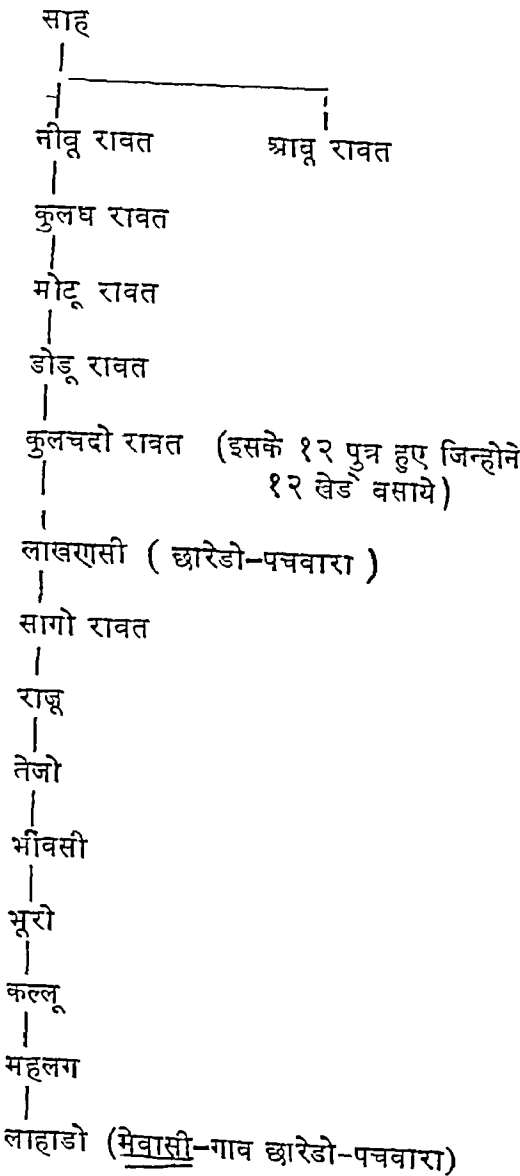
टिप्पणी—इसकी उत्पत्ति चौहान वश से है। साह के पुत्र नीवू से 'गोठवाळ' तथा दूसरे पुत्र ग्रावू से 'वारवाळ' वंश के मौरणे हुए। नीवू रावत ने संवत् ९९९ में 'गोठ' वसाई। गोठवाळों ने वरणजारी माता का पूजन किया ग्रौर गाव गोठ, सीकरोडी, भावरो मे वास किया। पिप्पळाज माता का स्थान पर्वतो मे है। इसी को वरणजारी माता कहते हैं। वैशाख सुदी ८ तथा भादवा सुदी ८ को मेला लगता है।

(महर वंश)

राजा बिजैपाल
|
चन्द्रपाल
|
महीपाल
|
चलस्यो रावत
|
जैनड रावत
|
नन्दमहर (इसका उपनाम 'अळियो महर' है। यह 'माळ' के घाटोनी गाव का मेवासी था। इसने ७ स्त्रिया घर मे रखी जिनके ३० पुत्र हुए।)

घाटम (घाटोली)	पुनसो (तमावो)	देवो (धवाण)	धन्नो (धोळेटो)	वाघो (वेरोज)	रणमल (राणोलो)	
तल्लो (तालचडो खोहरो)	गागो (गगवाणो)	लालू (लाहावद)	नागो (भावरो)	देवो (दनाचलो)	सोलो (मलावद)	रामू (रामेरो कूडेरो फूसेतो)
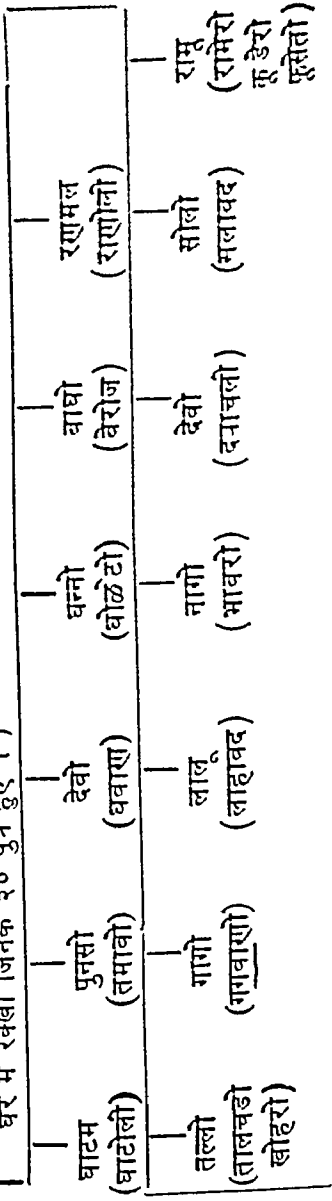
सावत (थोरेडी सूकडी)	भीवो (भावरो)	रेवो (रेवासो मोरा)	पालू (पाल गुढो)	सेवो (सिकपुरो सेवाळो)	गोदू (गोदास)	जगनो (जगनैर)

अरजन (अरणो)

टिप्पणी— इस गोत्र का निकास मथुरा से बयाना–तिमनगढ । देवी अजनी प्रथम तथा वाद मे घटवासण पूजी जिसका स्थान गुढाचन्द्रजी के पास घटवासण का घाटा है, जिसके आस-पास महरो के अनेक गाव हैं ।

महरो को मेहता भी कहते हैं । गगवाणा (जयपुर–महुआ) के लालजी महर ने सवत् १९५६ के अकाल मे मऊ जाते हुओं को भोजन करवाया था ।

महर बडा वेरोज का, ल्यावै मेवासा मार ।
दिन अठ्या दौलत वंटै, मेहतामल के द्वार ॥
घोडा दे गजगाह दे, गळै घालदे जंग ।
तू बेटा वृपभान का, एक जलेवदार दे सग ॥

जेफ वंश

अनगपाल
त्रिलोचनपाल
जयरथ
सूंडो
हरपाल
सूरपाल
माडो
गाहडो
(गावडी)
वालणसी
माहाणो
पोखर
वीहड
ठाकरमी
मेदो
दफडो
पाचो — सातल — मोकल — महणो — मालो
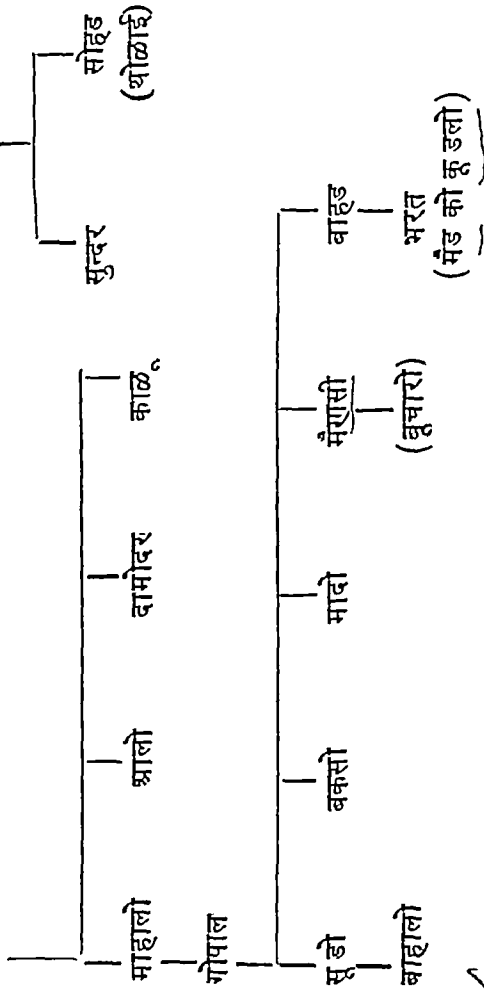
टिप्पणी—क्षत्रिय वश-दिल्ली से निकास, पाटण के वासी, गावडी थान ।

माणतवाल वंश

गहलोजी—अभडोजी—मागल—करण मागल—कवरसी—सूरसी—करणसी—महणो—गाहथ—गोरू—मैणसी[1]—सलवण—लालो—अखरो—लोहर

लोहर → माचो, छीहल, म्यालो, पीपो, कल्लो, वाहड

वाहड → कोदो (भराणो)

कोदो (भराणो) → बीजल, नानग, नागद (नोगाढा मीणा वश चला), माडो, माहालो

नानग → मोकल

माहालो → लाहो → तोंणो

पीपो (वीचूण)

पीथो
|
गोपाल (खवो, खराणो, रायपुरो)

गेतो
|
गालो
|
आखो[2] (आग्वणी)
|
रसोताल (तालो) | पूरण (वीचूण) | परतो | भरतो | नाभो | दुरगो | पूरो
पूरो
|
वरसू
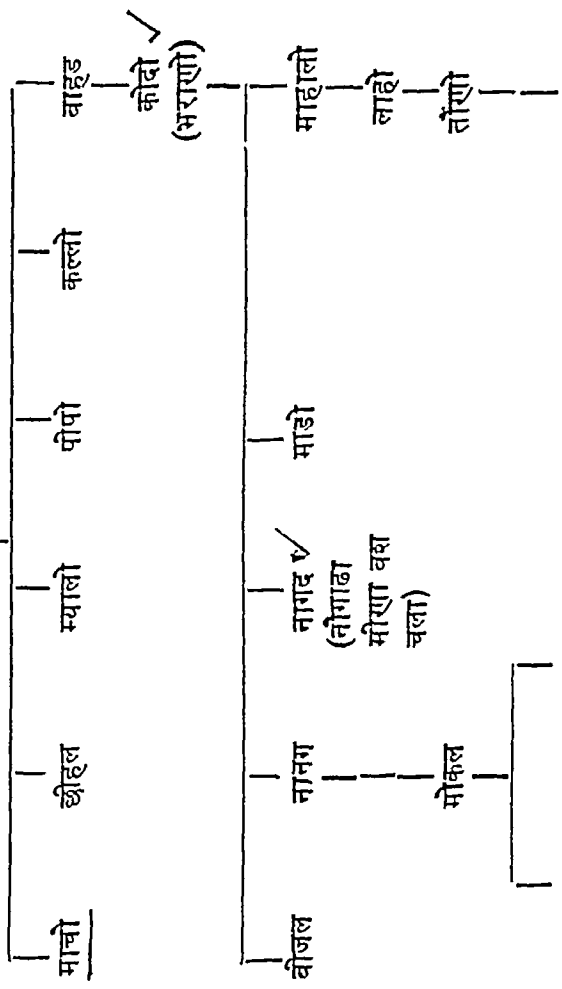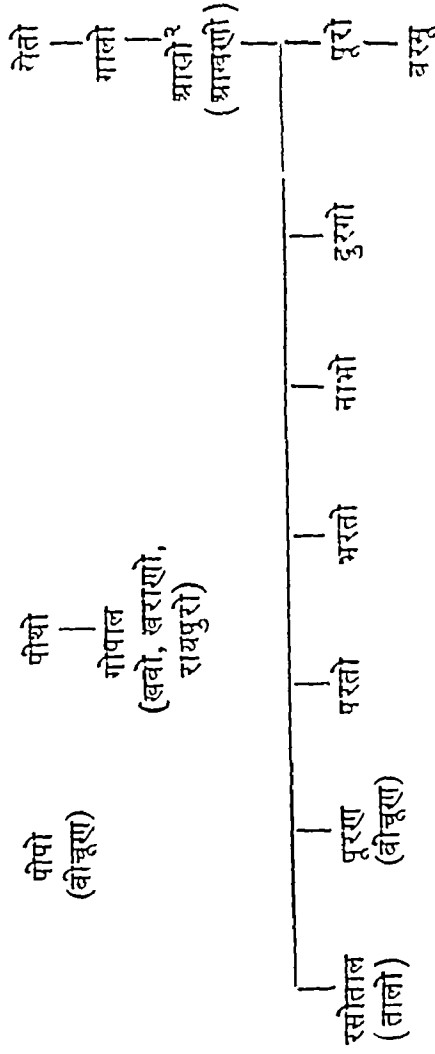
टिप्पणी—१–मैंणसी ने माणिकपुर बसाया, तभी से माणतवाळ कहलाये।

इस वश की उत्पत्ति गहलोत क्षत्रिय वश मे है। जीणमाता गठ्वामण कुलदेवी है।

अमरत की कूई, पारस का टाणा।
वू दी का भोग लगे, आगो गाव भराणा॥

इनका निकास मागलगढ़ नामक स्थान से है।

२–आखो राव के साथ कीला की वेटी ने गाव आगणी मे जेठ सुदी १२ को सत पूजा (?)

खोड़ा वंश

सोमा ऋषि
महाऋषि
इन्दुऋषि
सीराम (सामीत)
महेसराम
सेंसराम
काहूराम
नाभो
जसराम
लोगस
लूणो
खोडो[1]
(माचेडी){रूडो
राहो
काहो
देलो
दोपाल
गोपाल
महापाल
किशनपाल
महराज
लोहड (गावडी वसाई)—मेदो—जोणो—सहदेव—वीहड—भूसल—मात्रो—राहु
गालो
ऊदो
सावत

- हरजी (लाहोपुरो)
- रणमल (नटाटो)
- काळू
  - गागो
  - वीलो
  - सीलो (चीताणो)
  - सीतल
    - हरराज
    - अरजन
    - वरसी
    - कादल
    - वरसिंग
      - मोको (सीरोही)
    - जीतो
    - सामल
    - रायमल
    - ऊदो
    - वोहित
    - हरगी
    - (तीसरी पीढ़ी की शाखा)
      - अजैपाल
      - वीलोजी (वीलोत, दताळो, काट, सागाळो—४ गाव)
        - दूदो
          - कुम्भो (दताळो)
        - चाहो
        - दोराज
  - सीवराज
  - दोराज
- करणो

टिप्पणी—१–पनड़ी गोत्र खोड़ो मे ही निकला है। इनके मूलपुरुष का नाम पातुराव था। इनका वास गाव गामोत तथा निकाम मारोठ व गुड़ेला से है

मेवाल् वंश

वीरम ऋषीश्वर,

|

महाऋषीश्वर, घूमऋषीश्वर
कानवेऋषि, वीकानवे, नसकुढ,
मगऋषि, मागऋषि,[1] राव महर,
कांतरो राव, कुतेरोराव, महमन्दराव
चैयचकराव, माहलोराव, ब्रह्मपालराव,
चन्दसेरराव

|

नींवोराव
- केमोराव
- श्रासोराव
- हवोराव

|

कोढुराव, लीपमण, जालीप, कुतल

लाखो (सन्यास लिया) लोगो

- बूचो
- बागो
- करणसी[२]
  - मेदो (गोठडा)
    - मणसी (ई टली)
    - आसपाल
    - लोपाल
    - पातिल (अनाशन देवी पूजी)
    - भारमल (क्यारा)
    - वडसी (कूकस)
  - मैणसी (देवो आसावरी मानी—कूकस, खोरा के मेवाळ) ✓
    - करमो
      - दामो
        - ✓हमीरो (दिल्ली के बादशाह से युद्ध किया)
        - लालो
        - वीरम
        - हठीलो

टिप्पणी— मेडता (पुष्कर क्षेत्र) से उद्गम ।

१- माग ऋषि ने पुष्कर के पास पर्वत पर तपस्या की तथा तालाब के पास धूणी जमाई ।

२– क्यारा के मेवाळो के कथनानुसार राजा अक्षयपाल के पुत्र लोहपाल के दो लडके मोकळसी तथा करणसी थे। मोकळसी ने क्यारा (लाका) वसाया तथा करणसी ने कांखवाडी का किला वनवाया। मोकळसी के पुत्र सालो की थाई (वैठक) क्यारा के डूगर पर 'सालाळी भाठ' के नाम से प्रसिद्ध है। पुराना उजडने के वाद नया क्यारा सवत् १५७२ मे वसा और मेवाळो के १२ तथा १२ ब्राह्मणो के गाव भी और वसे, जिनमे से प्रमुख है—१. काळोलाको, २. स्याडवास, ३. खिररीको, ४. ऋासको, ५. सिरसको, ६. जयसिहपुरो, ७. स्यामपुरो, ८. किसोरी, ९. वीरमपुरो, १० कूडलो, ११. गोविंदपुरो, १२ वलवास, १३. सीळी वावडी, १४. जैतपुरो आदि।

वांसखोवा वंश

बिजैराजा—लाखणसी राजा—कायेराजा—अजैराजा—लखणसी—
राव सकट

(आठ पुत्र)
बीसेईराव
बागराव
देदराव
देवसी
लाहावो
बुदराव
कायेराव
वोनोराव
(ये ८ पुराणा
वासो
कहलाये)

(तेरह पुत्र)
बालणसी
मालणसी
माहिल
ताहिल
तालण
जाहिल
मादिल
कालण
सोहन
सुगणो
मगसी
मोहन
जालण
(ये १३ मैले

राव वसुव—राजेसुर—धरमसी—वमेडोराव—भूरो—कुम्भो—आसपाल—
वमेडोराव → सूरो
अरजन—अजता—तेजल—सोमसर—सलारसी—मोढदेव—वीरमदे—
अरजन → परदान
सातलराव—पातलराव—लयणसी राव—उतेरो राव—वीको राव—
उतेरो राव → सोढराव
घुमडोराव—देवणराव—देवडो—दूदो—हणूनो—वीलो—तोणमी
हणूनो → वीरो, वातो
मैणसी—वरसी—काळू— काटो — गांवो—
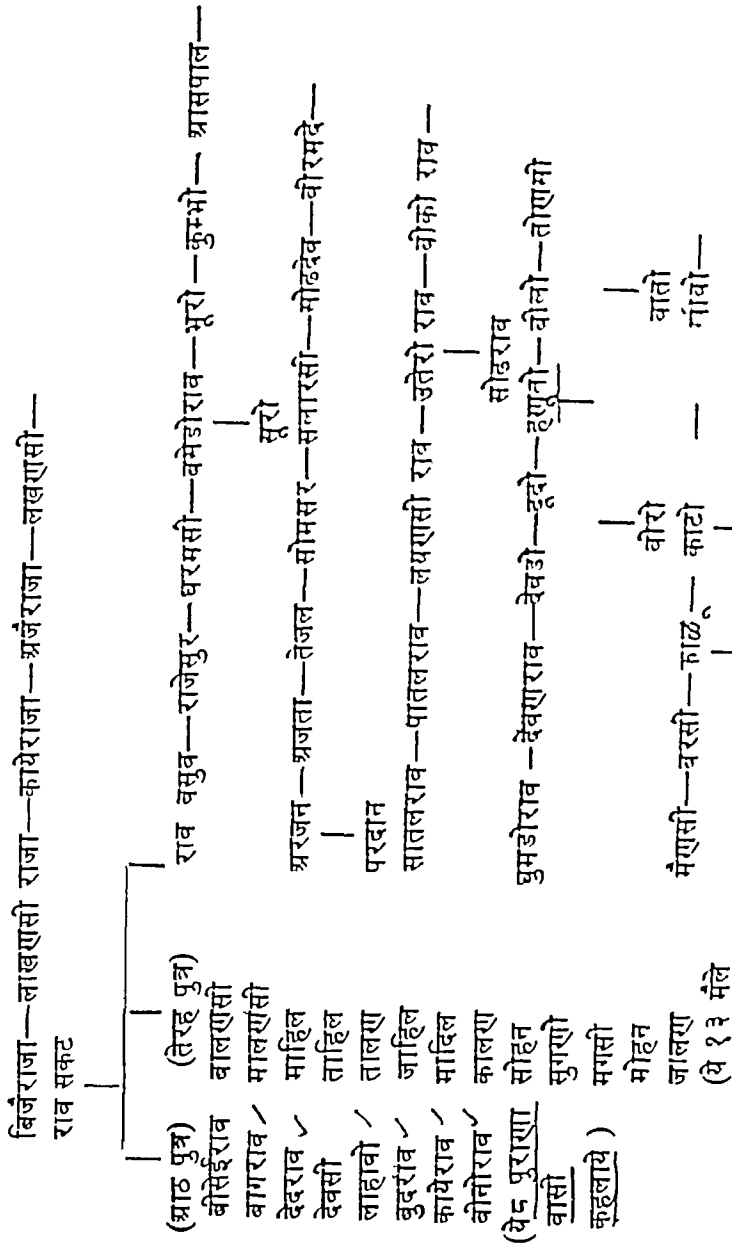
मीणे कहलाये) करणो घूमो

सुलखण
- — चूहड (बासखो)
- — लाहड (पळासाणो)
- — चदो (चादडोड)
- — चोडो (काणूतो, हरडी)
- — दोपाळ (बस्सी, टोंडो, रामपुरो)
- — उदैपाळ (दीपुरो)

टिप्पणी— बसुराव ने बासखो का खेडा बसाया जिसके बासखोवा मीणा कहलाये ।

बागराव ने बुदस	,,	बुदस	,,
देदराव ने दादा का	,,	ददरेडा	,,
हटराव (?) ने हटावळी का	,,	हाटवाळ	,,
लाहोराव ने लुहारी का	,,	लुहारा	,,
बुदराव ने बुदस का	,,	बुदस	,,
कायेराव ने कायस का	,,	काहिल	,,
विनोराव ने वैनाड का	,,	वैनाडा	,,

देवड़वाल वंश

अतरेव ऋषि

— सादरो
— मादरो
— भूरो
— भूतण
——सूरो—देवतजी—मात्रोजी—लाखोजी—सायमलजी (साहो)

भरत—खींवसी—देवसी—जगसी—बीजो—नोपो—गातो—किरानपाल—सूरपाल—हमनपाल — मैणराज—देवराज—मेवोराव—दीपचद—भागलो—जोगराज—भीवराज—जीरदो— जोणसी— जैंतमी — लाखणसी—बीखोराव—वडरावत (बिचलाणो-वगारो), झोळराव (झोळ), मोठराव (माणूतो), अळगराव (अळदो), सोढलराव—(सावळो करेडो), नाहिलराव (नाहिल भोमिया हुआ नायना बमाया) गायल (कानोत वश चला), चगराव (स्यामपुरो), खेतोराव (खैरवाळ), कान्हडराव (काटकरावा, रामपुरो),

सुखराव } (दिनटाणो देपुरो, आकोदो, वैनाड(
अमलराव } (जावळी)
लोमानराव } (खोह दरीबो महापुरो)
गागोराव }

विरजूराव (नेवर), मगळसिंघ भोमिया

टिप्पणी— इसकी उत्पति ब्राह्मण वश से है। अ तरेव ऋषि के घर मे दो स्त्रिया थी। एक हरिराम ब्राह्मण की बेटी देवमणि और दूसरी टीका दोड की सापा सीहरी थी। देवमणि के पेट से १२ कन्यायें और भूलण नाम का एक पुत्र हुआ, जिससे बनावळा गोत्र के हरियाणा ब्राह्मण हुए। सापा सीहरी से चार पुत्र हुए, जिनके देवडवाळ मीणे हुए। चारो ने बिचलाणा मे राज्य किया।

राव लाखणसी के पुत्र राव वीखो के दो स्त्रिया थी। वडी रानी राव रणवीर की पुत्री सुपमा ऊपाहरी और छोटी खरत महर की पुत्री पारा। दोनो के १५ पुत्र और तीन पुत्रिया हुई, जिनके नाम लालो, लुमेदो और सुषमा थे। ये लडकियां वडी पराक्रमी थी।

वीखा देवडवाळ के पास जळहरी घोडी थी। घर के डूम ने वादशाह अलाउद्दीन के आगे घोडी की तारीफ की। वादशाह ने कछावा मळसी को पत्र भेजकर घोडी मगवाई पर वीखा ने इनकार किया। राव हम्मीर पर चढाई करते समय अलाउद्दीन ने लेनी चाही तो झगडा हुआ, जिसमे पुत्र-पुत्रियो सहित वीखा का सारा कुटुम्ब काम आया। नाहिल और मगळसिंघ दो वेटे भोमिये हुए जो आज भी क्यारा में पुजते हैं। वीखा की तीन स्त्रिया भागोती, रामा वीरा, सती हो गई। पन्द्रह लडको के लडके (पोते) इक्कीस लडाई मे वचे, जिनके अलग-अलग खेडे वसे। सवत् ३७९ मे राज गया।

मांढ्या वंश

मादडराजा
|
कावटराजा
|
विजल राजा, वडगुज राजा, धूमराजा, उदरोराजा, श्रीचन्दराजा
|
- कान
  |
  छालो, मेदल, कल्याण, मोफळसी, अजयदेव, विजयदेव
  |
  - अलणसी
    |
    मगसी
  - जगसी
    |
    कवरसी—रावसी—काळ—सूरसी—पाचू—रेहू—माढो—पीपो—पातिल—टोडो
- वीकान
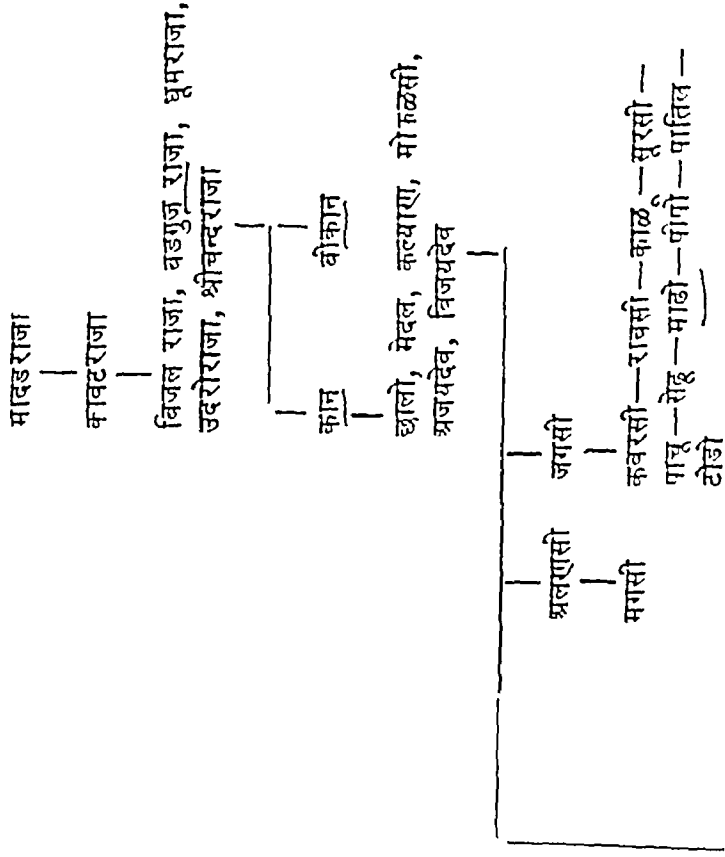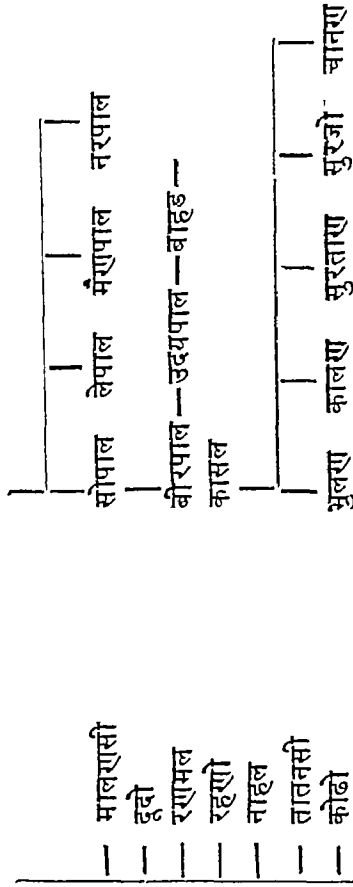
टिप्पणी—इस वश का उद्गम 'देवती' से है। यह सूर्यवंश माना जाता है। वहा से घाट, काकरेल, तथा 'ढढ' मे क्रमश वसते गये। राजा ईसर के तीन पुत्र माडराज, सेसराज तथा घुसिगराज थे जिससे क्रमश माढया, सिधल तथा घुसिगा वश चले। काकरेल के हरनारायण के पुत्र आलोजी तथा मालोजी थे। मालोजी के चानण और सावत नामक पुत्र हुए। सावत की सतान 'ढढ' मे बसी।

छापोला वंश

उदैनाद ✓
|
छोलगराव
|
वालोराव
|
सोहनदेव
|
चूंडोराव
|
तुणदेव
|
माडलदेव, गाहडदेव, सुलखणदेव,
राव वालणसी, रावदेवसी, राव पालणमी,
राव वीरभान, राव वीरदे, काळोराव,
नहनु राव, राव सोढदेव, छारो राव,
जादरो राव, माहा राव, मलगरो राव,
भागलोराव, मोहील राव, उमाऊराव, (मावतो वगाया)

—चुढो(राव
—गढरियोराव (गुढा वगाया)
—पुखराव (पाक वसाई)
—भाजोराव, (जहाज वसाई)
—गुरडराव, (गिरावडी वसाई)
—नाडोराव, (मावडा वसाया)
—पोपराव (पापरोणी वसाई)
—जाहानोराव (जहिनो वसाया)
—तुडराव (तोदो वसायो)
—गुरुदेव (गेट वसाई)
—गुणराव(गणेसर गावडी वसाई)
—वागोराव (वागोर वसाई)
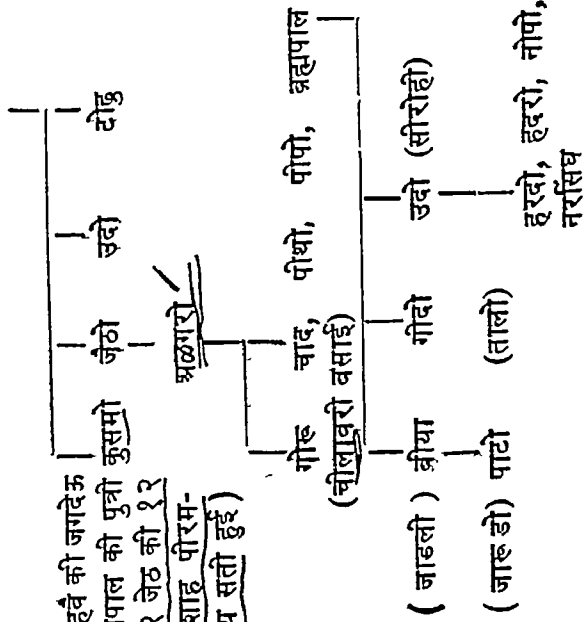
टिप्पणी— पवारवशी छोलगराव ने सवत् २७२ मे छापोलगढ वसाया :—

मालदेश धारानगर, माडूगढ नीकास ।
मेरूगढ की आड में, छापोलगढ किय वास ॥

छापोलो का वश अलगरा से चला । सवत् १३८३ मे बादशाह अलाउद्दीन के समय मे केड में नवाब का राज्य हुआ तभी से छापोलो का राज्य समाप्त हुआ ।

उमाऊ राव ने छापोली के आगे तालाब बनवाया । राजा उमाऊ की पुत्री चन्द्रमणि पद्मिनी जाति की सुन्दर स्त्री थी । घर के डूम ने बादशाह अलाउद्दीन के आगे तारीफ की । बादशाह ने मीणा राव से डोला मागा । मना करने पर बादशाह ने बुलेलखा को भेजा ताकि उमाऊराव को गिरफ्तार करे और चन्द्रमणि को लाये । नवाब ने छापोलीगढ पर आक्रमण किया तो बारह गावो के मीणे इकट्ठे हुए और लडाई मे १४० मीणे खेत रहे । उमाऊराव अपने चारो बेटो के साथ मारा गया । उमाऊ की स्त्री अपनी लडकी तथा चारो बहुओ को और एक बच्चे को लेकर गाव चिलावरी पहुँच गई । उस लडके का नाम अळगरा था ।

देवान्दा वंश

राजा खेमपाल १
|
अजयपाल
|
जाहलराव, गाहलराव, वलराव, मेहडराव, बाहलदेव, खीलणदेव, नरदेव, बागदेव, सोहणदेव, सोढदेव, राव किलण, राव हन्सदेव, श्रीपाल, राव बालणसी, राव देवसी, राव आलणसी, राव भीवसी, राव मगसी, राव खेतसी, राव पालणसी, राव मैणसी, राव किलणसी, दुबगरो, राव घणीयो, राव कान्टो
|
रूपसी (चौंड)
—हवो (लवाण, गुणावतो, जोदडहाळो, छोटी सांमोद)
—पाटो
—करणसी (करणोढगो)
—धारू (टौंकण)
—सोमसी (बुदस)
—जोखराज (खुरी)
—सोनपाल (खुराड)
—खोरियो (दणाऊ)
—जगू (वन्दायको)
—भीवसी (सामोत)
—वादू (मादडवास)
—नेंतो (नणख)
—बागो (बगवाडो)
—चाढो
—तूणसी (कलवाडो)
—कालो (कालवाड़)
—चौंड (चरोइया देवान्दा कहलाये)

टिप्पणी— अग्निवशी राजा खेमपाल ने समरमती नगरी को छोडकर खुराड़ मे सवत् २८२ में राज्य स्थापत किया। पीछे राजा देवसी ने देवन्द मे सवत् ७७२ मे राज्य किया। राव काटा से सवत् १०३१ मे काकलजी कछावा के समय राज्य गया।

वैनाडा वंश

राब सूरो

|

राव बीनो, राव तेजपाल, राव मादत,
राव सुलखण, बीजो राव, राव सुरतो,
राव जोगसी, राव सकतो, राव धनसी,
हाडो राव, राव मोकलसी, सोमेश राव,
सुगणो राव, किशन राव, नायल राव,
तेजल राव, हेम राव, रतनसी राव,
अमर गगेव राव, अर्जुन राव, पूनो राव,
राव लोडो, राव धूड़ (बडी रानी, सातल की बेटी चाहु ब्रामणवाळ के १२ पुत्र २५९
तथा जाड मोड़ की ब्रिरा ब्रिण-
जारी के, जिसको झगडे मे लाये,
५ पुत्र हुए।)

राव धूड़ के पुत्र:
- दामो (कुण्डल)
- थानो (भावतो)
- हरराय (भावतो)
- कररो (देलाडी)
- भावत (द्वारापुरो)
- जगमी
  - उदेसी
    - मोकळमी
    - अमल
    - बीजल
    - जीयो
    - सोवो

—वाहड
—दूहड
—नीमलो
—गाहड
—ग्रमदो

टिप्पणी—यह गौत्र अग्निवशी है। राव वीनोजी ने समरावती नगरी से आकर वैनाड मे राज्य स्थापित किया तथा सवत् ११२ मे गढ–कोट वनाये। पीढ़ी २४ वर्ष १०५४ तक राज्य किया। राव घूड से संवत् ११४६ मे राज्य गया। राजा पजवरा कछावा ने राज्य लिया।

मांडल वंश
उदयादित्य—जगदेव—जगपाल—
उदेनाद
हरीपाल
सोमोसावत—माचदेव—
उदेराव—जगपाल
सीगोराव
(माची के सीहरो का
वश चला)
—उजगो–वेलो (वेला वश)
—माडल (माडूगढ वसाया)
—छालो (छापोलीगढ वसाया)
—दूमो (दूमोली को खेडो)
—धूमो (धूमोणा कुम्हार हुए)
—वाहड (सतान वडवा हुई)
—जूणो (जूणिया लुहार हुए)
—सूना (सूना थोरी हुए)
—माडो (खुराड के देवादा मीणा)
—जाटो (जाटावत वळाई)
—काळो (काळावत माळी)
करणपाल
जैतपाल—सोढपाल—खेमपाल—इन्द्रपाल—धर्मपाल—किसनपाल—
सूरतपाल—वीरदेव—वसुपाल—स्यामपाल—परतपाल—जोगपाल—
नेतपाल—दुइनपाल—महीपाल—रहणपाल—विजयसेन—वाहुसेन—

उदयसेन — भोजदेव — सोमदेव — लालो—
होलो — रणधीर — नाढो

घरमसी (आगरा) | धीरो (धैथल) | गोगो गोगावास) | नारू | व्यानो (काकरेल)

नारू: सीगो | मगो* | सेढू

सेढू: लालो | बालो | होलो | देवण

होलो — धीरो

धीरो: हरसी | भहरसी

हरसी: करमो, (मंगी) | नहनु, (लागडीवास) | कानो,

नहणपाल (पापड)
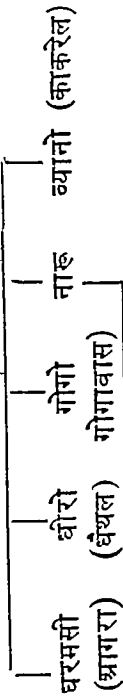
* (मगा, सीगा दोनो भाइयो ने महात्मा गुलाबनाथ–थरनाथ की सेवा की । मगा का विवाह नाथजी ने गाव दातली के राव जोधा व्याडवाळ की लडकी मागी से करवाया । मगा ने सवत् १२७४ मे मंगी का खेडा बसा कर गढ बनवाया ।)
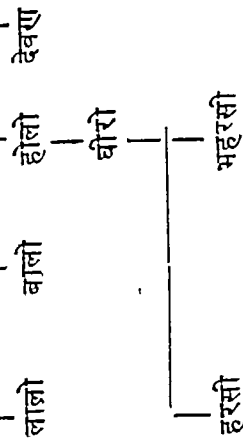
टिप्पणी— पवार वशी राजा माडल ने धारा नगरी छोड़ कर माड्गढ़ का राज्य स्थापित किया सवत् १५२ में। पीढी २५ वर्ष ११२२ तक राज्य किया। फिर माडलो के सात गाव हुए।

दोहा—मागी (सू) मैंगी वगी, मागी म्यारण जोय।
दातलगढ दीयो जुपै, मैंगी दीखै लोय॥ @

कूदा के माडलो से प्राप्त जानकारी के अनुसार ये लोग छापोली (झूझनू) से जिलो (नीमकाथाना) आमलोदा (गठवाडी–जयपुर) होते हुए कूदा आये। ये लोग छापोला माप के ही हैं। सवत् १६४६ मे मानसिंह कछावा से १०२०) पेशकश देकर यह गांव पीपाजी माडल ने लिया। पीपाजी के गुरु का नाम 'घू घळीनाथ' था जिनका स्थान प्रतापगढ के किले मे है और समाधि टोकरा घाटी मे है। इन्ही महाराज द्वारा बताई गई तावे की खान से पीपाजी तावा निकालकर दिल्ली लेजाया करते थे। व्याडवाळो से हुई लडाई के प्रसग मे ये वादशाह के यहा न्याय के लिए गए और वहा कैद मे आपस मे आधी–आधी रोटी वाटने और एक घडे से ही पानी पीने के कारण वादशाह ने स्वाभाविक न्याय कर जमीन को आधी–आधी बाट लेने का आदेश दे दिया। दातली के राजपूतो से मिलकर व्याडवाळा ने पीपाजी पर आक्रमण किया। उनके पुत्र कान्हा ने युद्ध किया और उसकी मृत्यु का समाचार पाकर पीपाजी ने आत्महत्या की। मेंगी माडनो को व्याडवालो से दहेज मे मिली वतायी।

"म्यारण की माम माडता रागी"
मानै हेड समाप हाथी, दे गाडो गजगाज, माडन गू छ्गाळ
दैताळ दोख्या तणो, कविया मानण साच
सुलताना आणा वचै, नाथू करै चुकावै न्याव
हिगळदे हठमाल रा, म्हानै दीजे जो चरता जाडाळ
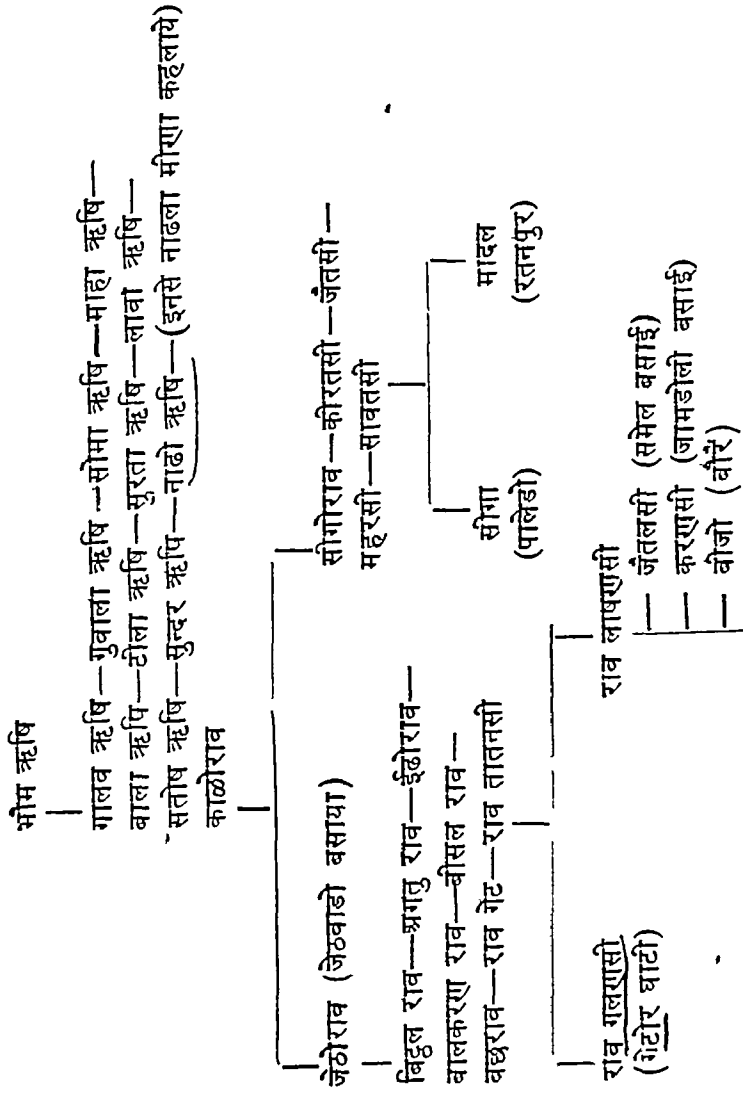
नांढला वंश

भौम ऋषि
|
गालव ऋषि—गुवाला ऋषि—सोमा ऋषि—माहा ऋषि—
बाला ऋषि—टीला ऋषि—सुरता ऋषि—लावा ऋषि—
सतोष ऋषि—सुन्दर ऋषि—नाढो ऋषि—(इनसे नाढला मीणा कहलाये)
काळोराव
|
- जेठोराव (जेठवाडो बसाया)
  |
  बिट्ठल राव—अगतु राव—ईढोराव—
  बालकरण राव—बीसल राव—
  वछराव—राव गेट—राव तातनसी
  - राव गलणसी (गेटोर घाटी)
  - राव लाषणसी
    - जैंतलसी (समेल बसाई)
    - करणसी (जामडोली बसाई)
    - वीजो (वौरें)
- सीगोराव—कीरतसी—जैंतसी—
  महरसी—सावतसी
  - सींगा (पालेडो)
  - मादल (रतनपुर)

तेजपाल

लानगढ गेगो —
वस्सी भोगो —

— रतनसी (पालेडो)
— मोलो (मेवर, लावा, बोरखडी, आगरी, अजमेरी)
— सीहगो (तीनो भाई बूज मे वसे)
— बीसो (फागूतो)
— नोपो

टिप्पणी— इम वश की उत्पत्ति ब्राह्मण वश से हुई हे। मूल स्थान गूर्जर देश मे पाटणपुर था। नाढो ऋषि ने गलता मे तपस्या की। उम समय खोहगग का राव चादा मीणा स्नान करने आया और ऋषि से सतान-प्राप्ति का वर मागा। ऋषि ने यह वचन लेकर वरदान दिया कि पहली सतान ऋषि के भेंट चढानी होगी। राव के इला नामक लडकी तथा सुपेण नामक पुत्र हुआ। इला को वचन के अनुसार ऋषि के भेट चढाया। ऋषि ने समय पाकर लडकी से विवाह किया। इसी के गर्भ से हुई सतान नाढला मीणा कहलाये। इन्होने सवत् ७३५ मे जामडोली, गेटोरघाटी, जेठवाडा मे राज्य स्थापित किया। सवत् १०११ मे दूलहराय के समय मे नाढलो का राज्य गया। गेटोर मे राव गालणसी तथा जेठवाडे (झोटवाडा) मे जेठराव वडे दानी हुए।

ध्यावरण वंश

सुन्दरबल
|
चितरंग
|
बाढदेव—देद—सरीपाल—सौपाल—
विणदेव—भोजपाल—मगपाल—सुरपाल—
श्यामपाल—रतनसी—किशनदेव—
सोमराज—जुझराजा—जावलराजा—
दुलसरो—तोणपाल—अनयपाल—बैनपाल—
रावतातनसी—देलोराव
(चौंडोजी)

धरमसी | भीवड़ो

धरमसी →

आनो (कूथाडो) | बीजो (चित्तौडी) | पचोईण (झर)
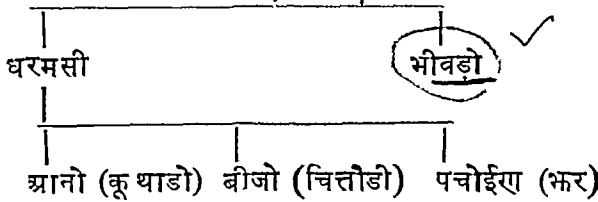
आनो →
भीवसी, हरसी, नगद्रु, हाहड, सोठ (साहो)

टिप्पणी.—यदुवशी राजा बाढदेव के पुत्र देद ने बाड़मेर से आकर 'ध्यावरण' गाव सवत् २८४ मे बसाथा और पीठी १९ वर्ष ८६९ तक इनके वश ने राज्य किया। सवत् ११५३ मे देला के भीवडा के समय मे राज्य गया। राजा मळेसी कछावा ने झगडा करके राज्य छीना।

भीवा का विवाह राव नाथू सीहरा की पुत्री शशिवननी से हुआ जिसके कोई सतान नही हुई।

"राव भोणा का खाडू खा रिया, देस मे मरद मोणा ध्यावरणा"
"नट्यो इन्द्र आकास, नट्यो पाणी पाताळा
नट्यो दुनी को दान, नट्यो हादर हवताळा
बैर भट समत भीखाहरो, गढ ध्यावरण मे चत चोगणो
चौंडोजी जी दिन चढयो"

ब्याड़वाल् वंश

चीतरग
|
वाढदेव
|
- लोहट
- देद (बाढ का खेडा से देद ब्यावरो हुए)
- दुद (लाहड बसाया)
  |
  उदैराय, नोहन्दराय, रायपाल, राजोपाल, सोढदेव, कीलमढली
  - कूचोराव १३ पुत्र, गाव ५—मगलूणी, पूनरपाडो, रासूपाडो, गूजरपाडो—आठ गाव-टोडावाटी मे, चोरासी खेडा दातली के प्रभाव मे (राव जोधा की मळकी वांदी टोडावाटी के खेडे मे)
  - लाहोराव
  - रावकालणसी
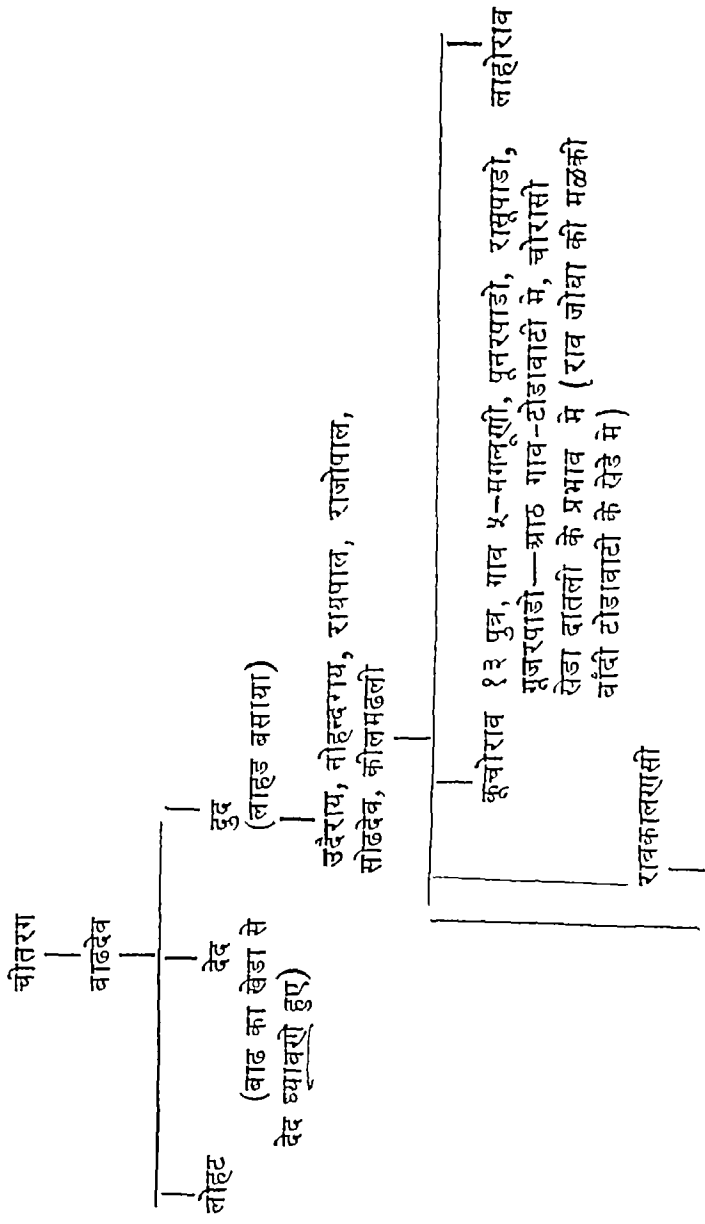
जगराव–सतराव–नाहड़राव–बलराव–
राजोराव–सागोराव–जालोराव–बीजलराव
वाहड़राव–रावबादो

तेजपाल

बीरपाल, नेवरो, लोहट, टुढोपारगी

जालणसी — जैतल — पसोराव

राजूराव—सेषोराव—सोबोराव—काळूराव—
कणोराव, काळूराव, सापाराव
होहो (दातली बसा कर राज किया)

नोलो — गोदू (नहडा को नटाटो बसाया) — फादू — घीसो (काणी खोर) — सुरजन — म्यालो — उतनो — बाढ दे (रायसर का खेडा)

बादो षरथ नाहरो (बोरोय)

- बादो
  - रायजादो, (दातली को खेडो)
  - सायजादो
- षरथ / नाहरो
  - नाथू (नेवटो, पडाक छापली, फळासानो, बोरोटी)
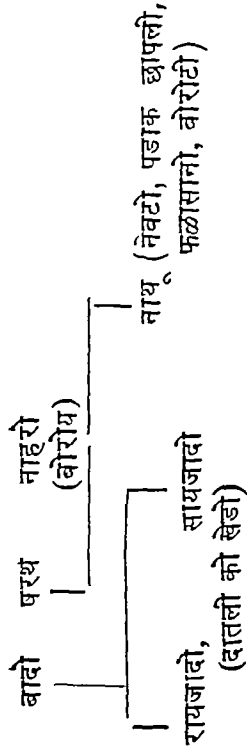
टिप्पणी—यदुवशी राजा बाढदेव बाडमेर मे राज्य करते थे। उनके पुत्र दूद तथा देद वागड छोडकर गाडियो मे सामान लाद कर बाणगगा पर आये। गाडियो के वजन से पृथ्वी से पानी निकल आया और बाणगगा ने स्वप्न मे दर्शन दिए। दोनो भाइयो ने वही रुक कर बाढ वसा लिया और दातली नामक गाव बसा कर कूए, बावडी, तालाब तथा बाग आदि बनवाए। सवत् २८२ के वर्ष मे दातली वसा कर २२ पीढी पर्यन्त ९६६ वर्ष तक राज्य किया। नड्हट दातली के खेडे। सवत् १२४८ मे राव बादा से राज्य गया। राजा रासदेव कछावा के समय मे राज्य छिन जाने पर राव बादोजी ने दूसरी नाहान मे राज किया। नाहान का राज मळेसी कछावा ने लिया।

दोहा

नाहन नृप बादो भुपत, मानै (नी को) काण।
अकबर कर (चावै) घणो, सूवो भरै न डाण॥

सोरठा

अडभडिया उमराव, अकबर उभकै आगरै।
पडत न देवै जाण, सिंघ जिम बादो राव (वर)"
अकबर बूझै भारमल, मीणो नह दे डाण।
मनमानी बादो करै, मानै (न) मुगला काण॥

दातल वाजा बाजिया, भरी रुपियो नीसाण।
बादा मीणा नडैठ का, जीकी बादस्या मानै काण॥
'राव बादा को बीजणो, बादस्या को घरबार"
बारामण की ढाल, कट्टारो मण आठ को।
गोडी ढाळ बादो बैठ्यो, बळ काढ्यो वैराठ को।"

गोमलाड़ वंश

भोमा ऋषिसुर

|

नाहानदेव

|

धोम ऋषि—शोभा ऋपि—नाहर ऋपि—ढाह ऋपि— करण ऋपि—मगल ऋपि—सुरताऋषि—करणसी ऋपि—सतोप ऋपि—गर्ग ऋपि—विजयदेव ऋपि—दोम ऋपि—गगेव ऋपि—चाणक ऋषि—गुज ऋपि—बिजलदेव— आसदेव— वछदेव— सिवदेव—विजैदेव—बासुदेव—राजा सुलपण—मनुऋपि—

चौहढ ऋषि

|

- रावचौंड
- मात्रोराजा (दो रानियो से बारह पुत्र तथा तीन रानियो से चौदह पुत्र हुए ।)
  - लालो (लवाण)
  - लाखण (चावड्यो)
  - दातो (दातरी)
  - जस्सू (जसूती)
  - सणगारो (दौसा)
  - खेरो (खुरी, वापी)
  - राव गालणसी (गुलाणो)
  - काटोराव (काठरवाडो)
  - राव सुलखण (सीणोली-वडोली)
  - सरजो राव (जसूतो)
  - नाहोराव (नीम को पाडो, भूडलो, ढुगरावतो)

— चारू (चोरवाडो)
— घूणो (धरणवास)
— जहाजो (जहाजपुर)
— दौलो (टोड)
— पाटो (पाटोली)
— भोजो (ढढ)

— सुगरो राव (सागर, बावडी, दौसा)
—बीगोराव (बुगलो)
—नीबोराव (नीमोरो)
— पाटोराव (पाटण)
— रावभोणो (बपोई, गीणोही)
— चेतोराव (चित्तोडी)
— धरमान (धीरवाडो)
— नगराज (नवोगाव, ढुगरावतो)
— फरमटो (काणूतो, दयारामपुरो, हरडी)

टिप्पणी— इनकी उत्पत्ति ब्राह्मण वश से मानी गई है। मूल निवास गूर्जर देश, भामोर खेडो, कोशावती नगरी है। ये गौतम गौत्रीय गुर्जरगौड ब्राह्मण हैं जिनका 'सासन' भर्मोरा है। द्वापरयुग मे विणीहोत्र ब्राह्मणी के गर्गव पुत्र हुआ। गर्गव के गर्गभोमी हुआ। गर्गभोमी ने राजा मणिमान मीणा क्षत्रिय की पुत्री गोमिला लाडवती से विवाह किया जिसके गर्भ से गोमिलदेव हुआ जो अपनी माता के नाम से गोमलाड कहलाया और उसने मीणा क्षत्रिय पद ग्रहण किया। कलियुग के आदि मे सामरमती नगरी मे निवास किया और सवत् २१२ मे इस वश के नाहनदेव ने नाहनगढ मे राज्य स्थापन किया और नवनाथ महादेव की स्थापना की तथा किला-कोट बनाया। विक्रम सवत् ३३२ से आगे २६ पीढी पर्यंत राज्य करके राव चाढो व मात्रो ने काकल

कछावा से सवत् १०९९ मे झगडा किया। सवत् १६२६ मे कछावा भारमल ने नाहन को समाप्त किया। नई का महादेव गोमलाडुग्रो का बनवाया हुआ है।

बावनगढ नोबत घुरै, छप्पनकोट जुहार।
बादोराजा नाहन को, म्यारण वड सिरदार॥
पहली तो ढोल बाज्यो, हडपा डोबवाळ को।
बाजै ढूढाड मे ढोल, बळवत बादाराव को॥
कपटी राजा भारमल, घणा देखता दाव।
बेटी राजा भारमल, दीन्ही अकबर हाथ॥

सीहरा वंश

हरीपाल राव
उदयनाद
सोमोसावत
राजा मांचदेव—जगपाल राव—सीगोराव—भोपाल राव—महापालराव—देवपाल—
किशनपाल—हरीपाल—सुरपाल—सोमपाल—विजयपाल—करणपाल—लाषणसी—
नरबदराव—करणो राव—भाणो राव—सागो राव—जयमल राव—किशन राव—
केसोराव—चौंडोराव—ग्रासदेव—कीलणदेव—राव ग्रासपाल
रावनाथू
रावभोणा
काळूराव (बसवो, राजगढ़)
सेडूराव (खरकडो, पालडी)
गुढरोराव (दिसटाणो, केलाई, बीलोपाडो)
इसके गुढरावत सीहरा हुए
राहोराव (राहोरी)
बगडोराव (सोलेटो, इन्दोख, मेजोड, कानपुरो, बस्सी)
लाहोटराव (साहो, पालडी, मेदोरपुरा)
लाहोराव (रेणी, परबीणी, भोजपुरो, नागळ, भूपडचा)

आसदेव (माच–रामगढ)	(कोट)	(कीलणवा) इसके बेल सीहरा हुए

टिप्पणी— उद्गम स्थान—धारा नगरी से सोमो सावत के पुत्र राजा माचदेव ने राजस्थान मे आकर सवत् २५२ मे माच मे राज्य स्थापन किया और किले-कोट-महल बनवाये। राव सीगोजी ने देवी दातमाता पूजो और देवी का मदिर करवाया। सवत् ३५२ मे पूर्व की ओर भाकती हुई मदिर की सीढिया बधाई। २५ पीढी ७९५ वर्ष तक राज्य किया। राव आसपाल ने सवत् १०१७ मे ठाकुरजी का मदिर बनवाया। सवत् १०४७ मे कछावा काकल से भगडे मे राव नाथ से राज्य गया।

राव मेदा के दो रानिया थी। बडी रानी, हाहड की पोती, सालगराम की सुखबाई, गोत की मादड, रजोली की तथा दूसरी रानी पूरण की परमा मारग, गाव घटवाडी की जिसको मेदोजी दौड मे लाए। के गाव—खोवो, बडवो, पळासोली, लालवास, भानपुर, महसरो, कैलाई, दुव्वी, दौसा की भूपड्या, बेला की, दीपुरो, भोणाहाळो, मेन्दोरपुरो लोठवास, बडोली, धनिपुर, नवोगाव, परोथा को बास और व (?) ऊपर लिखे सब सीहरा परिवार के है। माच टूटने के बाद अनेक गावो मे बस गये।

दोहा— अडभडिया, भड बाकडा, चाग गिरदा खूट।
आपसरी की फूट मैं, मची चाग मे लूट ॥
लायो गाय छुडाय कै, चीता किया गरद्द।
माच नगारा बाजिया, मेदो वडो मरद्द ॥

चढियो मोणो सीहरो, हुई हलमूल पचवारै ।
देळी लूटं सरदकरी, रावजी ढोला कै घीकारै ।।
मैंडी बैठ्या मद पीवै रावजी छात्या चौवारै ।
सीहरा साख सारै सुणी, देख्या सिघा बोसा सारसा ।।
बडीमाच बैठणो, बडैई दरबार बडाई ।
वासै सिघल दात, सीरा नै राम देई रोहताई ।।
खरा खान कहकर गया, बाकी का गरदण मारचा ।
ऊचै राव ग्रासो बसै, जिसू निरा बादस्या हारचा ।।
तू छै चोळ मजीठ, रगिया सूम कसूम ज्यू ।
उड उड जाय पतग, (तोनै) स्योगण जायो सीहरा ।।
मेदाजी कान्ह रूप कसासुर खेलै तट जमना की तीर ।
म्यारगा की पत मेटा नवलखा, ज्यू तारो की पत चद ।।

चांदा वंश

रावचन्द्रसेन—राव बुधसेन
महासेन—भूरपाल—देवपाल—राव बीजल—राव बालणसी—राव उदैंकरण—
राव भूपाल—किशनपाल—राव पीथा—राव जोणसी—राव माणिक—राव जैचद—
सोढदेव—अभैचन्द—रैण राव—गोणोराव—सतनो राव—
राव श्रीधर—राव सुलपण—राव आलणसी
श्रीपाल (सीरोली)
रोपाल (खोरी रोपाडा)
अनसो (दातलो, भाखरी गोगावास)
हरीपाल (हिगूण्यो)
रैण (नायलो कूथाडो, राण्यावास
ढोवो (बोरखडी)
बीरो (बूढथळ)
जोगो (भटेमरी कानडवास)
काळू
कुजरो (जटआडो)
कान्हो (आभानेरी, होकण, पाटण, स्यामपुरो)
ताठो (तूगो, म्याळ्यावास)
आनो (आभानेरो, वडोली, रामचदपुरो, पाचगाव पचवारा मे)
कोलो
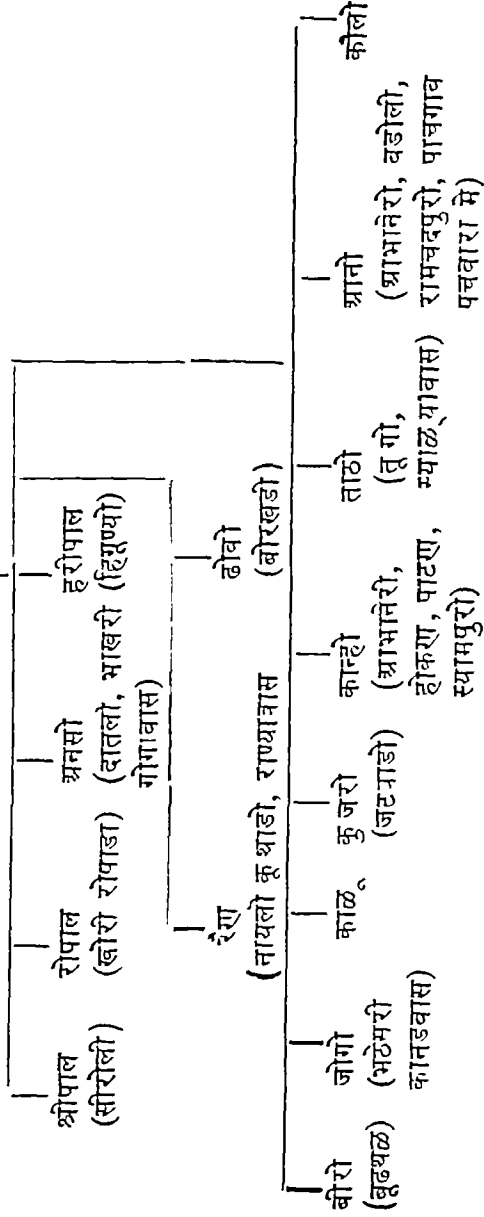
टिप्पणी—इस वश की उत्पति अग्निवश से है। राव चद्रसेन चादा मीणा (महिष्मती नगरी) को त्याग कर चादोड़ नामक स्थान मे और वहा से आकर खोहगग' मे राज्य-स्थापन किया तथा गढकोट बनवाए और कुवे, बावडी और तालाव भी बनवाए। सवत् २२१ से लगाकर २२ पीढी ७७६ वर्ष तक राज्य किया। दूलहराय कछावा ने धोखे से लडाई कर आलणसी चादा के कुटुम्ब का सहार किया। तभी सवत् १०१० मे खोहगग से चादा मीणो का राज्य समाप्त हुआ। राव आलणसी की प्रशस्ति का काव्य इस प्रकार है —

सुलखण सुत आलण भया, म्यारण कुळ अवतार।
नग्र खोह चादा भयो, सूरवीर दातार।।
चहु दिश सुत आलण तणा, सोभा भनो अनूप।
सका माने गढपती, आलणसी बडभूप

विशेप—इस वश के राव अभैचद (रावमैण) से चीता मीणो की उत्पत्ति हुई।

सुसाव्रत वंश

सु दरबल

सोमो | रावभरत | श्रीपाल

रावभरत —

जोधराव— ब्रहपाल—मादरो राजा—बेनप्राल राजा—उदरो राजा—डूगरसी राजा—देहडराव—नगराजा—भीनसी राजा—भडसी राजा—बीजलो राजा—सोढदे राजा—सोहणदेव राजा–कु तलदेव राजा–कोहिलदेव राजा–मेनपाल राजा–मोहिलदेव राजा—मळेसी राजा (वडी राणी जादम केसरदे से तेजपाल नामक पुत्र और छोटी राणी राव मोकलसी की पुत्री जोधी वैनाडी से धरमसी नामक पुत्र हुए।)—धरमसी राजा—लालो—म्यालो—देहड—हसन

हसन —

सारग | नाहानो | मालो

नाहानो —

सोमो, ब्रहपाल, नाहन, मोती, सुसोपारगी

20×85

सूरो (नागळ)	बीनो (नटाटो)	सीदो (सामरैड)	चापडो (होकरा)	भूरा (मामटोरी)	सूजो (भालारा)	हसन (पेलसरा)
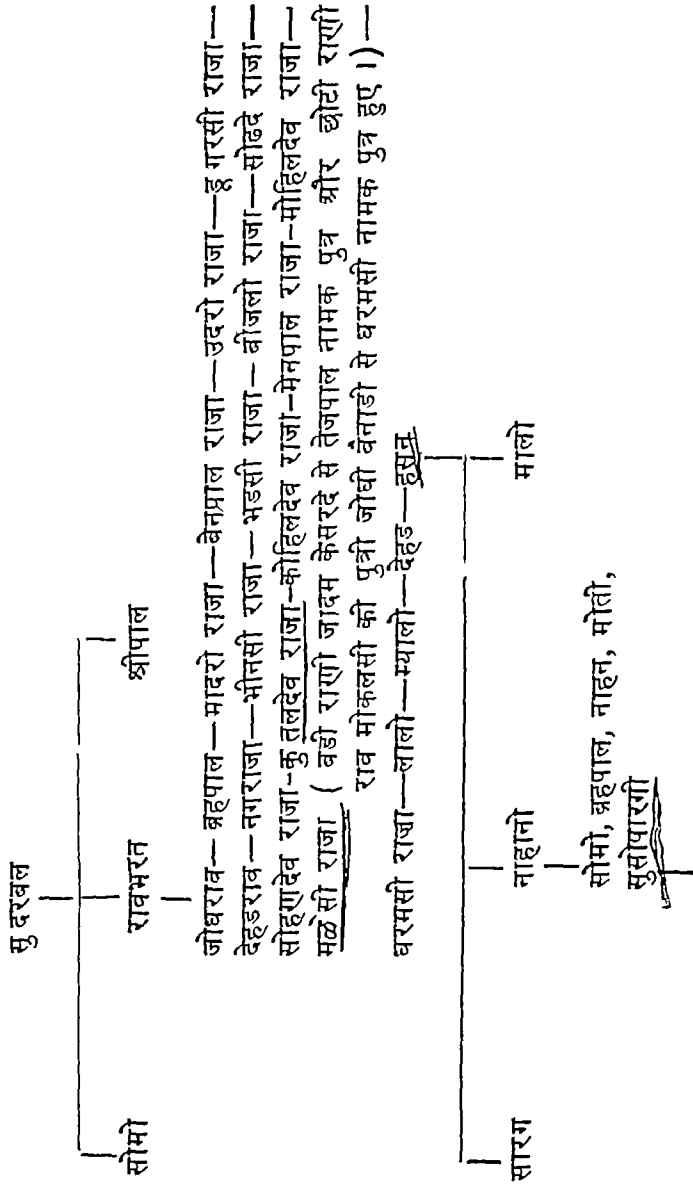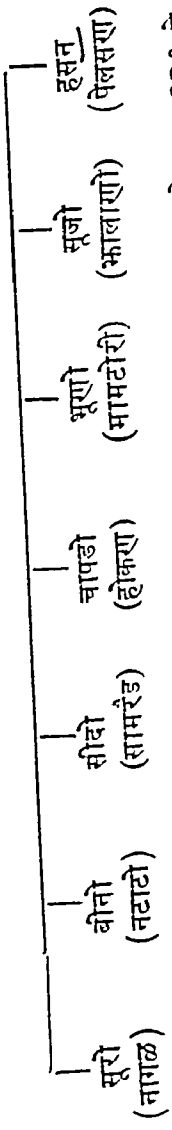
टिप्पणी— मुसावतो का उद्‌गम भटनेर के भाटी (यदुवश) से है। राव भरत ने सवत् २२१ मे आमेर मे आकर राज्य स्थापित किया। वर्ष ८७२ पीढी २१ तक राज्य किया। बाद मे मळेसी मीरा से कछावा दूलहराय ने भगडा किया। दीवाली के दिन वध तालाब पर पितरो को पानी देते समय राणा (डूम) के द्वारा भेद बताने पर कछावो ने मीरा का सहार किया। सवत् १०२१ मे मळेसीजी मीरा से आमेर का राज्य गया। कछावा रासदेव ने मिती कार्तिक बदी १० को आमेर मे अधिकार किया।

आमेर मे राव कुतलजी मीरा ने सवत् २३२ मे किला-कोट बनवाया जिसकी प्रशस्ति निम्न प्रकार है —

कई नरदा मद हरयो, भूयसु राज्ये राज ॥
कुतल कोट खिराइया, बाध गिरदा पाज। देवी पूजी सीसक्या, बाध परबता मेर ॥
कुतल के कोहिल हुयो, अड कीधी अजमेर। जागा जग सोभा करे, कीरत करण सजोर ॥
मैनपाल म्यारण भनो, मादळ राजकिसोर। हस्ती दीना दाव ने सोभा मनू अनूप ॥
मादळ के सुत जनमियो, राव मळेसी भूप। दोलो चमके फौज मे, ताती रो असवार ॥
आभै चमके बीजळी, रण चमकी तरवार। बाप छता बेटो लडयो, लछमरा राजकुवार ॥
घोडै सैं घोडो अडयो, बगतर सू तरवार।

मेवासी मीरा दोला सूसावत (आमेर) ने रूमसूम के बादशाह से युद्ध किया।

दोला मोला नाहरसिह ढूढाडी ढाल।
हुकम दियो राजा नै आमागढ री लाज ॥

मीणा इतिहास—परिशिष्ट-२

मीणों सम्बन्धी तालिकायें

[सेंसस ऑफ इण्डिया (६६) जि० १४, भाग ५ए, पृ० ११६-१२८ ।

जिलेवार जनगणना

	जिला	कुल सख्या		पुरुष		स्त्री	
		गाव	नगर	गाव	नगर	गाव	नगर
१	गगानगर	२	२२८	२	१४५	—	८३
२	बीकानेर	२३	६७३	१७	५०१	६	४७२
३	चूरू	१००२	७५२	५४५	३६३	४५७	३५६
४.	झूझणू	८६८२	५३२	४५२१	२६२	४१६१	२४०
५	अलवर	८३६८१	२०२७	४४०६६	१०७२	३९८८५	६५५
६	भरतपुर	३०६२५	४३४	१६४१५	२७१	१४५१०	१६३
७	सवाई माधोपुर	२०१८४२	२५३८	१०७८६७	१३६४	६३६७५	११४४
८,	जयपुर	२०६७७५	५४६२	१०६६००	३०३८	६७१७५	२३७४
९	सीकर	१८८४८	६४२	६६४३	५१५	८६०५	४२७
१०	अजमेर	१२६४	३७२	६७६	२१६	६१५	१५६

जिला	कुल संख्या गांव	कुल संख्या नगर	पुरुष गांव	पुरुष नगर	स्त्री गांव	स्त्री नगर
११. टोंक	४७५२१	१०४३	२४३७८	५६३	२३१४३	४८०
१२. जैसलमेर	—	१०	—	१०	—	—
१३. जोधपुर	१६७	१२	५३	७	११५	५
१४. नागौर	१३९२	—	६९४	—	६९८	—
१५. पाली	२१०९२	४१०	११३७३	२२३	९७१९	१८७
१६ बाड़मेर	९६	२५	५४	१०	४२	१५
१७. जालोर	८६४९	४५८	४६८२	२३९	३९६७	२१९
१८. सिरोही	७९६२	१५३३	४०२०	८२४	३९४२	७०९
१९ भीलवाड़ा	३२५२२	५१	१७५४९	२०	१४९७३	३१
२०. उदयपुर	१७१७५९	१६०८	८७७९७	९५९	८३९६२	६५८
२१. चित्तौड	८२९४८	५७७	४२५८२	३९३	४०३११	१८४
२२ डूंगरपुर	४५८५०	२०३	२३६१४	१००	२२२३६	३
२३. बांसवाड़ा	१२९७६	३७	६६९३	८	६२८३	२९
२४ बूंदी	४९२२०	२४१	२६२४८	१६९	२२९७२	७२
२५ कोटा	७७९२७	११९६	४१०८३	६७२	३६८४४	५२४
२६. झालावाड़	२१८१६	२२२	११२८६	१२१	१०५३०	१०१

शिक्षा-तालिका

	पुरुष गाव	पुरुष नगर	स्त्री गाव	स्त्री नगर
कुल	५६५२६४-	११६८७	५३८६४२-	६४२७
अशिक्षित	५३७६८५-	८६८६	५४०१८८-	६१६८
अर्द्ध शिक्षित	४६७४६-	११३४	२५४६-	२४६
प्राथमिक स्तर	४७१४-	२७५	१२०-	८
मैट्रिक तथा ऊपर	६१६-	१५६	३-	२
प्राविधिक शिक्षा	— -	२	— -	—
विश्वविद्यालय स्तर	— -	१३	— -	—

विवाह-तालिका

	पु०	स्त्री
अविवाहित	३०२०६०	२१८६२२
विवाहित	२७८३०७	२८०७२५
विधुर-विधवायें	२५४०५	४७७५२
तलाक दिए हुए	११३८	६'०
अन्य	३४१	३६०

प्रमुख भाषा-तालिका

	पु०	स्त्री
ढूढाडी	११८६१०	१०६४२३
हाडोती	३६३४५	३६६५१
खैराडी	१५४७६	१३६३८
खडीबोली	२७२८०४	२४३५७५
मालवी	६५६०	५६३५

	पु०	स्त्री
मारवाडी	२८०६०	२४६७२
मेवाडी	५४०३४	४८६८७
नागरचाल	२६१०	२६५६
राजस्थानी	४८५३	४०६८
व्रजभाषा	१६०६	१७४६
भीली	४५६	३८३
वागडी	४१०६६	३८६८२

धर्म— मीणे सभी हिन्दू मतावलम्वी हैं और केवल ४ जैन, २ सिक्ख तथा दो ईसाई हैं।

व्यवसाय—अधिकाश मीणे कृपिकर्मी हैं। ३,३४,२४४ पुरुष तथा २,५६,०३१ स्त्रिया कृपि मे ही सलग्न हैं। २,२१,७४६ पुरुप तथा २५,५०३२ स्त्रिया कोई कार्य नही करती, जव कि शेप लोग खेतो पर श्रमिक, पशुपालक या खान-कर्मचारी हैं तथा वागो, जगलो, खदानो, इमारतो, व्यापार, व्यवसाय, सवारी आदि के विविध धधे करते हैं।

संदर्भ-ग्रंथ-सूची

संस्कृत

१ श्रीमद्भागवत
२ ऋग्वेद
३ ऐतरेय आरण्यक
४ मनुसंहिता
५ महाभारत
६ गोपथ ब्राह्मण
७ शतपथ ब्राह्मण
८ वायुपुराण
९. दुर्गा सप्तशती
१० मीनपुराण—मुनि मगनसागर
११ पुरातन प्रबंध संग्रह—मुनि जिनविजय

पाली

१. अंगुत्तर निकाय
२ दीग्घ निकाय

सिंधी

१ सिंधी बोली

अंग्रेजी

१. आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया—कनिंघम तथा कार्लाइल
२ राजपूताना गजेटियर—मेवाड रेजीडेन्सी—अर्सकिन
३ न्यू इन्डियन एण्टीक्वेरी
४ अलवर गजेटियर—पाउलेट
५ राजपूताना गजेटियर- ,,

६ अजमेर–मेरवाड़ा सेटलमेंट रिपोर्ट (१८७५ ई०)–जे डी ला टाउचे
७ वेदिक माइथोलोजी–डॉ० मैकडोनेल
८. एनसाइक्लोपीडिया अमेरिका
९. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका
१०. एन्शेन्ट मिड इण्डियन क्षत्रिय ट्राइब्स
११ कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया
१२ हिस्ट्री ऑफ इण्डिया अैज टोल्ड वाई इट्स ओन हिस्टोरियन्स–
इडियट एण्ड डाउसन
१३. सेंसस ऑफ इण्डिया (९६)
१४ ओनाल्स एण्ड एण्टीक्विटोज ऑफ राजस्थान–टॉड
१५ शिड्यूल्ड ट्राइब्स ऑफ राजस्थान एण्ड देयर वेलफेयर
१६ बूंदी गजेटियर
१७ सेन्ट्रल इण्डिया
१८ ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ जयपुर–नरेन्द्रसिंह
१९ बाबरनामा
२०. दी लाइफ एण्ड टाइम्स ऑफ सुलतान मुहम्मद गजनी–मुहम्मद नाजिम
२१. फरिश्ता–दी राइज ऑफ दी मोहमडन पावर इन इण्डिया–ब्रिग्स
२२ रिपोर्ट ओन दी एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ दी जयपुर स्टेट
फोर सवत् १९९७
२३ दी हिंद राजस्थान
२४ जर्नल ऑफ दी राजस्थान इन्स्टीट्यूट ऑफ ओरिएण्टल रिसर्च
२५ अैन्शेण्ट इण्डिया–गोखले
२६ सैक्रेड टेक्स्ट्स ऑफ दी ईस्ट-मैक्समूलर
२७ अलबरूनीज इण्डिया-सचाऊ
२८ दि वेदिक एज-मजूमदार
२९ बुद्धिस्ट्स रेकार्ड्स इन दी वेस्टर्न वर्ल्ड-बील

३० एपिग्राफिया इण्डिका
३१ अैन्शेण्ट इण्डियन ज्योग्राफी-कनिंघम
३२ अर्ली चौहान डाइनेस्टीज-डॉ० दशरथ शर्मा
३३ इण्डियन एण्टीक्वेरी
३४ सस्कृत इ ग्लिश डिक्शनेरी-मोनियर विलियम्स
३५ सस्कृत इ ग्लिश डिक्शनेरी-आप्टे
३६ मेमोयर्स ऑफ दी जयपुर एग्जीबीशन (१८८३ ई)-थॉमस एन हेण्डले
३७ मेमोयर ऑफ मैप ऑफ हिन्दुस्तान-एडवर्ड थोर्टन

हिन्दी

१ ढोलामारू रा दूहा-सूर्यकरण पारीक आदि
२. पाणिनी कालीन भारत-डॉ वासुदेवशरण अग्रवाल
३. मीनपुराण भूमिका-मगनसागर
४ हिन्दी महाभारत-इण्डियन प्रेस
५ उदयपुर राज्य का इतिहास-भाग १-२ ओझा
६ जोधपुर राज्य का इतिहास-भाग १-२ ,,
७ राजपूताने का इतिहास-भाग १- ,,
८ मारवाड का इतिहास-भाग १-२-रेऊ
९ मारवाड का सक्षिप्त इतिहास-रामकर्ण आसोपा
१० कोटा राज्य का इतिहास-भाग १-२-डॉ मथुरालाल शर्मा
११ जयपुर व अलवर राज्यो का इतिहास-जगदीशसिह गहलोत
१२ बूदी राज्य का इतिहास — ,,
१३ पश्चिमी भारत की यात्रा (टॉड)-गोपालनारायण बहुरा
१४. टॉड राजस्थान (हिंदी)-बलदेवप्रसाद
१५ रासमाला (फारबस)-गोपालनारायण
१६ क्षत्रिय मीणा-गोत्र सग्रह

१७. राजस्थान की जातिया-बजरगलाल लोहिया
१८. महाराणा कुभा-रामवल्लभ सोमाणी
१९ वीरविनोद-श्यामलदास
२०. पृथ्वीराज रासो-मोहनसिंह
२१. दलपतविलास-रावत सारस्वत
२२. राजस्थान रा लोकगीत-,,
२३ मरदुम शुमारी राज मारवाड-सन् १८९४
२४ हिन्दी शब्दसागर-ना० प्र० सभा
२५ बागड और उसका साहित्य-मथुराप्रसाद अग्रवाल
२६ बाकीदास री ख्यात-नरोत्तमदास स्वामी
२७ राजस्थानी वीर गीत— ,,
२८ प्राचीन भारत का इतिहास-डॉ रमाशकर त्रिपाठी
२९ भगतमाळ-उदयराज ऊजळ
३० भक्तमाल
३१. प्राचीन डिगल काव्य मे महाराणा प्रताप-डॉ० देवीलाल पालीवाल
३२ मुस्लिम भारत की ग्रामीण व्यवस्था-मोरलैण्ड
३३ अलवर राज्य का इतिहास-पिनाकीलाल

पत्रपत्रिकायें

१ वरदा-डॉ०मनोहर शर्मा
२. राजस्थान भारती-अगरचद नाहटा
३ लोकसाहित्य-डॉ०रामप्रसाद दाधीच

हस्तलिखित

१ चौकीदार मीरा एक अध्ययन-अमरीकसिंह
२ जयपुर राज्य की ख्यात (कपडद्वारा तथा आमेर शास्त्र भडार)

बृहत् इतिहास-एक योजना

इतिहास का महत्व

मीणा समाज के कुछ नवशिक्षित ? व्यक्तियो ने इतिहास की उपादेयता मे शका प्रकट की है और वे इसे आज के युग मे गडे मुर्दे उखाडना मात्र मानते हैं। यह स्वीकार करते हुए भी कि किसी भी देश, समाज तथा जाति की उन्नति उसके भौतिक अभ्युत्थान से गहरा सम्बन्ध रखती है और उसके लिए उसका आर्थिक उत्थान आवश्यक है, हमे यह भी नही भूलना चाहिए कि सामाजिक-सास्कृतिक दृष्टि से सम्पन्न बनने के लिए समाज का शैक्षणिक स्तर भी ऊचा उठाना अत्यन्त आवश्यक है। इस दृष्टि से इतिहास, विशेषकर जातीय इतिहास, का महत्व सर्वोपरि है। इस विषय मे हम अपना निजी कोई मत न व्यक्त करके विविध विद्वानो द्वारा कही गई कुछ उक्तिया उद्धृत करते हैं जिन्होने इतिहास का महत्व प्रतिपादित किया है।

"ज्ञान-भण्डार के अन्यान्य विषयो मे इतिहास एक ऐसा विषय है कि उसके अभाव मे मनुष्य जाति अपनी उन्नति करने मे समर्थ नही हो सकती। सच तो यह है कि इतिहास से मानव-समाज का बहुत कुछ उपकार होता है। देशो, जातियो, राष्ट्रो तथा महा-पुरुषो के रहस्यो को प्रकट करने के लिए इतिहास एक अमोघ साधन है। किसी जाति को सजीव रखने, अपनी उन्नति करने तथा उस पर दृढ रहकर सदा अग्रसर होते रहने के लिए ससार मे इतिहास से बढकर दूसरा कोई साधन नहीं है। अतीत गौरव तथा घटनाओ के उदाहरणो

से मनुष्य जाति एव राष्ट्रो मे जिस सजीवनी शक्ति का सचार होता है उसे इतिहास के सिवा अन्य उपायो से प्राप्त करके सुरक्षित रखना कठिन ही नही प्रत्युत एक प्रकार से असभव है।

पृथ्वीतल की किसी जाति का साहित्य-भण्डार उस समय तक पूर्ण नही माना जा सकता, जब तक इतिहासरूपी अमूल्य रत्नो को उनमे गौरवपूर्ण स्थान न मिला हो, क्योकि अध पतित एवं दीर्घ निद्रा मे पडी हुई जाति के उत्थान एवं जागृति के अन्यान्य साधनो मे उसका इतिहास भी एक सर्वोत्कृष्ट एव आवश्यक साधन है।

इतिहास द्वारा पूर्वजो के गुण-गौरव से परिचित होकर अवनत जाति भी पारस्परिक क्षुद्र-भेदभाव को मिटाकर अपने मे संगठन-शक्ति का सचार करती हुई राष्ट्रीयता के एक सूत्र मे आवद्ध हो सकती है। किसी ऐतिहासिक का यह कथन बहुत ठीक है कि यदि किसी राष्ट्र को सदैव अध पतित एवं पराधीन बनाए रखना हो, तो सबसे अच्छा उपाय यह है कि उसका इतिहास नष्ट कर दिया जाय।"

—डा. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा
(राजपूताने का इतिहास भाग १–भूमिका)

इतिहास की पुस्तकें बुद्धिमान लोगो को सावधान तथा सचेत करती हैं। उनका अध्ययन सुधिहीन लोगो को भी, विशेषकर ऐसे जिन्हे यात्रा के अवसर प्राप्त हैं, गम्भीर विचार करने के लिए प्रेरित करता है। आज की पीढी इतिहास के माध्यम से ही उन पुरखो की शिक्षा का लाभ उठा पाती है जो प्राचीन काल मे थे। वर्तमान को विगत से ज्ञान

की प्राप्ति होती है और भावी पीढियो को वडको के कार्य-कलाप का परिचय मिलता है।

—तारीखे यमीनी पृ १७

वृत्त यत्नेन सरक्षेत्, वित्तमायाति याति च।
अक्षीणो वित्तत क्षीण., वृत्ततस्तु हतोहत ॥ [महाभारत]

अपने इतिहास की रक्षा यत्नपूर्वक करनी चाहिए। धन तो आता जाता रहता है। धन की दृष्टि से कमजोर होने पर भी कोई नष्ट नही होता, पर जिसका इतिहास नष्ट हो जाता है, व वास्तव मे ही नष्ट हो जाता है।

योजना

प्रस्तुत पुस्तक मीणा जाति के बृहत् इतिहास की रूपरेखा मात्र समझी जानी चाहिए। राजस्थान तथा अन्य प्रदेशो के सुदूर अचलो मे सहस्राधिक वर्षों से वसी हुई इस जाति का निकट से अध्ययन करके इनकी सामाजिक और सास्कृतिक गतिविधियो के मूल को बोधगम्य करने पर ही इसका प्रामाणिक और विस्तृत इतिवृत्त लिखा जा सकता है। इस कार्य के लिए समूची जाति का समाजशास्त्रीय, सास्कृतिक और राजनैतिक दृष्टियो से सर्वेक्षण आवश्यक है। इस प्रकार के सर्वेक्षण से जो वहुमूल्य सामग्री सकलित होगी वही उक्त इतिहास का आधार बनेगी। जन-जाति के रूप मे मीणा को जो राजकीय मान्यता मिली हैं तथा जिसके परिणामस्वरूप इन्हे जो राजकीय सरक्षण, प्रोत्साहन और सहयोग मिलना चाहिए उसके लिए भी इस प्रकार के प्रयास आवश्यक हैं। जव तक समूची जाति का ऐतिहासिक गौरव उसके पुरखाओ के यश-कार्य, उसकी क्षमता और सामर्थ्य तथा उसमे व्याप्त

अनेक कुरीतियो, अन्धविश्वासो और दुर्बलताओ आदि का दिग्दर्शन कराते हुए उन्हे जाग उठने और राष्ट्र की प्रगति मे अपना दायित्व ग्रहण करने और अधिकार मागने के लिए प्रोत्साहित नही किया जाता तब तक जन-जाति के रूप मे उनके लिए किए गए प्रावधानो का पूरा लाभ वे नही उठा पायेगे । इसलिए इस प्रकार के प्रयास को राजकीय मान्यता और प्रश्रय भी मिलना चाहिए ।

राजस्थानी मीणा समाज के उत्साही सदस्य इस योजना के महत्व को समझते हैं और उन्होंने वृहत् इतिहास के इस पुण्य कार्य को हाथ मे लेने का बीडा उठाया है । पर यह महान् आयोजन तभी सफल हो सकता है जब मीणा समाज का हर व्यक्ति इसके प्रति सजग हो और इस आयोजन मे अपना सभी प्रकार का सहयोग दे । भारतीय इतिहास, राजनीति तथा सास्कृतिक और सामाजिक विषयो के विद्वान भी इस योजना मे अपने बहुमूल्य परामर्श, सुझाव, ज्ञातव्य आदि देने के लिए ससम्मान आमत्रित हैं । इतिहास की आधारभूत सामग्री के भण्डार मे निम्न प्रकार की जानकारिया अपेक्षित हैं । जिनको इन जानकारियो का ज्ञान हो वे कृपया निम्नलिखित पते पर भेजने का कष्ट करे । ऐसी सभी सामग्री का इतिहास मे सौजन्यपूर्वक उल्लेख करते हुए कृतज्ञता-ज्ञापन किया जाएगा ।

१ प्राचीन शिलालेख, ताम्रपत्र, सिक्के, पट्टे, परवाने तथा अन्य लिपिबद्ध प्रमाण जो किसी भी प्रकार मीणो से सबधित रहे हो । मीणो से आशय मेर, मेव, मेद, मीणा आदि नामो तथा उनके समूचे भेदोपभेदो से हैं । अतः सभी से सबधित सामग्री आवश्यक है ।

२ प्राचीन हस्तलिखित पोथिया, पीढिया, वशावलिया और स्फुट वार्ते आदि जिनमे मीणो का तनिक भी उल्लेख हो ।

प्राचीन गढ, किले, मदिर, बावडी, तालाब, कूए, हथाई तथा अन्यान्य ऐसी इमारतो आदि की जानकारी जिनके विषय मे यह धारणा हो कि वे मीणो के बनवाए हुए है।

जागाओ या बही भाटो द्वारा लिपिबद्ध की हुई मीणा गोत्रो की जानकारी

राणो तथा अन्य याचको द्वारा गाए जाने वाले गीत, कवित्त, दूहा तथा कही जाने वाली बातो की जानकारी।

मीणा समाज मे प्रचलित ऐसे लोकगीत, लोक–कथायें आदि जो विशेष रूप से मीणो मे ही व्यवहृत है।

मीणो के उत्सव, मेले तथा अन्य मनोरजनात्मक प्रकार जिनमे बहुसख्यक मीणे भाग लेते है।

मीणो के विवाह, मृतक सस्कार श्राद्ध आदि से सबधित ऐसे पारिवारिक सस्कार जो जातीय विशिष्टता रखते हो।

मीणो के आवास, रहन-सहन, वेष-भूषा तथा भोजन आदि से सबधित विशिष्टतायें।

अन्धविश्वास, कुरीतिया आदि।

जहा-जहा जब-जब मीणो ने शासन–व्यवस्था के प्रति विद्रोह किया हो उसका विवरण।

मुद्रित पुस्तको मे मिलने वाले मीणा–समाज सबधी उल्लेख।

मीणो की पचायती प्रथा का विवरण तथा उनके सामाजिक और राजनीतिक महत्व के सभा–सम्मेलनो की जानकारी।

१४ समाज के ऐसे व्यक्तियो के ज्ञातव्य जो राज्य, व्यापार तथा निर्वाचित सस्थाश्रो मे उच्चपदस्थ हो, जैसे—उच्चाधिकारी, वडे व्यापारी, पच, सरपच, प्रधान, प्रमुख, विधान सभा, राज्य सभा, लोक सभा के सदस्य आदि ।

१५ वडे-बूढो के मुख से सुनी जाने वाली ऐसी वार्ते, किंवदन्तिया, कहावर्ते-मुहावरे, दूहे-कवित्त आदि जिनका मीरणो से किसी भी प्रकार का सवध रहा हो ।

१६ अन्य ऐसी सभी सामग्री जो उपयुक्त विभाजन मे न आ पाई हो और मीरणो से सवधित हो ।

राजस्थान मीरणा–इतिहास से सवधित भ्रमरण–दल ऐसे सभी स्थानो की यात्रा करेगा जिनके मीरणो मे सवधित होने की जानकारी मिलेगी । यह प्रयत्न मीरणा समाज के सगठन मे भी सहायक होगा जिससे जन–जाति के रूप मे प्राप्त हो सकने वाले लाभो से समूची जाति को लाभान्वित किया जा सकेगा और इस प्रकार राष्ट्र की प्रगति मे एक सफल कदम आगे बढाया जा सकेगा ।

रावत सारस्वत—लेखक
भूथालाल नाढला—प्रकाशक
डी, २८२, मीरा मार्ग, बनीपार्क, जयपुर
फोन ७४६६१